हिन्दी रेखाचित्र का विश्लेषणात्मक अध्ययन - महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के विशेष संदर्भ में

HINDI REKHACHITRA KA VISHLESHANATMAK ADHYAYAN- MAHADEVI VERMA AUR RAMAVRIKSHA BENIPURI KE VISHESH SANDARBH MEIN

THESIS SUBMITTED TO
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
FOR THE DEGREE OF

Doctor of Philosophy

By

ए. यु. वर्गीस
A. U. VARGHESE

Supervising Teacher
Prof. (Dr.) A. ARAVINDAKSHAN

Prof. & Head of the Dept.
Dr. P. V. VIJAYAN

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI 682 022

1994

COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE & TECHNOLOGY

Department of Hindi

Dr.A. ARAVINDAKSHAN
Professor

Kochi-22
27 April 1994

CERTIFICATE

This is to certify that this thesis is a bonafide record of work carried out by VARGHESE,A.U.undermy supervision for Ph.D. (Doctor of Philosophy) Degree and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any University.

Dr. A.ARAVINDAKSHAN

पुरोवाक्

पुरोवाक्

रेखाचित्र आधुनिक युग की गद्य विधा है । अन्य विधाओं के साथ उसके संबंध के बावजूद रेखाचित्र का अपना अलग अस्तित्व है । इस गद्य विधा को सही परिप्रेक्ष्य देने में महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी ने जो कार्य किए हैं वे स्तुत्य है । रेखाचित्र के स्वरूप और अंतरंग को सुदृढ और प्रामाणिक बनाने में इनकी रचनाओं ने सर्वाधिक महत्वपूर्ण योग दिया है ।

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों में समय का स्पंदन है । उनके रेखाचित्रों में तदयुगीन समाज का संक्षिप्त लेखा-जोखा वर्तमान है । समाजशास्त्री की भांति दोनों रेखाचित्रकारों ने व्यक्ति चित्रों में सामयिक समस्याओं का विश्लेषण किया है ।

महादेवी वर्मा प्रसिद्ध कवयित्री हैं । उनकी कविताओं पर पर्याप्त आलोचनाएं उपलब्ध हैं । उनपर काफी शोधकार्य भी हुए हैं । लेकिन उनके व्यक्तित्व की झलकियां उनकी काव्य

रचनाओं में उतनी स्पष्ट नहीं है जितनी गद्य रचनाओं में है । उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पक्ष गद्य रचनाओं में प्रकट हो जाते है । उसी प्रकार हिन्दी गद्य साहित्य-संपदा की संवृद्धि में रामवृक्ष बेनीपुरी ने महत्वपूर्ण योग दिया है । रेखाचित्र, कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, बालसाहित्य, पत्रकारिता आदि अनेक विधाओं के माध्यम से उन्होंने अपने विचारों की अभिव्यक्ति दी है । लेकिन संपूर्ण बेनीपुरी साहित्य और महादेवी के गद्य साहित्य पर पर्याप्त शोधकार्य नहीं हुआ है । इसलिए इन साहित्यकारों की रचनाओं के आधार पर रेखाचित्र विधा का अध्ययन करना मेरा विनम्र लक्ष्य है ।

इस शोध प्रबन्ध को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

प्रथम अध्याय रेखाचित्र के स्वरूप और दृष्टि शीर्षक से है । रेखाचित्र के स्वरूप विश्लेषण में सर्वप्रथम जिन कुछ लेखकों ने इस विधा की परिभाषा दी है, उनका विश्लेषण हुआ है । इसके उपरांत व्यक्तिकेंद्रीकरण, चित्रात्मकता गतिशीलता, यथार्थता आदि रेखाचित्र की जो मुख्य प्रवृत्तियों है, उन पर प्रकाश डाला गया है । तत्पश्चात् अन्य अकाल्पनिक गद्य विधाओं के साथ रेखाचित्र की भिन्नता-अभिन्नता की चर्चा की गई है । ये सारी बातें रेखाचित्र के स्वरूप को स्पष्ट करने केलिए अनिवार्य है । इस अध्याय का अंतिम प्रकरण रेखाचित्र विधा का संक्षिप्त इतिहास है । जिसके अंतर्गत प्रमुख रेखाचित्रकारों और उनकी रचनाओं का परिचयात्मक विवरण दिया गया है ।

विश्लेषित

द्वितीय अध्याय में महादेवी वर्मा का रचनाव्यक्तित्व है । महादेवी बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थी । कवयित्री, गद्यकार, आलोचक, अनुवादक, संपादक, पत्रकार, चित्रकार, आदि उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पक्ष हैं । अध्यापिका, स्वतंत्रता संग्राम की कार्यकर्मी, समाज सेविका आदि उनके बहिर्मुखी व्यक्तित्व के विभिन्न पहलू हैं । महादेवी के जीवन के विभिन्न पक्षों के आधार पर उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का उद्घाटन करने का प्रयास इस अध्याय में हुआ है ।

तृतीय अध्याय रामवृक्ष बेनीपुरी के रचना व्यक्तित्व से संबंधित है । साहित्य, राजनीति, और समाजसेवा में बेनीपुरी समान रूप से तल्लीन रहे हैं । रेखाचित्र, संस्मरण, बाल साहित्य, नाटक, कहानी, जीवनी आदि विधाओं के माध्यम से उन्होंने हिन्दी साहित्य को संपन्न किया है । बेनीपुरी के जीवन और साहित्य का अटूट संबंध है । उनका साहित्य उनके अनुभवों की शाब्दिक अभिव्यक्ति है । संघर्ष चेतना और मस्तमौलापन उनके व्यक्तित्व के अहंपक्ष हैं । इस प्रकार बेनीपुरी के जीवन और रचनाओं के आधार पर उनके व्यक्तित्व को अंतरंगता में पहचानने का प्रयास इस अध्याय में हुआ है ।

चतुर्थ अध्याय में महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के सामाजिक समस्या पर केंद्रित रेखाचित्रों का विश्लेषण किया गया है । रेखाचित्र - रचना के दौरान इन दोनों लेखकों ने सामयिक सामाजिक समस्याओं को भी अंकित किया है । महादेवी के रेखाचित्रों में नारी समस्या काफी प्रमुख है । लेकिन बेनीपुरी ने अन्य

कुछ सामाजिक समस्याओं की ओर अधिक ध्यान दिया है जिनमें गरीबी, अभावग्रस्तता आदि प्रमुख है । व्यक्ति चित्रण को सामाजिक समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में आंककर लिखे गए रेखाचित्र इसमें विचारणीय हुए हैं ।

पंचम अध्याय में महादेवी और बेनीपुरी के उन रेखाचित्रों को विश्लेषण का विषय बनाया है जो विशिष्ट व्यक्तियों पर केंद्रित है । इन रेखाचित्रकारों ने चित्रित व्यक्तियों के व्यक्तित्व के उन अनूठे पक्षों का चित्रण किया है जो दूसरे व्यक्तियों में अनुपलब्ध हैं । अपने रेखाचित्रों के माध्यम से इन साहित्यकारों ने उन व्यक्तियों के व्यक्तित्व की शिखर स्थिति ढूँढ निकालने केलिए कार्य किया है । पथ के साथी और मील के पत्थर शीर्षक संकलन की रचनाएं खास तौर पर इस अध्याय में विचारणीय हुई हैं ।

षष्टम अध्याय में महादेवी वर्मा के मनुष्येतर प्राणियों तथा रामवृक्ष बेनीपुरी के प्रतीकात्मक संदर्भों पर केंद्रित रेखाचित्रों का विश्लेषण किया गया है, जो`मेरा परिवार'और`गेहूँ और गुलाब' में संकलित है । महादेवी ने अपने पालतू पशु पक्षियों को केंद्र बनाकर कुछ रेखाचित्र प्रस्तुत किए हैं । बृहत्तर पर्यावरण के साथ महादेवी का जो संबंध है उसका परिचय इन रेखाचित्रों से मिलता है । उन पशु पक्षियों में जो मनुष्य-सहज प्रवृत्तियां महादेवी देखती हैं उनका विश्लेषण इस अध्याय में हुआ है । बेनीपुरी ने जिन कुछ प्रतीकों के माध्यम से सामाजिक समस्याओं को उभारने तथा एक सांस्कृतिक आंदोलन रचाने का प्रयास किया है उनका विश्लेषण भी इस अध्याय के अंतर्गत किया गया है ।

सप्तम अध्याय में महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों की शैल्पिक विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है ।

उपसंहार में महादेवी और बेनीपुरी को रेखाचित्रकार के रूप में प्रस्तुत करने के बाद शोध दृष्टि की समग्रता को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है ।

यह शोधकार्य प्रोफेसर अरविंदाक्षन जी के मार्ग निर्देशन में संपन्न हुआ है ।

आदरणीय गुरुवर डॉ॰ए॰ अरविंदाक्षन जी के प्रति मैं कृतज्ञता सहित आभारी हूँ जिनकी निरंतर प्रेरणा से यह कार्य सुचारू रूप से संपन्न हुआ है जो मेरे प्रयास की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

आचार्य डॉ॰ विजयन जी के प्रति भी मैं कृतज्ञ हूँ जिनकी प्रेरणा और स्नेह मुझे मिलता रहा है ।

डॉ॰ भक्ती प्रसाद निदारिया का मैं आभार हूँ जिन्होंने शोधकार्य की मूल सामग्री जुटाने में मेरी मदद की है ।

पुस्तकालयाध्यक्षा श्रीमती कुञ्ञिक्कावुट्टी तंपुरान और उनके सहायक श्री॰एण्टणी का भी आभार हूँ जिन्होंने मेरी सहायता की है ।

मेरे इस विनम्र प्रयास में जो कमियाँ हो सकती हैं उनके लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूँ ।

ए॰यु॰ वर्गीस

कोचिन,
27 अप्रैल 1994

विषय सूची

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - एक ..... 1 - 76

रेखाचित्र स्वरूप और दृष्टि

रेखाचित्र : परिभाषा - रेखाचित्र का प्रवृत्तिगत विश्लेषण - चित्रात्मकता गतिशीलता - तटस्थता - व्यक्ति केंद्री करण - यथार्थ का सन्निवेश - रेखाचित्र तथा अन्य अकाल्पनिक गद्य रूप - रेखाचित्र और संस्मरण - रेखाचित्र और ललित निबंध रेखाचित्र और जीवनी - रेखाचित्र और आत्मकथा - रेखाचित्र और रिपोर्ताज - रेखाचित्र और फीचर लेखन - रेखाचित्र का उद्भव और विकास - प्रमुख रेखा चित्रकारों का योगदान - रेखाचित्र के विकास में पत्रिकाओं की भूमिका - हंस - मधुकर - विशाल भारत - नई धारा ।

अध्याय - दो ..... 77 - 128

महादेवी वर्मा का रचनाव्यक्तित्व

रंगमय जीवन - महादेवी की शिक्षा - महादेवी का विवाह - करुणार्द्र स्वभाव

पृष्ठ-संख्या

बौद्ध सिद्धांतों के प्रति लगाव -
निडर संकल्पिता - सुख दुख में समरसता
रहस्यवादी कवयित्री की सूनी हँसी -
महादेवी की समाज सेवा - चरित्र
निर्माण में माता-पिता का योगदान
काव्यांकुरण का पहला क्षण - काव्यकला
का विकास - गद्य रचना में रुचि -
वक्ता महादेवी - अनुवादक महादेवी
सम्मान और पुरस्कार रुग्णावस्था -
अंतिम संदेश - अंतिम घड़ी और
स्वर्गवास - कवयित्री महादेवी -
हृत्तंत्री का अपूर्व झंकार "नीहार"
आध्यात्मिक अनुभूतियों का दर्शन "रश्मि"
समात्मभाव की रहस्यात्मक अनुभूति की
अभिव्यक्ति "नीरजा" - प्रत्येक में
अप्रत्यक्ष की अनुभूति "सांध्यगीत"- भाव
और कला की पूर्णता "दीपशिखा" -
संकलित काव्य ग्रंथ - अकारण अकाल पर
विद्रोह "बंगदर्शन" - भारतीय संस्कृति
की अपराजेय भूमिका "सप्तपर्णा" भारतीय
संस्कृति तथा परंपरा की गाथा "हिमालय"
महादेवी वर्मा की गद्य रचनाएँ - शृंखला
की कड़ियाँ - क्षणदा - संकल्पिता -
साहित्यकार की आस्था तथा अन्य
निबन्ध - संभाषण ।

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - तीन ..... 129 - 177

रामवृक्ष बेनीपुरी का रचनाव्यक्तित्व

बेनीपुर गाँव में बेनीपुरी - प्रारंभिक शिक्षा - संघर्षशील जीवन - निष्ठावान व्यक्ति - गरीबी का एहसास - मानवीयता - उभरते साहित्यकारों का प्रोत्साहन - मस्तमौला बेनीपुरी राजनीति - कारावास - कैदी की सृजन क्षमता - संघर्षशील राजनीतिक जीवन - बेनीपुरी का कृतिपक्ष - संपादक बाल साहित्य की पत्रिकाएँ - प्रौढ साहित्य की पत्रिकाएँ - स्वतंत्रता संग्राम को प्रश्रय देनेवाली पत्रिकाएँ - लेखन कार्य जीवन के अंतिम दिन ।

अध्याय - चार .... 178 - 217

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के सामाजिक समस्या केंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

रेखाचित्रों में व्यक्ति केंद्रीकरण और सामाजिक समस्याओं की व्यापकता महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के

पृष्ठ-संख्या

रेखाचित्रों में चित्रित समस्याएं -
नारी समस्या - बाल विवाह -
विधवा की समस्या - नारी के
अधिकार एवं प्रतिष्ठा संबंधी समस्या -
नारी के प्रति पुरुष के अत्याचार की
समस्या - नारी समस्या में नारी की
पृष्ठभूमि - बेमेल विवाह की समस्या -
वेश्यावृत्ति की समस्या - आर्थिक
समस्या - भूख और अभाव की समस्या
महाजनी सभ्यता के शिकार -
सामाजिक समस्याओं के सशक्त चितेरे ।

अध्याय - पाँच ..... 218 - 251

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के
व्यक्तिकेंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

कृतिकार पक्ष की मौलिकता की खोज
मानवीयता के अंश - महानता के बीच
की अतिसाधारणता - विपरीत
स्थितियों का सामना ।

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - छह ..... 252 - 299

मनुष्येतर प्राणियों तथा प्रतीकात्मक संदर्भों पर केंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

मेरा परिवार - सौम्य दृष्टि - आक्रामक दृष्टि - चंचल दृष्टि - गेहूँ और गुलाब - सामाजिक समस्याओं का प्रतिकात्मक विन्यास - गेहूँ और गुलाब - गुलाब अपराजेयता का प्रतीक - चक्का : यंत्रवत् मनुष्य का प्रतीक - नींव की ईंट : ठोस सत्य और आत्मबलि का प्रतीक - गेंदा : आत्मबलि का प्रतीक - जहाज : दुनिया की गतिशीलता का प्रतीक - तितलियाँ : दक्षिणकता का प्रतीक - पहली वर्षा : परिवर्तन का प्रतीक - हरसिंगार : आत्मसमर्पण का प्रतीक - फूल सुंघनी : शोषक का प्रतीक - घरवाहा : अभाव ग्रस्त लोगों का प्रतिनिधि - पुरुष और परमेश्वर : शक्ति और आकांक्षा का प्रतीक - पनिहारिन : शोषितों का प्रतीक - मीरा त्रस्त स्त्रीकलाकारों का प्रतीक - ग्रामीण चेतना का प्रक्षेपण ।

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - सात .... 300 - 324

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों की शैल्पिक प्रवृत्तियाँ

शब्द रेखाओं का चित्र और चित्रशिल्प - दृश्यात्मकता का शिल्प विधान - आत्मकथांश की विवृति का शिल्प विधान - वैचारिक पक्षों का प्रक्षेपण रेखाचित्र की भाषा दृष्टि - विवरण प्रधान एवं अंकन प्रधान भाषा का समन्वय भाषा की व्यंग्य दृष्टि ।

उपसंहार ..... 325 - 331

संदर्भ ग्रंथ सूची ..... 332 - 342

ऽऽऽऽऽऽऽऽ

अध्याय - एक

रेखाचित्र : स्वरूप और दृष्टि

अध्याय - एक

रेखाचित्र : स्वरूप और दृष्टि

रेखाचित्र आधुनिक युग की अकाल्पनिक गद्य विधा है । गद्य लेखन की संभावनाओं से संपन्न होने के कारण रेखाचित्र का आस्वादन कई स्तरों पर संभव है । अकसर यह विधा किसी व्यक्ति पर रचित होता है । पर व्यक्त्येतर रेखाचित्र भी उपलब्ध हैं । जीवन के यथार्थ परिच्छेदों का अवलंब ही रेखाचित्र केलिए स्वीकारा गया है । इसलिए रेखाचित्रकार अपनी कल्पनाओं में गोता लगाने केलिए स्वतंत्र नहीं है । परंतु रेखाचित्र की विशेषता यह है कि उसमें यथार्थ की तमाम अंतरंगताओं को रेखांकित किया जाता है । जो कल्पना-प्रसूत परिदृश्यों से भी आकर्षक होती है । इस कारण से संभवत: गद्य विधाओं से तरह-तरह के अंशों को ग्रहण करने के बावजूद रेखाचित्र ने सीमित समय में अपनी माध्यमगत अस्मिता का परिचय दिया है ।

रेखाचित्र शब्द "रेखा" और "चित्र" के मेल से बना है । इसका अर्थ है - रेखाओं से बना हुआ चित्र । "रेखाचित्र" के अलावा हिन्दी में "शब्दचित्र" का भी प्रयोग मिलता है । "माटी की मूरतें" "गेहूँ और गुलाब" आदि की भूमिका में रामवृक्ष बेनीपुरी ने "शब्दचित्र" का ही प्रयोग किया है ।[1] महादेवी वर्मा ने "अतीत के चलचित्र" की अपनी बात में "स्मृति चित्र" का भी प्रयोग किया है ।[2] फिर भी रेखाचित्र ही सर्वाधिक प्रचलित है । यह शब्द अधिक स्पृहणीय भी लगता है । क्योंकि रेखाचित्र की प्रतीति ही इन शब्दचित्रों से होती है । चित्र प्रतीति की प्रवृत्ति इस गद्य विधा की मुख्य विशेषता भी है ।

रेखाचित्र : परिभाषा

रेखाचित्र की अनेक परिभाषाएं मिलती हैं । अलग-अलग रचनाकारों ने इस विधा के भिन्न-भिन्न पक्षों के आधार पर अपनी अपनी परिभाषा दी है ।

---

1. "ये चलते फिरते आदमियों के शब्दचित्र हैं ।" (ये माटी की मूरतें), - बेनीपुरी, माटी की मूरतें, संस्करण 1976, लखनऊ ।
   "ये शब्द चित्र, पिछले शब्दचित्रों से भिन्न हैं ।"
   बेनीपुरी (पुस्तक आंदोलन) गेहूँ और गुलाब,
   संस्करण 1967, पटना ।
2. "इन स्मृति चित्रों में मेरा जीवन भी आ गया है ।"
   महादेवी वर्मा (अपनी बात) अतीत के चलचित्र,
   बारहवाँ संस्करण 1972, इलाहाबाद ।

बनारसी दास चतुर्वेदी ने "रेखाचित्र" नामक अपने संकलन की भूमिका में लिखा है - "रेखाचित्र खींचना एक कला है। थोडी सी रेखाओं के द्वारा एक सजीव चित्र बना देना किसी कुशल कलाकार का ही काम हो सकता है।"[1] सफल रेखाचित्र खींचने केलिए वे "सरस्वती के मंदिर की आराधना"[2] अनिवार्य मानते हैं। "सफल चित्रण केलिए चित्रकार में विश्लेषणात्मक बुद्धि तथा भावुकतापूर्ण हृदय दोनों का सामंजस्य होना चाहिए। पर-दुख कातरता, संवेदनशीलता, विवेक और संतुलन इन सब गुणों की आवश्यकता है। अत्युक्तिमय प्रशंसा अथवा घोर निंदा देनों ही चित्रण केलिए विघातक हैं।"[3] चतुर्वेदी जी ने जीवंतता, तटस्थता, संवेदनशीलता, भावुकता आदि पर जोर दिया है। अत्युक्ति तथा अतिनिंदा को वे निंद्य मानते हैं।

हिन्दी के शीर्षस्थ रेखाचित्रकार महादेवी वर्मा ने लिखा है - "मनुष्य आकार मात्र नहीं है, वरन् एक विशाल विचार, और भाव जगत का संपुंजन है। रेखाचित्रकार किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को कुछ रेखाओं से बिना रंगों की छाया के व्यक्त कर सकता है। उतार-चढाव और वर्ण-विन्यास के बिना भी ये रेखाएं व्यक्ति की क्रूरता, करुणा आदि का ऐसा परिचय दे सकती है जिसमें उसका व्यक्तित्व स्पष्ट होने लगता है। रेखाओं की भाषा चाक्षुष होने के कारण उनकी पहचान में कोई बाधा नहीं होती।"[4] आगे वे लिखती है - "रेखाचित्र में

---

1. बनारसीदास चतुर्वेदी - भूमिका रेखाचित्र, द्वितीय संस्करण 1963, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
2. वही।
3. वही।
4. महादेवी वर्मा - मेरे प्रिय संस्मरण (भूमिका), चतुर्थ संस्व 1988, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई

लेखक कुछ गिनी चुनी रेखाओं के स्थान में शब्दों को रखकर तटस्थ भाव से किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व स्पष्ट कर सकती है; आवश्यक नहीं कि व्यक्ति अतीत का ही हो और लेखक के भाव-जगत में उसने पुनर्जन्म पाया हो।"[1] इस परिभाषा में जो पुनर्जन्म शब्द है उस पर महादेवी वर्मा का ज़ोर है। चाक्षुष स्थिति की भीतरी अवस्था और उसकी शब्दगत अभिव्यक्ति ही रेखाचित्र में होती है।

धीरेन्द्रवर्मा के संपादकत्व में प्रकाशित "हिन्दी साहित्य कोश" में रेखाचित्र की परिभाषा विस्तार से मिलती है। "रेखाचित्र किसी व्यक्ति, वस्तु, घटना, या भाव का कम-से-कम शब्दों में मर्मस्पर्शी, भावपूर्ण एवं सजीव अंकन है। रेखाचित्र की विशेषता विस्तार में नहीं, तीव्रता में होती है।"[2]

डॉ॰ भागीरथ मिश्र के अनुसार "संपर्क में आए किसी विलक्षण व्यक्तित्व अथवा संवेदना को जगानेवाली सामान्य विशेषताओं से युक्त किसी प्रतिनिधि चरित्र के मर्मस्पर्शी स्वरूप को, देखी-सुनी या संकलित घटनाओं की पृष्ठभूमि में इस प्रकार उभारकर रखना कि उसका हमारे हृदय में एक निश्चित प्रभाव अंकित हो जाय रेखाचित्र या शब्दचित्र कहलाता है।"[3]

---

1. महादेवी वर्मा - भूमिका, मेरे प्रिय संस्मरण।
2. धीरेंद्रवर्मा (संपादक) हिन्दी साहित्य कोश, द्वितीय संस्करण 1963, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी।
3. डॉ॰ भागीरथ मिश्र - काव्यशास्त्र, द्वितीय संस्करण 1963, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर, वाराणसी।

डॉ॰ रामचंद तिवारी का मत है, "रेखाचित्र में किसी व्यक्ति, वस्तु या संदर्भ का अंकन किया जाता है । यह अंकन पूर्णत: तटस्थ भाव से निर्लिप्त रहकर किया जाता है । रेखाचित्र में रेखाएं बोलती हैं । जिस प्रकार थोडी सी रेखाओं का प्रयोग करके रेखाचित्रकार किसी व्यक्ति या वस्तु की मूलभूत विशेषता को उभार देता है, उसी प्रकार थोडे से शब्दों का प्रयोग करके साहित्यकार किसी व्यक्ति या वस्तु को उसकी मूलभूत विशेषताओं के साथ सजीव कर देता है । रेखांकन करते समय वह अपने को तटस्थ रखने की चेष्टा कर देता है । वस्तु को ही महत्व देता है । विषय को ही रूपायित करता है । जब कभी उसकी तटस्थता भी होती है तो रंगों की चमक में रेखाएं डूब जाती हैं ।"[1]

डॉ॰ हरवंशलाल शर्मा रेखाचित्र विधा के नामी आलोचक हैं । वे लिखते हैं कि "रेखाचित्र किसी एक व्यक्ति, स्थान, घटना, दृश्य या उपादान का ऐसा वस्तुगत वर्णन होता है जो संक्षेप में उसकी बाह्य विशेषताओं को प्रस्तुत करता है । बाह्य विशेषताओं के भीतर ही आंतरिक विशेषताओं का समाहार हो जाता है । उसके स्वरूप से निबंध, कहानी, नाटक, संस्मरण या रिपोर्ताज से भ्रांति हो सकती है । रेखाचित्र सरल, सुगठित, लघु तथा वर्णन प्रधान होना चाहिए तभी वह प्रभावशाली बनता है । उसमें थोडे से शब्दों के द्वारा सजीव रूप विधान और सफल अभिव्यक्ति करने की आवश्यकता होती है ।"[2]

---

1. डॉ॰ रामचंद्र तिवारी - हिन्दी का गद्य साहित्य, द्वितीय संस्करण 1968, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी ।
2. डॉ॰ हरवंशलाल शर्मा, हिन्दी रेखाचित्र, प्रथम संस्करण 1969, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, उलखनऊ ।

श्री सत्यपाल चुघ का मत है - "चित्रकला के रेखाचित्र प्रकार-विशेष का मूलाधार वे रेखाएं होती हैं जो स्वतंत्र न रहकर चित्रकार के अमूर्त भावों का संकेत देती हैं । चित्रकार थोडी से रेखाओं से मानों चित्र की भूमिका-मात्र प्रस्तुत करने में ही विषय का पूर्णाभास दे देता है । यह ध्यान रहे कि रेखाचित्र में दो ही डायमेंशनस होती हैं । साहित्य में रेखाओं का उक्त कार्य शब्दों द्वारा हो सकता है । इसलिए "रेखाचित्र" को "शब्दचित्र" की संज्ञा प्राप्त है ..... अवश्य ही शब्दचित्र में शब्दशिल्पि साहित्यकार वास्तविकता (व्यक्ति या वस्तु) के पहलू विशेष का अपने कुशल शब्द विन्यास से इस रूप में चित्र प्रस्तुत करता है कि संपूर्ण अंतर्बाह्य स्थिति व्यंजित हो जाती है । यदि परिभाषा का प्रयास करें तो कहा जा सकता है कि साहित्य का वह गद्यात्मक रूप जिसमें एकात्मक विषय विशेष का शब्द-रेखाओं से संवेदनशील चित्र प्रस्तुत किया जाता है, रेखा-चित्र या शब्द चित्र है ।"[1]

आलोचक डॉ॰नगेंद्र रेखाचित्र को अंग्रेज़ी के "स्केच" का समानार्थी मानते हैं । "जिस प्रकार चित्र में आडी-तिरछी पर अजीब रेखाओं का प्रयोग करता है, इसी प्रकार रेखा विलक्षण व्यक्तित्व वाले अथवा संवेदना जगानेवाली विशेषताओं से युक्त, किसी का ऐसा अजीब चित्र उपस्थित करता है कि वह व्यक्ति, स्थान, वातावरण या प्रसंग साकार हो उठता है ।

---

1. श्री॰ सत्यपाल चुघ, - रेखाचित्र कला, सम्मेलन पत्रिका कला अंक, शकाब्द 1880, पृ॰210

वह अपने मन में संकलित स्मृति-रेखाओं को कला की तूलिका से रंगों में रंगकर अजीब बना देता है । शब्द चित्र छोटे और जीवंत होते हैं, अत: उनकी तुलना स्नैप-शाट से की गई है ।"[1]

इन परिभाषाओं को करीब से देखने पर निम्न लिखित बातें उल्लेखनीय लगती हैं -

1. रेखाचित्र का विषय या केंद्र कोई व्यक्ति, वस्तु संदर्भ, पशु-पक्षी, घटना या भाव हो सकता है ।

2. रेखाचित्र में चित्रात्मकता के माध्यम से व्यक्ति के बाह्य तथा आंतरिक व्यक्तित्व को उभारा जाता है ।

3. तटस्थता के अभाव में रेखाचित्र की असली छवि को क्षति पहुँचती है ।

4. रेखाचित्र में शब्द-व्यय की कोई गुंजाइश नहीं है ।

5. रेखाचित्र में अंकन प्रधानता का महत्व है ।

6. जीवंत भाषा रेखाचित्र केलिए अनिवार्य है ।

सामान्यत: रेखाचित्र में उपरोक्त लक्षण निर्धारित किए जा सकते हैं । पर अकसर रेखाचित्रकार इन्हीं का उल्लंघन करते हुए दीख पड़ते हैं ।

---

1. डॉ. नगेन्द्र - भारतीय साहित्य कोश, प्रथम संस्करण 1981 नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली-2, पृ. 112।

रेखाचित्र का प्रवृत्तिगत विश्लेषण

संकेतित किया जा चुका है कि रेखाचित्र गद्य की नई विधा है । यह भी सूचित है कि अन्य विधाओं के साथ उसके संबंध के बावजूद वह अपना अलग अस्तित्व रखता है । रेखाचित्र को अलग अस्तित्व देने में उसकी निम्न लिखित प्रवृत्तियाँ सबसे प्रमुख हैं ।

1. चित्रात्मकता
2. गतिशीलता
3. तटस्थता
4. व्यक्ति केंद्रित
5. यथार्थता ।

चित्रात्मकता

प्रकारांतर से सभी रचनाकारों तथा आलोचकों ने रेखाचित्र केलिए चित्रात्मकता की अनिवार्यता पर बल दिया है । इसका यह मतलब नहीं है कि सभी रेखाचित्रकार अपने चुने हुए विशिष्ट शब्दों के बल पर कोई चित्र प्रस्तुत कर रहे हों । वह अवश्य व्यक्ति या अपने वितेच्य विषय का चित्रण करता है; अर्थात् चित्रात्मक ढंग से व्यक्ति को प्रस्तुत करता है । इसलिए उसमें व्यक्ति का आकार स्पष्ट है । प्रश्न यह है कि क्या रेखाचित्रकार का दायित्व यहाँ तक सीमित है ? वस्तुत:

रेखाचित्रकार उस व्यक्ति का चित्र खींचता है जिसको वह प्रस्तुत करना चाहता है । वह उसका अंकन करता है । पर वह उसका आकार मात्र ग्रहण नहीं करता है । वह उसके समग्र व्यक्तित्व और उसके संपूर्ण जीवन की विभिन्न झाँकियाँ ही प्रस्तुत करताहै । रेखाचित्र के संदर्भ में चित्रात्मकता अवश्य ही भाषा की क्षमता का सूचक है । उसके माध्यम से रेखाचित्रकार अपनी विधा की रचनात्मक क्षमता के मूल तक पहुँच जाता है ।

बताया जा चुका है कि रेखाचित्र का विन्यास चित्रकला से संबंधित है । रेखाचित्र में रेखा (बाह्याकार) और रंग (आंतरिक स्थिति) शब्दों से विन्यस्त है । पर शब्दों की भंगिमा में, शब्दों के क्रम में उसकी वक्रता और सपाटता में चित्रात्मकत्व का आभास मिलने लगता है । चित्रात्मकता के माध्यम से रेखाचित्रकार बाह्य तथा आंतरिक व्यक्तित्व उभारने में सक्षम बन जाता है । एक बाह्य चित्र देखिए -

> "मुखाकृति-साधारण दशा में तनिक भी आकर्षण नहीं, प्रकृति परी ने क्रुद्ध होकर अथवा भारत माता के दु:खों ने सजीव होकर उनके चेहरे को चेचक चिह्नों से अहोरकर खोंटकर ऐसा लीपा है कि मुखाकृति से पालीवाल जी जीपावान हो गए हैं । पर ऐसी बात नहीं है कि उनकी आकृति में आकर्षण न हो । आकर्षण है और बडा विकट आकर्षण है । साधारण दशा में ? नहीं तनिक भी नहीं । अपनी आकृति में आकर्षण तब होता है जब उनके हृदय और मन का ज्वालामुखी प्रज्ज्वलित होकर किसी सिद्धांत अथवा पक्ष की पुष्टि में लावा

उगलता है । उस समय पालीवालजी की आकृति तमतमा उठती है । चेहरे के चेक्क के चिह्नों से, चेहरे में लगे दो बाराह नेत्रों से कहर ही नाजिल होने लगती है ।"[1]

उपर्युक्त उदाहरण व्यक्ति के बाह्य चित्र उतारने में रेखाचित्र की क्षमता का परिचायक है ।

एक दूसरा नमूना इस प्रकार है -

"गोपालबाबू बडे भड्कीले जवान थे । घुंघराली जुल्फ, कसरती देह, लंबी कलम, खडी-खडी मूँछें, बडी-बडी शोख आँखें, आँखों में रस और हवस, रंगीन तबियत, कानों में मोतिया के फाहे, मुँह में मगही पान के तक्कदार बीडे, शरबती साटन की चुस्त नीमास्तीन पर आबेखाँ का धरदार पंजाबी, गले में बतास फैनी चादर और सर पर चौगोशिया कमरखी टोपी । ..... गोपालबाबू रामनामे की चादर कंधे पर रखे, वैष्णवी फटाका सर पर दिये, गले में तुलसी की माला डाले, कुशासन पर बैठकर "हनुमान चालीसा" का पाठ कर रहे हैं ।"[2]

इन दोनों चित्रों में चित्रित व्यक्ति या अंकित व्यक्ति का जीवंत रूप हमें प्राप्त होता है ।

---

1. श्रीराम शर्मा - पालीवाल जी, हँस - रेखाचित्र विशेषांक, मार्च 1939
2. राजा राधिका रमण सिंह - सावनी समां, 1938 - पृष्ठ-96

बाह्य चित्रण के समान ही व्यक्ति के आंतरिक चित्र उतारने में रेखाचित्र सक्षम है । वस्तुत: आंतरिक चित्र ही अधिक मुख्य है । चित्रकार भावद्योतन रंगों या रंगों के चित्रण से करता है जबकि रेखाचित्रकार शब्दों का अवलंब । व्यक्ति के आंतरिक पहलू शब्दों से प्रकट होता है -

> "मैं ने उन्हें अनेक विचित्र और जटिल समस्याओं के भीतर निर्वात, निष्कंप दीप-शिखा की भांति प्रशांत तेज से जलते देखा है । एक बार भी उन्हें ऊंचे आसन से नीचे उतरते नहीं देखा । एक बार भी उन्हें अभिभूत होने नहीं देखा । उनकी बडी-बडी आंखों से स्निग्ध प्रीतिधारा झरती-सी रहती थी । मैं ने उन्हें वृद्धावस्था में देखा था । फिर भी कैसी अपूर्व शोभा उनके इस वृद्ध शरीर में थी । मुखमंडल से कांति की धारा झरती रहती थी, बडी-बडी आंखों से स्नेह की पावन धार बरसती रहती थी और श्मश्रु से आच्छादित अधरोष्ठों के मंदस्मित से तो अपूर्व शांति की स्रोतस्विनी ही बह जाया करती थी । उनके विराट् मानस में औदार्य, तेज और प्रेम की त्रिवेणी लहराया करती थी और कुशाग्र-बुद्धि जगत् की गूढ समस्याओं को अनायास भेद जाया करती थी; जितना ही सोचताहूं, उतना ही लगता है, रवीन्द्रनाथ का व्यक्तित्व अपूर्व था, अद्भुत था ।"[1]

---

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी - गुरुदेव उभरी : गहरी रेखाएँ (संपादक - डॉ॰कैलाशचन्द्र भाटिया) पृ॰35 प्रथम संस्करण 1972, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ ।

बाह्य-वर्णन के समकक्ष का व्यक्तित्व चित्रण श्री रामधारी सिंह "दिनकर" ने यहाँ किया है -

"एक धर्म-प्रचारक, जिसमें उत्तरीय के सिवा धार्मिक परंपरा का कोई आडंबर नहीं, ऐसा विद्वान, जिसने सारी विद्याओं में डूबकर केवल नास्तिकता को ग्रहण किया हो, एक साधु, जिसे राह चलते, अनावश्यक अवसरों पर भी, ईश्वर पर व्यंग्य, शास्त्रों की भर्त्सना और अंडों के प्रचार में आनंद आता हो, साहित्य में रहते हुए जिसे राजनीति का मोह हो, और राजनीति की ओर अग्रसर होते हुए जिसे कुछ घृणा, कुछ झिझक-सी लगे, युग-विधायक अनुसंधान करते हुए भी जिसे अपना श्रम व्यर्थ मालूम होता हो, इतिहास को मुर्दों का क्षेत्र कहकर जो जिंदों के बीच जीने की लालसा से रूस दौडे, और जिंदों के जीवन से मर्म पर व्याघात लेकर फिर मुर्दों के देश में लौट आए; प्रकांड विद्वान; बहुत बडा स्वतंत्र विचारक, सांस्कृतिक क्रांति का उग्र नेता, क्रांतदर्शी और विक्रांत परिश्रमी, लेकिन अपनी पूरी शक्ति के उपयोग के योग्य निश्चित क्षेत्र के अभाव में अमूल्य विचारों का बहुत बडा बोझ-ढोता-सा, संसार जिसे असाधारण एवं अज्ञेय रहस्य मानकर विस्मय करे, उसे साधारण-अतिसाधारण मानकर उसकी खिल्ली उडाता सा, श्रद्धावान् हाथ जोडकर जब गगना-मुख हो तब ऐसा दिखलाता-सा, मानो, मैं आकाश में घूम चुका हूँ, वहाँ कुछ नहीं है, देवताओं के सामने मनुष्य और स्वर्ग के

सामने पृथ्वी को पूजनेवाला, जो अपने तर्क के तीखे बाणों से परंपरा, रूढि और प्राचीन संस्कारों पर कुटिल व्यंग्य कसने का आदी हो, धुन का पक्का, लगन का कडा, साँप के फेन पर जान बूझकर पैर रखनेवाला, ऐसी विचित्रताओं का आगार है वह मनुष्य जिसे हम राहुल सांकृत्यायन के नाम से अभिहित करते हैं ।"[1]

इन दोनों चित्रों में व्यक्ति का आंतरिक रूप उभर आया है व्यक्ति के व्यक्तित्व की सही पहचान इसी के माध्यम से होती है ।

गतिशीलता

सामान्यत: चित्र द्विआयामी होता है । लेकिन कुछ चित्रों में एक प्रकार की बहुआयामी आभास देखा जा सकता है । रेखाचित्र बहु आयामी होता है । इस प्रवृत्ति के कारण रेखाचित्र गतिशील प्रतीत होता है । रेखाचित्रों में बाह्य चित्रण के साथ साथ आंतरिक भावों को भी उभारा जाता है । ऐसे चित्रों में "लंबाई" और "चौडाई" के साथ "गहराई"की प्रतीति होती है । यही बहुआयामी प्रवृत्ति है । इसके द्वारा चित्र अधिक जीवंत हो जाता है । इसके फलस्वरूप पाठक के मन में गहरा प्रभाव पडता है । श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के तुर्गनेव को देखिए -

---

1. रामधारी सिंह "दिनकर" - "महापंडित", उभरी : गहरी रेखाएं, प्रथम संस्करण 1972, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ ।

"तुर्गनेव शरीर के लंबे चौडे और कद के उंचे थे। सिर कोमल भूरे बालों से लदा रहता था जो देखने में बडे सुंदर लगते थे। आंखों से बुद्धिमत्ता टपकती थी और उनमें कुछ हास्य की भी झलक प्रतीत होती थी। उनके रंग ढंग में बनावट का नामोनिशान नहीं था। उनके विशाल मस्तिष्क से प्रतीत होता था कि उनकी दिमागी ताकत काफी विकसित हो चुकी है।"[1]

श्री बनारसी दास चतुर्वेदी ने तुर्गनेव की आंखों में बुद्धिमत्ता और हास्य की झलक देखी है। मस्तिष्क की विशालता, उनके अनुसार विकसित दिमाग का सूचक है। इस चित्र के माध्यम से लेखक ने बाह्य तथा आंतरिक अंशों में सामंजस्य देखा है।

महादेवी वर्मा की "स्मृति की रेखाएं" के प्रथम रेखाचित्र का प्रारंभ इस प्रकार है -

"छोटे कद और दुबले शरीरवाली भक्तिन अपने पतले ओठों में एक विचित्र समझदारी लेकर जिस दिन पहले पहले मेरे पास आ उपस्थित हुई थी तब से आज तक एक युग का समय बीत चुका है।"[2]

---

1. बनारसीदास चतुर्वेदी - हमारे आराध्य, 1952, ज्ञानपीठ काशी।
2. महादेवी वर्मा - स्मृति की रेखाएं, चौदहवां संस्करण 1978 भारती भंडार, इलाहाबाद, पृ.3

इस चित्र में महादेवी ने भक्तिन की बाह्य विशेषताओं को एक विशेष गहराई से देखा है । भक्तिन के "पतले ओठों के कोनों में "दृढ संकल्प" रूपी आंतरिक प्रवृत्ति का अभिव्यंजित है । इसी प्रकार उसकी "छोटी आंखों" में महादेवी ने "एक विचित्र समझदारी देखी है । इस प्रकार महादेवी ने भक्तिन के बाह्य रूप को आन्तरिक रूप से मिलाया है ।

बाह्य तथा आंतरिक पहलुओं के सामंजस्य की प्रवृत्ति ही बहु आयामी प्रवृत्ति है । अर्थात् रेखाचित्रकार आंखों से बाह्य रूप का अंकन करता है जिसके माध्यम से पाठक को उस व्यक्ति के किसी गुण विशेष का उल्लेख करते हैं । यह मात्र उल्लेख नहीं बल्कि एक विशेष भंगिमा के रूप में है । इस कारण से सामान्य चित्र की अपेक्षा अधिक गहराई आ जाती है । यह प्रवृत्ति रचना की प्रभावोत्पादकता को बढा देती है । रेखाचित्रकार यह नहीं चाहता कि उसका चित्र जडवत प्रतीत हो । व्यक्ति के अंकन के पश्चात वह उसके जीवन के प्रांगण में कदम रखता है । उसे वह निकट से देखता है । उसके देखते समय, भले ही वह स्वर्ग वासी व्यक्ति हो, या जीवित, वह जीवंत हो उठता है, परिदृश्य एकदम सजीव हो उठता है, घटनाएँ दृश्यात्मक हो जाती है । इन कारणों से ही रेखाचित्र में गतिशीलता की प्रवृत्ति दिखाई पडती है । रेखाचित्र में यह प्रवृत्ति आरोपित नहीं है । एक सक्षम रेखाचित्र की यह एक सहज प्रवृत्ति है ।

तटस्थता

रचना में लेखकीय हस्तक्षेप वास्तव में अवांछित स्थिति है । रचनाकार को तटस्थ होना ही है । रेखाचित्र में इसकी अधिक आवश्यकता है क्योंकि वह व्यक्ति-चित्रकार है । व्यक्ति, उसका जीवन, उसकी समस्याएँ आदि को चित्रित करते समय वह अपनी उत्सुकताओं के कारण अनियंत्रित हो सकता है । पर एक सशक्त रेखाचित्र केलिए लेखक की तटस्थ दृष्टि ही स्पृहणीय है । तटस्थता सिर्फ लेखकीय दृष्टि में ही व्यंजित न होकर शब्द प्रयोग में भी व्यंजित होती है । रेखाचित्र का पूरा कलेवर भी तटस्थ होता है । इसका कारण यह है कि भावावेग की स्थिति उसकी दृश्यात्मकता को नष्ट कर देती है । उसमें वैयक्तिकता की अधिकता झलकने लगती है जो इसकी चित्रात्मक प्रवृत्ति के विरुद्ध है ।

डॉ॰ रामविलास शर्मा ने निराला का यह चित्र खींचा है -

> "अच्छी पोशाक पहनने और शरीफों की तरह कहीं जाने के बारे में उनके अपने विचार थे । वैसे अमीनाबाद में मैली तहमद बाँधे और काँधे पर कुर्ता डाले घूमते रहे, लेकिन कवि-सम्मेलन में जाना हो तो कुर्ता-धोती सब स्वच्छ होना चाहिए । ऐसे अवसरों पर शेव करके चन्दन के साबुन से मुँह धोना और बालों में सेंट डालना भी वह न भूलते थे । एक बार यह सब कुछ सुलभ न होने पर एक स्थानीय कवि सम्मेलन में किसी मित्र की पत्नी का रेशमी दुपट्टा ही ओढ़कर वह लोगों पर रौब डाल आये थे ।"[1]

---

1. रामविलास शर्मा - महामानव - उभरी : गहरी रेखाएँ,पृ॰6।

"निराला" ने "चतुरी चमार" का चित्र इस प्रकार अंकित किया है -

"दूसरों केलिए वह श्रद्धेय अवश्य है क्योंकि वह अपने उपानह-साहित्य में आजकल के अधिकांश साहित्यिकों की तरह अपरिवर्तनवादी हैं। वैसे ही देहात में दूर-दूर तक उसके मजबूत जूतों की तारीफ है। पासी हफ्ते में तीन दिन हिरन, चौगडे और बनैले सुअर खदेड़कर फांसते हैं, किसान अरहर की ठूँठियों पर दोर भगाते हुए दौड़ते हैं - कंटीली झाड़ियों को दबाकर चले जाते हैं, छोकडे बेल, बबूल, करील और बेर के कांटों के भरे रुंधवाये बागों से सरपट भागते हैं लोग जेंगरे पर मडनी करते हैं, द्वारिका नाई न्योता बांटता हुआ दो साल में दो हज़ार कोस से ज्यादा चलता है, चतुरी के जूते अपरिवर्तन के चुस्त रूपक जैसे टस स मस नहीं होते, यह ज़रूर है कि चतुरी के जूते जिला बांदा के जूतों से घन में हल्के बैठते हैं, संभव है, चित्रकूट के इर्द-गिर्द होने के कारण वहाँ के चर्मकार भाइयों पर रामजी की तपस्या का प्रभाव पडा हो, इसलिए उनका साहित्य ज्यादा ठोस हुआ, चतुरी और लखनऊ के नज़दीक होने के कारण नवाबों के साये में आए हों।"[1]

---

1. निराला (चतुरी चमार) - निराला रचनावली - 4, संपादक - नंद किशोर नवल, प्रथम संस्करण 1983, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

इन दोनों उद्धरणों में लेखकों की तटस्थता स्पष्टत: व्यंजित होती है । चित्रित व्यक्तियों के साथ लेखकों का निकट संबंध होने के बावजूद, उनके व्यक्तित्व के अच्छे-बुरे सभी पहलुओं का चित्रण उन्होंने किया है। इस प्रकार वे चित्रित व्यक्तियों के स्पष्ट और सहज चित्र पाठकों के सामने रखते हैं ।

व्यक्ति केंद्रीकरण

रेखाचित्र सामान्यत: व्यक्तिकेंद्रित होते हैं । व्यक्ति केंद्रित होना रेखाचित्र एक सहज प्रवृत्ति है । क्योंकि वह एक व्यक्ति का चित्र होता है, शब्दों के माध्यम से खींचा गया एक चित्र । इसलिए रेखाचित्रकार अपनी बात उस व्यक्ति के बहाने ही कर सकता है । तब उसे व्यक्ति केंद्रित होना पड़ता है । आकार प्रस्तुति केलिए लेखक को पुन: छूट मिल जाती है । विवेच्य व्यक्ति के किसी एक पक्ष पर उसकी जीवन-रेखा के किसी संदर्भ. को विस्तार से प्रस्तुत करते समय व्यक्तिकेंद्रित प्रवृत्ति से मुक्त होकर या उससे अलग होकर रेखाचित्रकार जीवन पक्ष की अन्य बातों पर भी विचार कर सकता है । लेकिन शब्द व्यय की कोई गुंजाइश ऐसे संदर्भों में भी नहीं है । जीवन-विस्तार के अंकन केलिए पुन: रेखाचित्रकार को व्यक्ति-अंकन में लौटना पड़ता है । वस्तुत: रेखाचित्रों का व्यक्ति प्राय: एक व्यक्ति का भी सूचक है, तथा जीवन परिप्रेक्ष्य का भी सूचक है ।

श्री गिरिजाकुमार माथुर के शब्दों में माखनलाल जी का चित्र इस प्रकार विन्यस्त है -

"विंध्याचल के लाल पठार का प्रशस्त धीरज, पथरीली धरती का स्थैर्य, दुर्दम चट्टानों का प्रतिध्वनित विद्रोही स्वर, सनसनाते जंगलों का उद्दाम संगीत, बीहड मैदानों का बलिदानी अस्वीकार, मालवा और काली मिट्टी का सलौनापन, चंचल, बलखाता नीर भरी नदियों का मिठास, निमाड के खेतों की ताजगी, अवन्ती, दशपुर, विदिशा, महिष्मती, धार और मांडव की ऐतिहासिकता, पाताल पानी की गहराई और संगमरमर के पहाडों से धाराधार झरती नर्मदा की निर्मलता - यदि यह सब एक साथ मिलकर देह धारण कर लें तो एक अनूठे व्यक्तित्व की रूप रेखा बन जाएगी ।"[1]

विद्यावती कोकिल की "बडी बहन" का एक नमूना यहाँ उद्धृत है -

"बहन महादेवी को मैं नारी पहले मानती हूं और कवि पीछे । जो लोगें उन्हें पद्यकार, गद्यकार और चित्रकार के ही एकांगी दृष्टिकोण से देखते हैं उन्हें ही वे रहस्यमयी लग सकती है पर ये तो उनके जीवन के कुछ पक्षों को ही व्यक्त करते हैं । अवसर एक विशाल और महान व्यक्तित्व का एक नन्हा अंश ही सौभाग्य जन के बीच

---

1. गिरिजाकुमार माथुर - सूरज से बेदाग, उभरी : गहरी रेखाएं, प्रथम संस्करण 1972, भारत प्रकाशन मंदिर अलीगढ, पृ.2।

प्रसिद्धि का कारण बनता है पर वह उसका पूर्ण व्यक्तित्व नहीं होता । कभी-कभी तो आलोचक क्या इस पूर्ण व्यक्तित्व स्वयं लेखक भी अच्छी तरह नहीं पहचानता । मैं मानती हूँ कि उनके धीर-गंभीर नारीत्व ने ही राजा की भांति पीछे रहकर सदा उनके पूर्ण जीवन का नियंत्रण किया है । उनकी कला की नाना विधाएँ उसी के शासन के नाना विभाग है । इसी से उसे बिना समझे उनकी प्रतिभा का ठीक आकलन संभव नहीं ।"[1]

इन व्यक्तिचित्रों में व्यक्तिवैशिष्ट्य को विस्तार से प्रस्तुत करने का कार्य हुआ है। व्यक्ति प्रसंग और अन्य कई प्रासंगिक बातें चित्रण के साथ चर्चित होती हैं गिरिजाकुमार माथुर के चित्र में व्यक्ति को भूप्रदेश से जोड़कर संस्कृति जन्य पर्यवेश में प्रस्तुत किया गया है । दूसरे में विश्लेषण प्रियता दृष्टिगोचर होती है ।

यथार्थ का सन्निवेश

"अकाल्पनिक" शब्द ही यथार्थ का सूचक है । रेखाचित्र एक अकाल्पनिक गद्य विधा है। वह यथार्थ पर आधारित है । काल्पनिक पात्र को लेकर रेखाचित्र प्रस्तुत नहीं किया जाता । काल्पनिक पात्रों पर केंद्रित चित्रों में जीवंतता तथा तटस्थता के काफी अंश नष्ट हो जाते हैं उसमें अनेक कमियाँ आ जाने की

---

1. विद्यावती कोकिल - बड़ी बहन, उभरी : गहरी रेखाएँ, पृ.75

संभावना है । उसमें रंगों और रेखाओं का स्वाभाविक उतार-चढाव नहीं आएगा । फलत: चित्र अस्पष्ट हो सकता है । इसके अलावा अयथार्थ व्यक्ति, घटना या भाव पर केंद्रित रचना कभी रेखाचित्र नहीं कहलाता है ।

कहानी, उपन्यास आदि काल्पनिक रचनाओं में व्यक्ति का उतना महत्त्व नहीं होता जितना रचनाकारों के विचारों का । अर्थात् उन रचनाओं में व्यक्ति रचनाकार के विचार-संप्रेषण का साधन मात्र हैं । इसलिए वे "पात्र" कहलाते हैं । रेखाचित्र में रचनाकार के विचारों की अपेक्षा व्यक्ति का अधिक महत्त्व होता है । उस व्यक्ति के जीवन की यथार्थ घटनाओं के चित्रण के माध्यम से रेखाचित्रकार समाज की समस्याएँ उभारने का कार्य करता है । इसलिए रेखाचित्र में समस्याएं ही नहीं, कोई भी बात कल्पित नहीं हैं । यथार्थ के आधार पर चित्रित होने के कारण रेखाचित्र की रेखाएं स्पष्ट और गहरी होती हैं । सत्यवती मल्लिक का यह चित्र देखिए -

> "डाँटती तो वह कभी भी नहीं थीं, न ऊँची आवाज में बोलती थीं, लेकिन उनका प्रभाव ऐसा था कि जो कहती थीं, वही होता था । हमारे यहाँ पंडित मदन मोहन मालवीय के भतीजे संस्कृत पढाने आते थे । वह माँ का बहुत आदर करते थे और उनसे डरते थे । मुझे बडा आश्चर्य होता था कि इतनी मधुर, दुबली पतली औरत से डर कैसा ? पंडितजी कहते, "अरे, तुम्हें नहीं मालूम । यह बडी शक्ति की देवी है । जो चाहे कर सकती है । इस पर माँ हँसती थीं । कुछ शक्ति उनमें ज़रूर थी, जो भी उनसे मिलता, उस पर गहरा प्रभाव पडता । मैं तो मानती हूं कि मेरे पिताजी

पर भी उनके विचारों का गहरा असर पडा । अकसर उनके पास साधु महात्मा भी आकर बैठते थे ।"[1]

जैनेंद्र पर केंद्रित विष्णु प्रभाकर का एक चित्र इस प्रकार है -

"यह व्यक्ति गांधी-नीति का समर्थक है और अपनी कमजोरियों को जानता है । अपने चारों ओर जो लोग इकट्ठे हुए है, उन पर उन कमजोरियों को प्रकट भी कर देता है और कभी अपनी असमर्थता के ऊपर उठकर कोई काम अपने सिर नहीं लेना चाहता । इस चेष्टा में भी ऊपर उठने की आकांक्षा है, पर वह कभी कभी अपने विनयी ओब्लाइजिंग स्वभाव के कारण यहाँ बुरी तरह फेल हो जाता है ।"[2]

रेखाचित्र तथा अन्य अकाल्पनिक गद्य रूप

गद्य में रेखाचित्र की अपनी अलग अस्मिता के बावजूद वह एक ऐसा गद्य रूप है जिसका अन्य गद्य विधाओं के साथ गहरा संबंध है । इसलिए रेखाचित्र अपने माध्यम को सुरक्षित भी रखता है और कभी - कभी अपनी सीमा का उल्लंघन भी करता दिखाई देता है ।

---

1. सत्यवती मल्लिक - मेरी माताजी, अमिट रेखाएँ, 1955 सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली ।
2. विष्णु प्रभाकर "{चिंतनशील मनीषी} उभरी गहरी रेखाएँ, पृ. 7।

रेखाचित्र और संस्मरण

रेखाचित्र और संस्मरण की विभाजक रेखा बहुत सूक्ष्म है । इन दोनों को अलग करना बहुत कठिन है । रेखाचित्र में व्यक्ति के व्यक्तित्व का समग्र विकास देख सकते हैं । व्यक्ति के बाह्य चित्र के साथ रेखाचित्रकार उनके आंतरिक भावों को भी उभारता है । यह कुछ गिनी-चुनी घटनाओं के चित्रण से संभव है । रेखाचित्रकार को तिथिक्रम या घटनाओं की क्रमबद्धता पर ध्यान नहीं देना पड़ता है । प्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित, नामी-अनाम, धनी-निर्धन, पंडित-अपढ आदि किसी भी श्रेणीके व्यक्ति को केंद्र बनाकर रेखाचित्र खींच जाता है । रेखाचित्र की प्रभविष्णुता संस्मरण की अपेक्षा अधिक है । साधारण व्यक्तियों पर भी गहरा प्रभाव छोडने में यह विधा समर्थ है ।

संस्मरण में व्यक्ति के बाह्य तथा आंतरिक पहलुओं का वर्णन होता है, लेकिन बाह्य वर्णन पर ही अधिक ज़ोर दिया जाता है । इसमें घटनाओं की क्रमबद्धता की अनिवार्यता होती है ।

रेखाचित्र में संस्मरणात्मक प्रवृत्ति का समावेश होता है । लेकिन संस्मरण में चित्रात्मकता की कोई ज़रूरत नहीं है । संस्मरण से रेखाचित्र को अलग करनेवालीसबसे प्रमुख प्रवृत्ति यही चित्रात्मकता है । अलावा इसके संस्मरण प्राय: विवरणात्मक होता है । विवरणात्मकता की भी कोई सीमा रेखा खींची नहीं गयी है । रेखाचित्र में विवरण केलिए कोई स्थान नहीं है । विवरणात्मकता रेखाचित्र केलिए हानिकारक है ।

रेखाचित्र और ललित निबंध

रेखाचित्र और ललित निबंध का विषय-क्षेत्र भिन्न है । दोनों विधाओं में लेखक के व्यक्तित्व का पक्ष सर्वाधिक महत्व-पूर्ण है । किसी विषय या समस्या की ओर लेखक की दृष्टि से ही यह स्पष्ट हो जाता है । यथार्थ समस्या को प्रक्षेपित करने केलिए ललित निबंधकार पात्र-सन्निवेश भी कर सकता है । अपने विचारों की अभिव्यक्ति केलिए उसे किसी व्यक्ति या ठोस पदार्थ की सख्त ज़रूरत नहीं होती है। लेकिन रेखाचित्र प्राय: व्यक्ति का ही चित्रण होता है । और वह व्यक्ति यथार्थ जीवन का होता है ।

रेखाचित्र और ललित निबंध में चित्रात्मकता का प्रयोग होता है । ललित निबंध के संदर्भ में यह मात्र आभूषण होता है । लेकिन रेखाचित्र के संदर्भ में चित्रात्मकता उसकी जान है ।

ललित निबंध में काल्पनिकता का प्रचुर मात्रा में प्रयोग होता है । इसके फलस्वरूप उसकी प्रभावोत्पादकता और संप्रेषणीयता बढती है । रेखाचित्र का व्यक्ति तथा उसकी समस्याएं यथार्थ होने के कारण रेखाचित्रकार कल्पना का सहारा नहीं लेता है । लालित्य-योजना दोनों विधाओं को निकट लाती है । रेखाचित्र अपने विषय की प्रखरता के बावजूद लालित्य को समविष्ट करता है । विषय की गहराई के बावजूद आन्तरिक स्तर पर वह ललित निबंध के समान अनेक तरल मानवीय सन्दर्भों को

समेटता नज़र आता है । निरंतर सूक्ष्म से सूक्ष्मतम प्रसंगों की प्रस्तुति दोनों विधाओं को आमने-सामने खडी करती है ।

रेखाचित्र और जीवनी

रेखाचित्र और जीवनी का संबन्ध इसलिए है कि रेखाचित्र जीवनी का आंशिक रूप है । ये दोनों व्यक्तिकेंद्रित और यथार्थ पर आधारित विधाएं हैं । जो रचना का केंद्रीय व्यक्ति होता है उसके साथ रेखाचित्रकार और जीवनीकार का निकट संबंध होता है । यथार्थ व्यक्ति तथा उससे संबंधित यथार्थ घटनाओं का शब्दविष्कार होने के कारण दोनों में समय का स्पंदन मिलता है ।

किसी व्यक्ति से प्रभावित होकर ही रेखाचित्रकार और जीवनीकार उस व्यक्ति के आधार पर रेखाचित्र या जीवनी रचता है । किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को उभारना रेखाचित्रकार तथा जीवनीकार का लक्ष्य होता है । इसकेलिए जीवनीकार उस व्यक्ति से संबंधित प्राय: सभी घटनाओं का वर्णन करता है । यह जीवनी को प्राय: विशालकाय बना देता है । रेखाचित्रकार व्यक्ति के व्यक्तित्व को समग्रत: प्रस्तुत करता है । इसकेलिए उसे उस व्यक्ति के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं से संबद्ध घटनाओं का चित्रण करना ही काफी होता है । इसलिए रेखाचित्र अक्सर संक्षिप्त भी होता है ।

रेखाचित्रकार और जीवनीकार को तटस्थ रहना चाहिए । फिर भी जीवनीकार में विवेच्य व्यक्ति को श्रेष्ठतम व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करने का मोह हमेशा होता है । इस प्रकार जीवनी की तटस्थता भी हो जाती है ।

जो चित्रात्मकता रेखाचित्र की जान है वह जीवनी केलिए आवश्यक नहीं है । जो तिथिक्रम जीवनी केलिए अनिवार्य है वह रेखाचित्र की जान लेवा प्रवृत्ति है ।

रेखाचित्र और आत्मकथा

आत्मकथा व्यक्ति की अपनी कहानी है । आत्मकथा में स्वयं रचनाकार अपने जीवन को शब्दबद्ध करता है । इतनी छूट अवश्य है कि रचनाकार-व्यक्ति अपने ढंग से अपनी आत्मकथा प्रस्तुत करता है । ढंग चाहे जो हो आत्मकथा व्यक्ति की होते हुए भी उसमें समय का स्पंदन रहता है । इस दृष्टि से देखें तो रेखाचित्र के साथ आत्मकथा का कोई संबंध नहीं है । परंतु रेखाचित्रकार लेखन के दौरान अपने जीवन के कई पक्षों को भी लिपिबद्ध करता है । यह एक सहज प्रक्रिया है । इस सहज प्रवृत्ति से रेखाचित्र मुक्त नहीं है । इस अर्थ में ही आत्मकथा के साथ रेखाचित्र का संबंध है । जैसे महादेवी वर्मा ने अपने संकलन की भूमिका में लिखा कि इन स्मृति चित्रों में मेरा जीवन भी आया हुआ है । स्पष्ट है कि उनके जीवन के चित्रण के अभाव में अंकित व्यक्ति-चित्र प्रामाणिक नहीं हो सकता है । यही नहीं विभिन्न-संकलनों को निकट से देखें तो लेखिका की आत्मकथा का सुंदर ढांचा हमें प्राप्त हो सकता है । यह बात प्रकारांतर से अन्य रेखाचित्रकारों केलिए भी सही है जिन्होंने इस क्षेत्र में अच्छा खासा कार्य किया है ।

रेखाचित्र और रिपोर्ताज

किसी घटना के आधार पर रिपोर्ताज लिखा जाता है । रिपोर्ताज लेखक इन्हें घटनाक्रम से प्रस्तुत करता है । यह घटनाक्रम रिपार्ताज का अनिवार्य गुण है जो रेखाचित्र में अनुपलब्ध है । मार्मिकता के साथ घटनाओं को उतारता है, जिनका चित्रित व्यक्ति के व्यक्तित्व के साथ अटूट संबंध हो । रिपोर्ताज घटनाक्रम को सृजनात्मक ढंग से व्यक्त करने का रचनात्मक उपक्रम है जिसमें एक व्यापक परिदृश्य को आत्मसात करने की प्रवृत्ति भी होती है । उसके अंतर्गत व्यक्ति चित्र और अन्य कई घटनाएँ साकार होकर प्रस्तुत होती है जिनका संबंध रेखाचित्र से भी है ।

रेखाचित्रकार और रिपोर्ताज-लेखक को सूक्ष्म दृक् होना अनिवार्य है । रिपोर्ताजकार के संदर्भ में इसकी ज़रूरत घटनाओं को घटनाक्रम से बाँधने और संप्रेषण करने में है । व्यक्ति के व्यक्तित्व का असली चित्र अंकित करने केलिए संबद्ध घटनाओं को एक सूत्र में पिरोने में रेखाचित्रकार को सूक्ष्म दृक् होने की ज़रूरत है ।

रेखाचित्र और फीचरलेखन

पत्रकारिता के विकास ने पाठकों को ध्यान में रखकर समाचार प्रस्तुति में अद्भुत प्रयोग किया है । मात्र पाठकों को आकृष्ट करने की दृष्टि से ही नहीं अपितु स्वतंत्र अस्तित्वको बनाए रखने के हेतु पत्रकारिता ने अपने क्षेत्र को विपुल कर दिया ।

एक खास समाचार जब एक वृत्तचित्र का रूप धारण करता तो वह फीचर-लेखन के अंतर्गत आ जाता है । फीचर में रचनाओं के अलावा लेखकीय प्रतिक्रिया के अंश बिखरे पडे रहते हैं । वस्तुत: लेखकीय प्रतिक्रिया के इन्हीं अंशों से फीचर का रूपबन्ध सुदृढ भी होते हैं । अतिरिक्त इसके फीचर में अनेक व्यक्ति, उनकी प्रतिक्रियाएं, उनकी कथाएं आदि भी सम्मिलित होती हैं । इस दृष्टि से ऐसे फीचर की वृत्तचित्रात्मकता और रेखाचित्र से काफी समानता है । रेखाचित्र प्राय: एक व्यक्ति पर केंद्रित होता है जो फीचर की प्रवृत्ति नहीं है । फिर भी ऐसे भी रेखाचित्र हैं जिनमें एक से अधिक व्यक्ति ही नहीं अपितु अनेक घटनाओं का अंकन भी रहता है । उस समय वह कभी कभी फीचर का आभास देता है ।

फीचर परिचयात्मक है और सूचना प्रधान भी । लेकिन रेखाचित्र ऐसा नहीं है । उसे परिचयात्मक प्रवृत्ति से मुक्त होकर गहराई में जाना पडता है । फीचर में कहीं-कहीं ऐसी गहराईयां भी प्राप्त होती है । उन अवसरों पर फीचर चित्रात्मक शैली का या चित्रात्मक भाषा का सहारा लेता है जो रेखाचित्र की प्रवृत्ति है ।

यह भी सही है कि रेखाचित्र के विकल्प के रूप में फीचर लेखन का प्रयास भी देखा जा सकता है ।

रेखाचित्र का उद्भव और विकास

भारतेन्दु युग में हिन्दी गद्य का अभूतपूर्व विकास भी हुआ और वह कई परिणामों से गुजरा भी । प्राय: सभी गद्य विधाओं का श्रीगणेश इसी युग में हुआ । भारतेन्दु हरिश्चंद्र सही अर्थों में आधुनिक हिन्दी के निर्माता रहे हैं और गद्य के क्षेत्र में नए युग के प्रवर्तक । हिन्दी गद्य के वे केवल निर्माता मात्र न थे अपितु गद्य में प्रचलित विधाओं के शुभारंभकर्ता भी ।"[1] रेखाचित्र रचना का प्रारंभिक स्वरूप भी तत्कालीन साहित्य में उपलब्ध है । भारतेंदु ने स्वयं एक आत्मकथा की रचना की - "एक कहानी कुछ आप बीती कुछ जग बीती"। इस में कई रेखाचित्रात्मक प्रसंगों का सन्निवेश हुआ है । एक उदाहरण देखिए -

> "इन सबों में से एक मनुष्य को आप लोग पहचान रखिए इससे बहुत काम पडेगा । यह एक नाटा-खोटा अच्छे हाथ-पैर का साँवले रंग का आदमी है, बडी मोंछ, छोटी आँखें, कछाडा करे, लाल पगडी बाँधे, हरा दुपट्टा कमरे में लपेटे, सफेद दुपट्टा ओढे । जात का कुबनी है । इनका नाम होली है । होली आजकल मेरे बहुत मुँह लग रहा है, इसी से जो बात किसी को मुझ तक पहुँचानी होती है वह लोग उससे कहते हैं । रेवडी के वास्ते मस्जिद गिरानी इसी का नाम है ।"[2]

---

1. डॉ.विनयमोहन शर्मा - हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, पृ.256, प्रथम संस्करण 1972, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।
2. भारतेन्दु हरिश्चंद्र - एक कहानी कुछ आप बीती, कुछ जग बीती, भारतेंदु हरिश्चंद्र के श्रेष्ठ निबंध, (संपादक - कृष्णदत्ता पालीवाल) 1987, सचिन प्रकाशन,दरियागंज,नई दिल्ली ।

"हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास" में डॉ॰ विनय मोहन शर्मा ने इस प्रसंग को रेखाचित्र की कोटि में रखा है ।[1]

निबंध विधा के विकास के दौरान उसमें अनेक परिवर्तन आ गए । इसी दौर में व्यक्ति व्यंजक निबंधों का आविर्भाव हुआ । व्यक्ति व्यंजक निबंधों के प्रणेताओं में पं॰बालकृष्ण भट्ट और प्रताप नारायण मिश्र प्रमुख हैं । पं॰बालकृष्ण भट्ट लगभग एक हज़ार निबंधों के रचनाकार हैं । उनकी सर्वाधिक रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्रकाशित हुई । "हिन्दी प्रदीप", "कवि वचन सुधा", "काशी पत्रिका", "बिहार बंधु" आदि पत्रिकाओं में उनके निबंध लगातार प्रकाशित होते थे । समाज, संस्कृति, आचार-विचार, भाषा, साहित्य, राजनीति, प्रशासन, समाज सुधार, जातीयता, राष्ट्रीयता, कल्पना, यात्रा, लोक कल्याण, आदि अनेक विषयों पर उन्होंने निबंध लिखे हैं । उनमें से अनेक व्यक्ति व्यंजक निबंध की श्रेणी में आनेवाले हैं । व्यक्ति चित्रण में वे रेखाचित्र से मिलते-जुलते थे । "माता का स्नेह", "कल्पना", "हाकिम और अपनी हिकमत" आदि इस दृष्टि से प्रमुख निबंध हैं ।

सन् 1833 इ॰ से लेकर प्रताप नारायणमिश्र ने निबंध रचना के क्षेत्र में अपनी सफलता का परिचय दिया है । "प्रताप नारायण ग्रंथावली", "निबंध नवनीत", "प्रलप पीयूष" आदि में अनेक निबंध संग्रहीत हैं । निबंध रचना में उन्होंने व्यक्तिव्यंजकता को प्रमुखता

---

1. डॉ॰ विनय मोहन शर्मा - हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, पृ॰256

दी है । उनके व्यक्तिव्यंजक निबंधों में "दयापात्र", "जीव", "द", "व", "पक्ष", "मना", "धोखा", "आप", आदि उल्लेखनीय है । "गंगाजी" शीर्षक के मिश्र जी के निबंध में रेखा-चित्रात्मक प्रसंगों का सन्निवेश हुआ है -

> "आहा ! गंगा और भारत के संबंध को पूर्ण रूप से लिखना कोई हंसी खेल है ? ऐसा भी कोई हिन्दू है जो दिन भर में इस नाम को, मन वा वचन से, न्यूनातिन्यून एक बार न लेता हो ? ऐसा भी कोई काम है जिसमें गंगाजी का कुछ न कुछ प्रत्यक्ष वा प्रच्छन्न लगाव न हो ? ऐसा भी किसी विषय का कोई ग्रंथ है जिसमें किसी-न-किसी रीति से यह अक्षर न आए हों ? नहीं, नहीं, कदापि नहीं । भारत की तो गंगा प्राण है, शोभा है, बरंच सर्वस्व है ।"[1]

गद्य के प्रारंभिक युग में ही निबंध का पल्लवन हुआ जिससे निबंध विधा में से कई शाखाएँ फूट पड़ीं । व्यक्तिव्यंजक निबंधों की ओर संकेत किया जा चुका है । इसके साथ भाव या मनोविकार पर भी निबंध लिखे गए । इस दिशा में भी पंडित बालकृष्ण भट्ट का योगदान है । परवर्ती काल में रामचन्द्र शुक्ल ने इस प्रकार के निबंधों का मानक रूप प्रस्तुत किया है । ऐसे निबंधों में भावों को विश्लेषित किया जाता है । पर साथ ही भावों की विशेष

---

1. प्रतापनारायण मिश्र (गंगाजी) - प्रतापनारायण ग्रंथावली, संपादक विजयशंकर मल्ल, 1957, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।

स्थिति में व्यक्ति संदर्भ को भी प्रस्तुत किया जाता है । निबंधों में आगे चलकर अन्य कई प्रकार की परिणतियाँ आयी हैं । निबंध में काव्यात्मकता का पुट देकर ललित निबंध लिखे जाने लगे जो कि एक परवर्ती विकास है । निबंध विकास की एक अन्य दिशा संस्मरणात्मक निबंधों की है । इसमें व्यक्ति व्यंजकता और संस्मरणात्मकता (स्मृतियों के सन्निवेश का पक्ष) की प्रमुखता है । इस प्रवृत्ति ने आगे चलकर एक विशेष विधा को ही पथ दिया । "श्रद्धांजलियों के रूप में प्रस्तुत संस्मरण ने आगे चलकर विशेष विधा का रूप धारण कर लिया । रेखाचित्र इसके आगे की स्थिति है । इसमें ललित निबंध की रोचकता अपनी काव्यात्मकता के कारण बनी हुई है साथ ही संस्मरण की आकलित प्रवृत्ति भी है । विवरणात्मकता को स्थानापन्न करके रेखाचित्र में चित्रोपमता का सहारा लिया । साथ ही उसने साहित्येतर अनुशासनों का भी सहारा लिया । पत्रकारिता ने इसके क्षेत्र को विकसित कियाहै । चित्रकला ने रेखाचित्र को गहराने का कार्यकिया है । जब रेखाचित्र ने अपनी अस्मिता बना ली तो इसने स्वयं विषय विस्तार किया । महान व्यक्तियों के रेखाचित्रों के साथ समाज के निम्न वर्ग के लोगों का व्यक्ति अंकन ही ऐसे रेखाचित्रों का उद्देश्य नहीं रहा । उनमें समाज और यथार्थ जीवन के अंकन तथा समस्याओं का प्रक्षेपित विश्लेषण केलिए स्थान मिलने लगा ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि रेखाचित्र का पूर्वरूप अस्पष्ट है । विभिन्न गद्यरूपों में रेखाचित्र के अंश पाए जाते हैं । पर जैसे आधुनिक युग में गद्य में कई प्रकार के रचनात्मक विस्फोट हुए

उनमें से एक रेखाचित्र के रूप में प्रकट हुआ है । अत: यह कहा जा सकता है कि रेखाचित्र गद्य का एक परवर्ती विकास है जिसमें अनेक गद्य रूपों का समन्वय भी है ।

रेखाचित्र का इतिहास अति संक्षिप्त है । लेकिन यह एक प्रीतिप्रद तथ्य हैकि इस सीमित समय के अंतर्गत इस विधा को अपनाने और उत्कर्ष तक पहुंचाने का कार्य हिन्दी के कई साहित्यकारों ने किया है । यह सही हैकि वे अन्य विधाओं के लब्ध प्रतिष्ठित रचनाकार हैं जैसे कविता, उपन्यास, नाटक या कहानी । अपनी प्रमुख विधाओं के साथ इस नई विधा को भी उन्होंने दिशा दी ।

प्रयोगपरकता साहित्य की अनिवार्य प्रवृत्ति है । जब वह प्रयोग मात्र केलिए न होकर नई-नई प्रेरक स्थितियों का मूल कारण बनता है तो वह सतही नहीं रहता । इसलिए गद्य के आगामी विस्फोटों में और भी नए प्रकार के गद्य रूप सामने लगे । इसका तात्पर्य यह नहीं है कि रेखाचित्र को किसी अन्य गद्य रूप ने स्थानापन्न कर दिया हो । रेखाचित्र के भीतर कई प्रकार की नई भंगिमाएं अब दृष्टिगोचर होती हैं ।

यह बताया जा चुका है कि रेखाचित्र का पूर्वरूप अस्पष्ट है । इसलिए ऐतिहासिक सर्वेक्षण के अंतर्गत विचारणीय प्रारंभिक रचनाएं पूर्ण रूप से रेखाचित्र की कोटि में रखने योग्य नहीं हैं । फिर भी उनमें चित्रात्मक प्रवृत्ति और व्यक्तियों की आंतरिक स्थितियों का आकलन है जिससे वे अवश्य रेखाचित्र की श्रेणी में आती है ।

आगे का संक्षिप्त प्रकरण रेखाचि का ऐतिहासिक सर्वेक्षा है -

पं॰पदुमसिंह शर्मा

युग के ऐतिहासिक संदर्भ से देखें तो द्विवेदी युग में रेखाचित्र का विकास हुआ है । इस समय के प्रमुख रेखाचित्रकारों में पं॰ पदुमसिंह शर्मा का नाम उल्लेखनीय है । "पदुम पराग" और "प्रबंध मंजरी" उनकी रचनाएं हैं । रेखाचित्र की दृष्टि से ये रचनाएं काफी सफल हैं । निबंधों के साथ-साथ इनमें कुछ संस्मरणात्मक निबंध तथा रेखाचित्र भी संग्रहीत हैं । स्वामी दयानंद, महाकवि अकबर, लीडरों की पोल आदि रचनाओं में रेखाचित्रात्मक विशेषताएं काफी मात्रा में मिलती हैं ।

श्रीराम शर्मा

श्री॰ श्रीराम शर्मा शिकार साहित्य रचना के क्षेत्र विख्यात है । 1937 में प्रकाशित "बोलती प्रतिमा" उनका रेखाचित्र-संग्रह है । देसी जीवन को सहानुभूति और आत्मीयता के साथ अभिव्यक्त करने में वे सफल रहे हैं । "बोलती प्रतिमा" में पंद्रह रचनाएं हैं, जिनमें कुछ कहानियां भी हैं । "ठाकुर की आन", "हरनामदास" "गीली लकडियां", "वरदान", "पीतांबर", "वसीयत", फिरोजबाद की कालकोठरी, आदि प्रमुख रेखाचित्र हैं । अंतिम रेखाचित्र डॉ॰ शिवराम पर केंद्रित है । डॉ॰ शिवराम सांप्रदायिकता के चक्कर में पडकर करुण जीवन बितानेवाला व्यक्ति है । चौदह

वर्षों से रोगशय्या पर पडे उस व्यक्ति का चित्र अत्यंत मार्मिक हो गया है । इन रेखाचित्रों में प्रकृति, वसंत, नदी आदि प्राकृतिक दृश्यों के साथ-साथ व्यक्ति के बाह्य तथा आंतरिक चित्र, गरीबी, संकट, अभाव आदि के अनेक मार्मिक चित्र भी प्रस्तुत हैं । उनके "चंदा" शीर्षक रेखाचित्र का एक अंश इस प्रकार है -

> "लंगोट पहने, नंगे पैर और कुदाली के सहारे चंदा खड़ा था । उसकी दग्ध आत्मा उसके रोम-रोम से प्रस्फुटित हो कर जमींदारी प्रथा को शाप दे रही थी । मैं दो मास उपरांत गांव में आ रहा था । चंदा की बेदखली और परेशानी सुन कर हृदय को एक चोट लगी । मन-ही-मन मैं ने कहा कि चंदा ककड़ों का गड्ढा नहीं खोद रहा है, वरन् जमींदारी-प्रथा की कब्र, जिसमें, यदि अत्याचार की यही गति रही तो, जमींदारी-प्रथा की पूतना गड़ जाएगी ।"[1]

"जंगल के जीव" नामक उनकी रचना 1945 में प्रकाशित हुई । इसमें दस चित्र हैं । काला हिरण, बघेरा, घडियाल, शेर, हाथी, जंगली सुअर, बया, सियार, जंगली मुर्गा आदि जंगली जीव श्रीराम शर्मा की तूलिका से जीवंत हो गए हैं । उनके बीस रेखाचित्रों का संग्रह है "वे जीते कैसे हैं ?" । यह संग्रह 1957 में प्रकाशित हो गया था । "स्मृति", "दीनबंधु के अंतिम दिन",

---

1. श्रीराम शर्मा - (चंदा), रेखाएं और रेखाएं, संपादक सुधाकर पांडेय और विश्वनाथ तिवारी, पृ.38 (दूसरा संस्करण 1971) वाराणसी ।

"तमाशा लोओ", "सड़क का एक दृश्य", "आसामी बाबू" आदि चित्र इस संग्रह में संकलित हैं ।

पं॰ बनारसीदास चतुर्वेदी

पं॰ बनारसी दास चतुर्वेदी हिन्दी के प्रमुख रेखाचित्रकार हैं । उन्होंने प्राय: विशिष्ट व्यक्तियों के चित्र खींचे हैं । वे कहते हैं - श्रद्धेयों का गुणगान करते समय देश-विदेश की कोई विभाजक सीमा मानने को हम तैयार नहीं ।"[1] इसलिए उन्होंने विदेश के श्रेष्ठ व्यक्तियों पर भी अनेक चित्र प्रस्तुत किए हैं । 1952 में "हमारे आराध्य" का प्रकाशन हुआ । इसके सभी चित्र विदेशी व्यक्तियों पर केंद्रित हैं । "प्रिंस क्रोपाटकिन", "एमर्सन", "फक्कड़ कोरो", "उपन्यासकार तुर्गनेव" आदि रेखाचित्र उल्लेखनीय हैं । इस में चौदह चित्र संकलित हैं ।

चतुर्वेदी का संस्मरण" 1953 में प्रकाशित हुआ । यह इक्कीस संस्मरणों का संग्रह है । इनमें अनेक रेखाचित्रात्मक संदर्भ भी आ गए हैं । इसी वर्ष प्रकाशित 'रेखाचित्र' चालीस रेखाचित्रों का संग्रह है । "आचार्य द्विवेदी जी", "प्रिंसिपल सुशील कुमार", "दीन बंधु ऐण्ड्रयूज़", "श्रद्धेय बाबू राजेंद्र प्रसादजी", "प्रेमचंदजी के साथ दो दिन" आदि इस संग्रह के उल्लेखनीय रेखाचित्र हैं । "प्रेमचंदजी के साथ दो दिन" का एक प्रसंग इस प्रकार है -

---

1. पं॰ बनारसीदास चतुर्वेदी - चार शब्द, हमारे आराध्य प्रथम संस्करण 1952, काशी ।

"प्रेमचंद जी का मकान खुली हुई जगह में सुंदर स्थान पर है, और कलकत्ते का कोई भी हिन्दी-पत्रकार इस विषय में उनसे ईर्ष्या किए बिना नहीं रह सकता । लखनऊ के आठ वर्ष पुराने प्रेमचंद जी और काशी के प्रेमचंदजी की रूपरेखा में विशेष अंतर नहीं पडा । हाँ, मूँछों के बाल ज़रूर तिरपन फीसदी सफेद हो गए हैं, उम्र भी करीब करीब इतनी ही है, परमात्मा उन्हें शतायु करें, क्योंकि हिन्दीवाले उन्हीं की बदौलत आज दूसरी भाषावालों के सामने मूँछों पर ताव दे सकते हैं ।"[1]

श्री॰ बनारसी दास चतुर्वेदी ने सैकडों रेखाचित्रों की रचना की है । उनमें से अधिकांश संस्मरणात्मक शैली में लिखे गए हैं । चतुर्वेदी जी के कुछ रेखाचित्र जीवनी शैली में रचित हैं । उनके प्राय: सभी रेखाचित्रों में पत्र-शैली का प्रयोग देख सकते हैं । रोचकता, मनोरंजकता और सरलता का समन्वय उनकी रचना की विशेषता है । उनकी भाषा में प्रसंगानुकूल ओज तथा व्यंग्य का समावेश हुआ है ।

1962 में बनारसीदास चतुर्वेदी के "सेतुबंध" का प्रकाशन हुआ । पूर्व प्रकाशित कुछ रेखाचित्र भी इसमें संग्रहीत हैं । "काग़ज़ के जन्मदाता, हयुम", "अमर कलाकार ज़िक्ग", "कुमारी मेरी रीड" आदि इस संग्रह के प्रमुख रेखाचित्र हैं ।

1॰ बनारसी दास चतुर्वेदी - प्रेमचंद जी के साथ दो दिन, रेखाचित्र, पृ॰155, (द्वितीय संस्करण 1963),काशी ।

देश-प्रेम, विश्व-प्रेम, तथा अन्तर्देशीयता की भावना को उजागर करने का प्रयास चतुर्वेदी जी ने अपने रेखाचित्रों के द्वारा किया है ।

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी रेखाचित्र रचना में सिद्ध हस्त हैं । उनके रेखाचित्र "जीवंत और स्फूर्तिदायक" हैं ।[1] शब्दों के जादूगर बेनीपुरी का प्रथम रेखाचित्र संग्रह "लालतारा" 1940 में प्रकाशित हुआ । यह एक नए प्रभात का संदेश वाहक है । इस संग्रह के अठारह चित्रों के माध्यम से बेनीपुरी ने सामाजिक समस्याओं का अच्छा विश्लेषण किया है ।

1946 में "माटी की मूरतें" का प्रकाशन हुआ । कच्ची मिट्टी की मूर्तियों के चित्र- "माटी की मूरतें" का शीर्षक बहुत उचित और सार्थक है । ग्रामीण जीवन की ममता, सरलता आदि की सुंदर अभिव्यक्ति इसमें हुई है । आर्थिक विषमता, शोषण, भूख आदि की समस्या बेनीपुरी ने इस संग्रह में अंकित की है ।

बेनीपुरी के प्रतीकात्मक रेखाचित्रों का संग्रह है "गेहूँ और गुलाब" । यह 1950 में प्रकाशित हुआ । इसमें संग्रहीत पच्चीस चित्रों में समाजिक समस्याओं का उभार हुआ है । इन समस्याओं का प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति इस संग्रह की विशेषता है ।

---

1. बेनीपुरी (ये माटी की मूरतें भूमिका) माटी की मूरतें (संस्करण 1972) प्रकाशन केंद्र, लखनऊ ।

देश-विदेश के प्रतिष्ठित व्यक्तियों का संग्रह है "मील के पत्थर"। इसमें पंद्रह संस्मरणात्मक रेखाचित्र संग्रहीत हैं। "बापू की कुटिया में", "हमारे राष्ट्रपति", "जो शब्दशः आचार्य थे", "भूख और कला" आदि इस संग्रह के उल्लेखनीय रेखाचित्र हैं।

इस प्रकार रेखाचित्र के विकास तथा उत्कर्ष में रामवृक्ष बेनीपुरी ने अविस्मरणीय योग दिया है।

महादेवी वर्मा

महादेवी वर्मा का नाम रेखाचित्र साहित्य के क्षेत्र में अन्यतम है। छायावादी कवयित्री होने के बावजूद उनके रेखाचित्रों में छायावाद की छाया नहीं पडी है। वे मिट्टी की सुगंध में धुले चित्र हैं।

> "इन रचनाओं में लेखिका का समाज के प्रति एक जागरूक दृष्टिकोण भी है। कवि के रूप में जितनी वे पार्थिव समस्याओं से दूर हैं - इन रचनाओं में उतनी ही समीप हैं। यद्यपि इनमें लेखिका युग-चेतना के अनुरूप विद्रोहिणी नहीं, फिर भी उसमें जैसे बुद्ध की करुणा और माता के विराट् मातृत्व के दर्शन होते हैं। छुआ से अधिक ममता और सहानुभूति में विश्वास करती है, इसलिए उसकी विद्रोह की आग पर करुणा और सहानुभूति का हिम आच्छादित है, फिर भी कहीं - कहीं वह दबाया नहीं जा सका है, विशेषतः नारी के प्रति होनेवाले अत्याचार से वह व्याकुल हो उठती है।"[1]

---

1. गोपाल कौल - महादेवी के रेखाचित्र {महादेवी वर्मा - संपा. शचीरानी गुर्टू} पृ.165

"अतीत के चलचित्र" महादेवी का प्रथम रेखाचित्र संग्रह है । 1941 में इसका प्रकाशन हुआ । इसमें ग्यारह चित्र संग्रहीत हैं । प्रत्येक चित्र में समाज की किसी-न-किसी समस्या का मार्मिक विश्लेषण हुआ है । "स्मृति की रेखाएं" महादेवी का दूसरा रेखाचित्र संग्रह है । इसका प्रकाशन 1952 में हुआ । सामाजिक समस्याओं की वैयक्तिक अभिव्यक्ति चित्रों के माध्यम से हुई है । इस संग्रह के सात चित्रों में ग्राम्य जीवन की सादगी, भावुकता और भोलेपन का स्पष्ट चित्रण हुआ है ।

1956 में महादेवी के तीसरे रेखाचित्र संग्रह "पथ के साथी" का प्रकाशन हुआ । महादेवी ने अपने साहित्य-पथ के साथियों को चित्र इसमें संग्रहीत किया है । ये प्रतिष्ठित व्यक्तियों के चित्र हैं । इस संग्रह के प्रारंभ में महादेवी रवींद्रनाथ ठाकुर का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है । शेष सब हिन्दी साहित्यकारों के चित्र हैं ।

1972 में उनका चौथा रेखाचित्र संग्रह प्रकाशित हो गया - "मेरा परिवार" । बचपन से ही पशु-पक्षी महादेवी को पसंद थे । अपने घर के पालतू जानवरों और पक्षियों के चित्रों से महादेवी ने "मेरा परिवार" को सजाया है ।

महादेवी की गद्य रचनाएं यथार्थ पर आधारित हैं । रेखाचित्र के विकास की दृष्टि से महादेवी की रचनाएं सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं । "इस प्रकार रेखाचित्र साहित्य में महादेवी का स्थान मूर्धन्य है ।"[1]

---

1. डॉ. हरवंशलाल शर्मा - हिन्दी रेखाचित्र, पृ.154

कन्हैयालाल मिश्र "प्रभाकर"

श्री॰ कन्हैयालाल मिश्र "प्रभाकर" का नाम हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रसिद्ध है। रेखाचित्र रचना में भी वे सिद्धहस्त हैं। प्राय: निस्सार प्रतीत होनेवाला विषय भी कन्हैयालाल की विशेष शैली और सरल, प्रांजल भाषा के कारण महत्त्वपूर्ण ढंग से प्रस्तुत हो जाता है।

कन्हैयालाल मिश्र "प्रभाकर" के संस्मरणात्मक निबंधों का संग्रह है "जिंदगी मुस्कराई। यह "असल में कोई पुस्तक नहीं जीवन की "रिफाइनरी" है जिसमें जीवन शुद्ध हो उद्‌बुद्ध होता है।"[1] इस संग्रह में अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंग उपलब्ध हैं। निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण आदि विधाओं का सुंदर समन्वय इस संग्रह में हुआ है।

"प्रभाकर" जी के छत्तीस व्यक्ति व्यंजक निबंधों का संग्रह है "बाजे पायलिया घुंघरू"। इस संग्रह में भी रेखाचित्र के कई उदाहरण उपलब्ध हैं। 1969 में "महके आँगन चहके द्वार" प्रकाशित हुआ। इस ग्रंथ में संगृहीत सभी रचनाएँ व्यक्तिव्यंजक निबंध हैं। इसकी भूमिका के रूप में लेखक ने एक रेखाचित्र ही लिख डाला है। उसके कुछ अंश इस प्रकार हैं -

---

1. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर (भूमिका) - जिंदगी मुस्कराई

"श्रीमती रमा रानी जैन का व्यक्तित्व विशिष्ट है, बहुमुखी है । उस पर संक्षिप्त में कुछ कहना असंभव है । वे आदर्श नारी, आदर्श सास, आदर्श माता, आदर्श समाज सेविका और आदर्श नागरिक हैं । उनमें दृढ़ता और कोमलता का अद्भुत संगम है । वे चाँदनी का इस्पात हैं, इस्पात की चाँदनी है । वे चिर-प्राचीन है, नित-नूतन हैं । संक्षिप्त में गृहस्थ का एक जीवंत विश्वविद्यालय हैं - वे, वे हैं ।"[1]

कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर की भाषा और शैली प्रांजल है । थोडे ही शब्दों में व्यक्ति के संपूर्ण व्यक्तित्व का चित्र उतारने में उनकी भाषा सक्षम है । उनके निबंधों ने रेखाचित्र कला के विकास में काफी योगदान दिया है ।

प्रकाशचंद्र गुप्त

श्री॰ प्रकाशचंद्र गुप्त प्रसिद्ध रेखाचित्रकार हैं । अन्य रेखाचित्रकारों की तुलना में प्रकाशचंद्र गुप्त ने निर्जीव वस्तुओं, पदार्थों और स्थानों पर भी संवेदनशील दृष्टि डाली है । वे सत्ताधारी के शोषण को विद्रोह की दृष्टि से देखनेवाले हैं । 1940 में उनके प्रथम संग्रह "रेखाचित्र" का प्रकाशन हुआ । इसमें इकतीस निर्जीव वस्तुओं के चित्र संगृहीत हैं । "ताई", "गाँव की

1॰ कन्हैयालाल मिश्र "प्रभाकर" -(श्रीमती रमा जैन)
महके आँगन चहके द्वार, भूमिका, 1963

साँझ", "अलमोड़े का बाजार", "रानी खेत की रात" आदि उनमें कुछ प्रमुख चित्र हैं । 1947 में "पुरानी स्मृतियाँ" प्रकाशित हुई । बचपन में जिन लोगों के साथ गुप्त जी का संबंध था, उन्हीं के चित्र इस संग्रह में संकलित हैं । "बच्चन" का चित्र, "हंस" के रेखाचित्र विशेषांक में भी आया था वह चित्र कुछ इस प्रकार है -

> "बच्चन के रूखे, बिखरे बाल, कृश गात, किसी घोर तपसाधन में मुखाया शरीर, मस्ती, अलस भाव भरी आँखें, कुछ चीनियों जैसे सूजे - से पलक - उनके मुख का पूरा भाव, उनकी संपूर्ण आकृति मानो "मधुशाला" का साकार रूप हो । किंतु बच्चन का शरीर व्यायाम से गठा, स्वस्थ और कठिन है । हम सोचते हैं अवश्य ही इस व्यक्ति का समाज से विरोध होगा, और इस संघर्ष में केवल अभिमान ही उसका सहायक होगा । कुछ-कुछ फाउट का हमें स्मरण हो आता है ।"[1]

उनके अन्य रेखाचित्र संकलन हैं - "विशाख:" और "नये स्केच" । रेखाचित्र विधा के प्रारंभिक लेखकों में श्री प्रकाशचंद्र गुप्त का महत्वपूर्ण स्थान है । भिन्न-भिन्न संकलनों के अलावा पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से भी गुप्तजी ने इस विधा को प्रश्रय दिया है ।

---

1. प्रकाशचंद्र गुप्त - हंस (रेखाचित्र विशेषांक), मार्च 1939

निराला

कविश्रेष्ठ सूर्यकांत त्रिपाठी निराला एक अच्छे रेखाचित्रकार भी हैं । उनकी दो रचनाएं हैं - "कुल्लीभाट" और "बिल्लेसुर बकरिहा" । इन दोनों रचनाओं में अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंगों का सन्निवेश हुआ है । "कुल्लीभाट" का एक चित्र देखिए -

> "गेट पर टिकट कलेक्टर के पास एक आदमी खड़ा था बना-चुना, बिल्कुल लखनऊ-ठाट, जिसे बंगाली देखते ही गुंडा कहेगा । तेल से जुल्फें तर, जैसे "अमीनाबाद" से सिर पर मालिश कराकर आया है । लखनऊ की दुपलिया टोपी, गोट तेल से गीली, सिर के दहिने किनारे रक्खी । ऐंठी मूंछें । दाढ़ी चिकनी । चिकन का कुर्ता । ऊपर बास्कट । हाथ में बेंत । काली मखमली किनारी की कलकतिया धोती, देहाती पहलवानी फैशन से पहनी हुई । पैरों में मेरठी जूते । उम्र पच्चीस के साल दो साल इधर-उधर । देखने पर अंदाज लगाना मुश्किल है - हिंदू है या मुसलमान । साँवला रंग । मजे का डीलडौल । साधारण निगाह में तगड़ा और लंबा भी ।"[1]

यह काफी विवाद-संवाद का विषय बन चुका है कि निराला की ये दो रचनाएं - कुल्लीभाट और बिल्लेसुर बकरिहा"

---

1. निराला - कुल्लीभाट, निराला रचनावली - 4, पृ.26

किस विधा के अंतर्गत रखी जाय । फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि ये दोनों रेखाचित्र रूपी कड़ियों से बनी मालाएं हैं । इस दृष्टि से इन्हें रेखाचित्र की कोटि में रखने में को आपत्ति नहीं हो सकती है ।

व्यक्ति चित्रण में ही नहीं निर्जीव वस्तुओं के चित्रण में भी निराला सिद्धहस्त हैं । बिल्लेसुर का मकान इस प्रकार है -

> "मकान के सामने एक अंधा कुंआ है और एक इमली का पेड । बारिश के पानी से धुलकर दीवारें ऊबड-खाबड हो गई हैं जैसे दीवारों से ही पनाले फूटे हों । भीतर के पनाले का मुंह भर जाने से बरसात का पानी दहलीज़ की डेहरी के नीचे गड्ढा बनाकर बहा है । गड्ढा बढता-बढता ऐसा हो गया हैकि बडे जानवर, कुत्ते जैसे आसानी से उसके भीतर से निकल सकते हैं, दहलीज़ का फर्श कहीं भी बराबर नहीं, उसके ऊपर लेटने की बात क्या, चारपाई भी उस पर नहीं डाली जा सकती । दूसरी तरफ एक खम्भार है और उसी से लगी एक कोठरी ।"[1]

निराला कवि और कहानीकार हैं, रेखाचित्रकार भी । उनके सभी कहानियों में रेखाचित्र कला के अच्छे नमूने उपलब्ध है । इस दृष्टि से "चतुरी चमार" और "देवी" प्रमुख हैं । इस प्रकार निराला की रचनाओं से रेखाचित्र विधा को उल्लेखनीय लाभ हुआ है ।

---

1. निराला - बिल्लेसुर बकरिहा, निराला रचनावली - 4 पृ.101

आचार्य विनय मोहन शर्मा

आचार्य विनय मोहन शर्मा के रेखाचित्रो का संकलन है - "रेखा और रंग"। "विशाल भारत", "आलोक", "कल्पना", "मध्यप्रदेश संदेश" आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं में उनके रेखाचित्र प्रकाशित हुए हैं। "विशाल भारत" में प्रकाशित "नज़र नसाय गई मालिक !" का एक चित्र इस प्रकार है -

"बाबू नौकरी मिली ?" आवाज़ ने मुझे चौंका दिया। (सामने देखा, एक अधेड उम्र का, दुबला और लंबा-सा आदमी अपने दोनों हाथों को जोडे खडा था। शरीर पर एक मैला कुर्त्ता था, जो कंधों और बगलों पर फट कर अपने जीर्ण होने की शहादत दे रहा था। वह घुटनों तक पहुँचनेवाली बरसाती पानी के रंग की धोती पहने था। सर पर सिर्फ बाल थे और पैरों में बिवाई की दरारें। भाल चंदन से पुता हुआ था। आंखों में आशा-निराशा आंख मिचौनी सी खेल रही थीं।) उसने दुहराया "मेरे बाबू ! मालिक, नौकरी मिली न ? हम बाह्मन है।"[1]

"वह वृक्ष और वह चिडिया", "जग्गू काका", "ब्लैकी", "छली", आदि भी उनके सुंदर और मार्मिक रेखा-चित्र हैं।

---

1. विनय मोहन शर्मा (नज़र नसाय गयी मालिक), रेखा और रंग (द्वितीय संस्करण 1964) आगरा, पृ.8

राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह

कहानी, नाटक, उपन्यास आदि के सफल रचनाकार राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह प्रसिद्ध शब्द शिल्पी और शैलीकार हैं । उन्होंने अपनी रचनाओं में अनेक रेखाचित्रों का सृजन भी किया है । इस दृष्टि से वे एक सफल रेखाचित्रकार भी हैं । उनकी "सावनी समाँ" 1938 में प्रकाशित हो गयी । 1940 में प्रकाशित "टूटा तारा" उनका संस्मरण-संग्रह है ।

1940 में प्रकाशित "सूरदास" उनका विशेष उल्लेखनीय संग्रह है । इसमें अंधों की दुनिया के विशिष्ट चित्र प्रस्तुत किए गए हैं । उस प्रकार रेखाचित्र को एक साहित्यिक विधा के रूप में विकसित करने में राजा राधिकारमण सिंह ने अपना योगदान दिया है ।

सत्यवती मल्लिक

रेखाचित्र विधा में श्रीमती सत्यवती मल्लिक का नाम उल्लेखनीय है । उनके संपादकत्व में 1951 में "अमिट रेखाएँ" का प्रकाशन हुआ । पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से भी उन्होंने रेखाचित्र प्रकाशित किए । लघु कथा, कहानी, निबंध आदि में उन्होंने अनेक रेखाचित्रात्मक संदर्भों को जोडा है । उनके "यात्रा में" का एक चित्र इस प्रकार है -

"बृहद् भाल, लंबी पतली नाक, शुभ्र ग्रीवा पर
लटकते कर्णफूल चिकन के बारीक कुर्ता, रेशमी सलवार
और पतले महीन दुपट्टे से ढकी कमनीय छवि । नाजुक
शुभ्र कलाइयों में बेला के गजरे, में हदी-भरे हाथ और
पास ही मुँह-हाथ धोने का भभका तथा साँवला रंग,
शोरन आँखोंवाली बाँदी ।"[1]

"विशाल भारत", "मधुकर" आदि पत्रिकाओं में उनके अनेक रेखाचित्र प्रकाशित हुए हैं ।

आचार्य शिवपूजन सहाय

रेखाचित्र कला के विकास में आचार्य शिवपूजन सहाय ने सक्रिय योगदान दिया है । विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से उनके अनेक रेखाचित्र प्रकाश में आए । "आज" में वे लगातार रेखाचित्र प्रकाशित करते रहे । उन रेखाचित्रों का संग्रह "कुछ शीर्षक से प्रकाशित हुआ । "ज्योत्सना", "योगी", "नई धारा", "उत्तर बिहार" आदि पत्रिकाओं में छापे गये उनके रेखाचित्रों का संग्रह है - "वे दिन वे लोग" ।

आचार्य शिवपूजन सहाय ने हिन्दी रेखाचित्र साहित्य को विकसित करने में काफी सहयोग दिया है ।

---

1. सत्यवती मल्लिक - यात्रा में, "हंस" फरवरी 1942

बाबू गुलाबराय

निबंध साहित्य में बाबू गुलाबराय का नाम अद्वितीय है । विभिन्न विषयों पर आधारित उनके निबंधों में अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंग देखे जा सकते हैं । "मेरे निबंध", "मेरी असफलताएँ", और "जीवन और जगत" आदि उनके निबंध संग्रह हैं । बाबू गुलाबराय के अनेक निबंध रेखाचित्र के अधिक निकट हैं । अपने संकलनों के अलावा पत्रों के माध्यम से भी उन्होंने इस कोटि के अनेक निबंध प्रस्तुत किए ।

जैनेन्द्र

कहानी और उपन्यास के विख्यात लेखक जैनेन्द्र रेखाचित्र रचना में भी निपुण हैं । "हंस" के रेखाचित्र में उन्होंने सुंदर रेखाचित्र रचना प्रस्तुत की है । कथा-साहित्य में जगह-जगह पर उन्होंने रेखाचित्रात्मक प्रसंग प्रस्तुत किए हैं । 1954 में प्रकाशित "ये और वे" उनके प्रसिद्ध रेखाचित्र संग्रह है । इस संग्रह में उन्होंने रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचंद, मैथिली शरण गुप्त जयशंकर प्रसाद, महादेवी आदि तेरह चित्र संगृहीत हैं । मैथिलीशरण गुप्त का व्यक्तित्व जैनेंद्र की दृष्टि में इस प्रकार है -

> "नाम बडे, दर्शन थोडे । उनकी पहली छाप मुझ पर यह पडी । शुरू में चाहे यह अनुभव मुझे कैसा भी लगा हो, पर पीछे ज्यों-ज्यों मैं जानता गया हूँ, मालूम हुआ कि दर्शन को थोडा रखकर ही उन्होंने अपना नाम बडा

कर पाया है । अपने चारों और दर्शनीयता उन्होंने नहीं बटोरी । बल्कि कहो कि वह उससे उलटे चले हैं । रूप उन्होंने आकर्षक नहीं पाया, इतने से ही मानो मैथिलीशरण संतुष्ट नहीं हैं । अपनी ओर से भी वह किसी तरह आकर्षक न बनने दें, मानों इसका भी उन्हें ध्यान रहता है । लिबास मोटा, देहाती और कुर्ता । सज्जा, यदि हो तो तदनुकूल और आधुनिक फैसी के प्रतिकूल । सिर पर बुंदेल खंडी पगडी, घुटने तक गया कुरता और लगभग घुटने तक ही रहनेवाली धोती । बाल इतने छोटे कि उन्हें चाह कर भी संवारा न जा सके । शरीर कृश और श्यामल । मूँछें बेरोक उगती हुई, जिसमें कोई छटाव नहीं ।" इसी प्रकार जैनेन्द्र ने "ये और वे" के सभी साहित्यिकों के व्यक्तित्व के अनूठे पहलुओं को अपने चित्रण के माध्यम से दृश्यात्मक बना दिया है ।

अज्ञेय

कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, आलोचक आदि के रूप में श्री॰ सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन "अज्ञेय" प्रसिद्ध हैं । उनकी कहानियाँ तथा उपन्यास अच्छे रेखाचित्र भी हैं । विभिन्न पत्रिकाओं में उन्होंने अपने रेखाचित्र प्रकाशित किए स्मृति लेखा अज्ञेय का एक ऐसा संकलन है जिसमें हिन्दी के कुछ मानक रेखाचित्र उपलब्ध होते हैं । स्मृति-लेखा में सरोजिनी नायडू का एक स्मृति चित्र इस प्रकार है -

---

।॰ जैनेंद्र - "हंस" - रेखाचित्र विशेषांक, मार्च ।939

"श्रीमती नायडु आगे आ कर खड़ी हुई तो किसी ने माइक उन के सामने रख दिया । जनसभाओं में माइक और लाउडस्पीकर की व्यवस्था उन दिनों नयी-नयी चीज़ थी । वक्तृत्व शैली पर उस का प्रभाव अभी नहीं पड़ा था, लेकिन बहुत-से लोग उसे उपयोगी मानने लगे थे - खास कर कम समर्थ वक्ता ! इतनी बड़ी सभा को माइक के बिना सम्बोधित करने का साहस करने वाले तो दो-चार ही नेता देश में थे ।

माइक को देख कर श्रीमती नायडु की त्यौरियाँ चढ़ गयी । बायें हाथ की कर राजसिक गर्व-भरी मुद्रा से माइक को मेज़ पर ठेल कर नीचे गिराते और सब को सकते में डालते हुए उन्होंने बोलना आरंभ किया तो उन के पहले ही शब्दों से सारी सभा में एक सनसनी-सी दौड़ गयी । एक सन्नाटा और उनके बाद डेढ़ लाख जनता तर्क प्रयासरहित सहजता से पहुँचने वाले पहले ही शब्द - "मेरी आवाज़" - "मेरी आवाज़ भारत की लाख-लाख जनता तक किसी यन्त्र के सहारे के बिना ही पहुँचती ।" माइक को उठा फेंकने की सफाई अंग्रेज़ी में दे कर उन्होंने सभा को एक बार फिर अचरज में डालते हुए हिन्दुस्तानी में बोलना आरंभ किया । श्रीमती नायडु जन्मना बंगाली थी, विवाह से दक्षिण भारतीय, लेकिन हैदराबाद के जीवन में उन्होंने सरल उर्दू का जो अभ्यास किया था वह बड़े-बड़े वक्ताओं और साहित्यकारों के लिए भी गर्व की चीज़ हो सकता है ।

> आज तो शायद ही कोई नेता होगा जो खिचड़ी के सिवा कोई भाषा बोलता हो, लेकिन भारत कोकिला अंग्रेज़ी अथवा हिन्दुस्तानी में समान अधिकार और प्रभविष्णुता के साथ बोल सकती थी और दोनों ही में सरकारी साधु शब्दावली का व्यवहार करते हुए ।"[1]

किसी भी व्यक्ति के आंतरिक तथा बाह्य चित्र उतारने में अज्ञेय सक्षम है । उनकी सभी रचनाओं में चित्रात्मकता एक मूल प्रवृत्ति के रूप में समाविष्ट है ।

सेठ गोविंद दास

सेठ गोविंद दास नाटककार होने के साथ साथ एक अच्छे रेखाचित्रकार हैं । उनके रेखाचित्र संग्रह "स्मृतिकण" का प्रकाशन 1959 में हुआ । ये संस्मरणात्मक शैली में लिखे गए रेखाचित्र हैं । चालीस चित्रों के इस संग्रह के अनेक चित्र इसके पूर्व, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए थे । इस संग्रह के चित्र गांधी, तिलक, मालवीय जैसे राष्ट्रकर्मियों तथा रवींद्र, द्विवेदी, हरिऔध जैसे साहित्यकारों पर केन्द्रित हैं ।

1966 में गोविंददास की दूसरी रचना प्रकाशित हो गयी । उनके परिवारवालों के चित्रों के इस संग्रह का शीर्षक "चेहरे" जान पहचाने है । इसमें सत्रह चित्र संग्रहीत हैं । परिवारवालों के

---

1. अज्ञेय - स्मृतिलेखा (प्रथम संस्करण 1982) नई दिल्ली, पृ. 18

अलावा मुनीम पूनमचंद, मिस्टर डिगविट, मकदूम बख्श आदि उनसे निकट संबंध रखनेवाले कुछ व्यक्तियों के चित्र भी इसमें प्रस्तुत हैं । "मकदूम बख्श" का एक नमूना इस प्रकार है -

> "यह आदमी एकदम आबनूस के रंग के सदृश काले रंग का था । उस रंग में इसकी बड़ी-बड़ी लाल आँखें थीं । कद छः फुट से अधिक ही होगा और जितनी ऊँचाई थी, उतनी ही मोटाई भी । काले रंग कीदाढ़ी थी, जो छाती परन फैल कर बड़े ढंग से सँवारी जाकर राजपूती दाढ़ी के सदृश कानों में लिपटी रहती थी । मकदूम बख्श बग्घी चलाने और जीन सवारी दोनों के विशेषज्ञ थे । बग्घी के काम के घोड़े उस वक्त आस्ट्रेलियन बेलर नस्ल के सबसे अच्छे माने जाते थे और जीन सवारी के काठियावाड़ तथा मारवाड़ नस्ल के । जिस नस्ल के घोड़े घुड़दौड में या पोलो में काम आते हैं, वे हमारे यहाँ नहीं थे । हमारे यहाँ की शानशौकत के लिए बग्घी और जीनसवारी के घोडे ही उपयोगी थे । मकदूम बख्श छः घोड़ों की गाड़ी कोच बक्स पर वे ज़रा तिरछे होकर बैठते थे और जो वर्दी वे पहनते थे, उसमें सिर पर लुंगी बांधी जाती थी । यह वर्दी और लुंगी जरी की रहती थी ।"

रेखाचित्र के क्षेत्र में सेठ गोविंददास का योगदान विशिष्ट ही कहा जायगा । उपर्युक्त दोनों संग्रहों के रेखाचित्रों की कलात्मकता तथा चित्रात्मकता विशेष उल्लेखनीय है ।

---

1. सेठ गोविंद दास (मकदूम बख्श), रेखाएं और रेखाएं, पृ.62

देवेंद्र सत्यार्थी

देवेंद्र सत्यार्थी के रेखाचित्रों का संग्रह " रेखाएं बोल उठीं" 1949 में प्रकाशित हुआ । इस संग्रह में निबंधों के साथ-साथ अनेक रेखाचित्र भी संग्रहीत हैं । रेखाएं बोल उठीं", "सौंदर्य बोध", "आज मेरा जन्म दिन है", "रवींद्र नाथ ठाकुर" आदि इस संग्रह के उल्लेखनीय रेखाचित्र हैं । कला के हस्ताक्षर उनका दूसरा संग्रह है । इसमें बारह रेखाचित्र हैं । विविध क्षेत्र के कलाकार सत्यार्थी जी की तूलिका से जीवंत हो गए हैं ।

विष्णु प्रभाकर

प्रसिद्ध कहानीकार विष्णु प्रभाकर ने रेखाचित्र रचना के क्षेत्र में भी अपनी सफलता का परिचय दिया है । प्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित व्यक्तियों को केंद्र बनाकर उन्होंने अनेक रेखाचित्र खींचे । "जाने अनजाने" और "कुछ शब्द कुछ रेखाएं" उनके प्रसिद्ध रेखाचित्र संग्रह हैं । तिरुप्पति वेंट्टियार, किरणों का जादूगर, एक नेत्रहीन की दृष्टि : एक चित्र, महाप्राण निराला: एक संस्मरण, सबके ददा आदि "कुछ शब्द कुछ रेखाएं " के प्रमुख चित्र हैं । यह विशेष उल्लेखनीय है कि इस संग्रह का अंतिम चित्र उनका अपना चित्र है - "विष्णु प्रभाकर" अपनी निगाह में । "अष्टावक्र", विष्णु प्रभाकर का एक रेखाचित्र है । इसका एक चित्र यहाँ उद्धृत है -

"सजावियों की विशाल अट्टालिकाओं को जानेवाले मार्ग पर सौभाग्य के चिरसंगी दुर्भाग्य की तरह अनेक छोटी-छोटी अँधेरी और बदबूदार कोठरियाँ बनी हुई थीं। उन्हीं में से एक में वह विचित्र व्यक्ति रहता था जिसे संस्कृत पढ़े-लिखे लोग अष्टावक्र कहा करते थे। उसके पैर कवि की नायिका की तरह बल खाते थे और उसका शरीर हिंडोले की तरह झूलता था। बोलने में वह साधारण आदमी के अनुपात से तिगुना समय लेता था। वर्ण श्याम, नयन निरीह, शरीर एक शाश्वत खाज से पूर्ण, मुख लम्बा और वक्र, वस्त्र कोट से चिकटें, यह था उसका व्यक्तित्व और इसमें यदि कुछ कमी रह जाती थी तो उसे शीन के शटाके पूरा कर देते थे। इस आखिरी बात के लिए उसकी माँ अक्सर उसकी लानत-मलामत किया करती थी।"[1]

संकलनों के अलावा पत्रों में भी उनकी रचनाएं प्रकाशित हुई हैं।

जगदीशचंद्र माथुर

श्री॰ जगदीशचंद्र माथुर का रेखाचित्र संग्रह है "दस तसवीरें"। इसका प्रकाशन 1963 में हुआ। दस चित्रों के इस

1॰ विष्णु प्रभाकर - अष्टावक्र, रेखाएं और रेखाएं, पृ॰136

संग्रह में "जीवन-निर्माता अध्यापक : अमरनाथ झा, मतवाला कलाकार : शिशिर भादुड़ी, अफसी जो विलक्षण अपवाद था : पुरुषोत्तम मंगेशलाड, आदि समाज के विभिन्न क्षेत्रों के व्यक्तियों के चित्र संग्रहीत हैं। इस संग्रह के "प्राक्कथन" में उन्होंने लिखा है - "मेरा उद्देश्य महापुरुषों की गाथाएं गाना नहीं है। इन लेखों के नायक इतिहास के पृष्ठों पर अमर रहे या नहीं, पर उनके जीवन में मानव-जाति का अस्तित्व सार्थक होकर मुखरित हुआ था - इसमें संदेह नहीं।"[1] माथुर जी के "व्यवहार कुशल और संवेदनशील पण्डित अनंत सदाशिव अल्टेकर" इस प्रकार हैं -

> "लेकिन मैं गलती पर था। डॉ॰ अल्टेकर का मानस आलोड़ित होते मैंने देखा है। उस आलोड़न के प्रभाव में उनके समूचे व्यक्तित्व को प्रदीप्त और चलायमान होते भी मैं ने देखा है और यह चमत्कार कब होता था ? क्या किसी अन्तर्राष्ट्रीय अथवा राष्ट्रीय संकट के समय ? जी नहीं। क्या अपने बच्चों के विवाह-लग्न इत्यादि के अवसर पर ? तब भी नहीं। सन्तुलन और संयम की जंजीरें दो टूक होते मैंने देखीं उस दिन, जब वह मुझे बैशाली में अपने निर्देशन में की गयी खुदाई के स्थान दिखाने ले गये और सदियों पहले की एन॰बी॰पी॰ पाटरी, खिलौने, आभूषण इत्यादि सँवार-सँवार कर दिखाने लगे। जिस समय हम लोग उस स्थान पर पहुँचे, जहाँ उन्होंने चीनी यात्रियों के विवरण और अन्य प्राचीन वृत्तान्तों का व्योरेवार विश्लेषण कर

---

1. जगदीश चंद्र माथुर (प्राक्कथन) दस तसवीरें,

भगवान् बुद्ध की अस्थियों पर निर्मित प्राचीनतम स्तूप का काल के विस्मृत गह्वर में से अनावरण किया था, तब मुझे लगा, मानो जीवन भर का सन्तुलन उसी उल्लास के लिए तैयारी था, मानो किसी लम्बे शिशिर के शक्ति-संचय के उपरान्त ऋतुराज का वैभव बिखरा हो। उनकी आंखों में चमक थी और उनकी वाणी पाण्डित्य के स्तर से ऊपर उठकर मानो अपरा विद्या के लोक में विचरण कर रही थी।"[1]

श्री॰ जगदीश चंद्र माथुर ने श्री सुमित्रानंदनपंत को इस प्रकार चित्रित किया है -

"भोलेपन के साकार स्वरूप हुए भी पन्तजी अपने निराले ढंग में विनोदशील भी है। हम लोगों को उनके इस रूप की झलक कभी-कभी ही मिलती थी। कुछ वर्ष हुए पटना में एक साहित्य-प्रेमी सज्जन, जो सरकारी कर्मचारी भी है और सजन का बिहार हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के निकट-सम्बन्ध है, उनसे मिले। ये सज्जन लिखित साहित्य के अतिरिक्त मौखिक साहित्य के अथक, और अनवरत प्रणेता है, यानी बातें करना शुरू करते हैं तो रुकने का नाम नहीं लेते। पंतजी से लम्बी बैठक करने के बाद जब वे चले गये तो पंत जी ने कहा, "श्री .... जब बोलते हैं तो ऐसा जान पड़ता है कि कोई चक्की का पिसा आटा बारम्बार चक्की में डालता और पीसता जाता है।" ऐसा शिष्ट, नपा-तुला और ठीक बैठनेवाला व्यंग्य पंतजी ही कर सकते हैं।"[2]

---

1. जगदीशचंद्र माथुर - दस तसवीरें (द्वितीय संस्करण 1966) पृ॰95
2. जगदीशचंद्र माथुर - उभरी गहरा रेखाएं, पृ॰67

नगेन्द्र

प्रसिद्ध आलोचक डॉ॰ नगेंद्र एक अच्छे रेखाचित्रकार भी हैं। उनके निबंधों में नगेंद्र ने सुन्दर चित्र प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने स्वतंत्र रेखाचित्र भी लिखे। उनका प्रकाशन विभिन्न पत्रिकाओं में हुआ है। बीबी, सी॰वी॰ महाजन, ददा आदि उनके प्रसिद्ध रेखाचित्र हैं। ददा का व्यक्तित्व, नगेंद्र की दृष्टि में इस प्रकार है -

"उन्होंने मध्ययुग के ही संस्कार विरासत में पाए थे, परन्तु आधुनिक जीवन की गतिविधि को आत्मसात् करने केलिए उनके मन की स्फूर्ति अंत तक बनी रही। खाने में जूठे - सकरे का ध्यान उन्हें अंत तक रहा - पर जाति और वर्ण की क्षुद्र भेद-भावना से वे सर्वथा मुक्त हो चुके थे। रहन-सहन पर पुराने संस्कारों की छाप बराबर बनी रही, किंतु नए कायदे करीने अपनाने का चाव भी कम नहीं था। भावनावश हाथ का खद्दर पहनते थे और इस व्रत का आजीवन निर्वाह करते रहे पर मशीन के प्रति अबाध आकर्षण था संस्कार तो पुराण-युग में रमते थे, पर विवेक की दृष्टि वर्तमान पर केंद्रित थी, परिणामत: उनकी कल्पना और भावना जब-जब मध्ययुग के इतिहास या उससे भी पूर्व के पुराण-युग या और भी धुंध ले महाभारत रामायण-काल में विचरण करने जाती थी तो कवि का अपना देश-काल सदा साथ चलता था।"[1]

---

1. डॉ॰ नगेंद्र (ददा : महान व्यक्तित्व) आधुनिक निबंधावली, पृ॰89

डॉ॰ प्रभाकर माचवे

डॉ॰ प्रभाकर माचवे ने रेखाचित्र साहित्य में अपना स्थान बना लिया है । उनके अनेक रेखाचित्र पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं । "हंस" में वे लगातार लिखते रहे हैं । दानिश, जैनेंद्रकुमार, अज्ञेय आदि पर उन्होंने रेखाचित्र लिखे हैं । माचवे की दृष्टि में "अज्ञेय" का व्यक्तित्व इस प्रकार है -

> "{वात्स्यायन और अज्ञेय} ऊपर जो दो नाम बताये वे एक ही आदमी के हैं - एक खासे मोटे ताजे, कुछ पंजाबी गठन के, सौम्य भाव चेहरे के भले आदमी के ही ये दो नाम हैं जो सचमुच स्वभाव से "आग्नेय" हैं और "अज्ञेय" भी । .... शिल्प चित्रकार, सिपाही-विद्रोही, कवि-कहानीकार, संपादक-आलोचक, व्याख्याता-राजनीतिक कार्यकर्ता, प्रकृति और जीवन का सप्राण छाया-चित्रकार, "अज्ञेय" साहित्येतिहास-समीक्षक भी है ।"[1]

शुक्लजी, मुक्तिबोध, नेहरू, निराला, माखनलाल चतुर्वेदी, यशपाल, रामकुमार वर्मा, राजेंद्र ऋषि, गोपालसिंह नेपाली आदि के जीवंत चित्र उन्होंने उतारे हैं । हंस, वीणा आरती, संगम, धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान, नई दुनिया, आदि पत्रिकाओं में उनके रेखाचित्र लगातार प्रकाशित हुए हैं ।

---

1. प्रभाकर माचवे {अज्ञेय : जितने कि वे मुझे ज्ञेय हुए} हंस : रेखाचित्र विशेषांक, मार्च 1939

उपेन्द्रनाथ अश्क

कथा साहित्य, नाटक, निबंध तथा कविता के क्षेत्र में "अश्क" का नाम चर्चित है । रेखाचित्र रचना में भी वे निपुण है । उनके निबंधों में अनेक रेखाचित्रात्मक संदर्भ पाए जाते हैं । "ज्यादा अपनी कम पराई", "मंटो मेरा दुश्मन", आदि उनके संस्मरणात्मक रेखाचित्रों के संकलन हैं । "मंटो मेरा दुश्मन" में मंटो का चित्र इस प्रकार है -

> "मंटो की और मेरी प्रकृति में आकाश-पाताल का अंतर था - वह लड़कपन ही से दीनू या फजलू कुम्हार की दुकानों के ऊपर चौबारों में जमने वाली जुए की महफिलों में शामिल होता था और रात को स्वप्न भी पलाश ही के देखता था और मैंने कभी ताश को हाथ भी नहीं लगाया । वह रिन्देबलानोश" था और मैं ने शराब तो दूर रही, सिगरेट भी पहली बार 1942 में पिया, जब मैं बत्तीस वर्ष का था । कटरा धुन्नियाँ हो, हीरा मंडी हो या फॉरस रोड - अमृतसर, लाहौर या बम्बई - जहाँ-जहाँ वह रहा "उस बाज़ार" की उसने खूब सैर की थी और मैं ने उधर झाँककर भी नहीं देखा । बात यह है कि माँ ने बचपन ही से इन तीनों बातों के प्रति मेरे मन में असीम घृणा पैदा कर दी थी । पिता जी ने इन तीनों क्षेत्रों में जो कीर्ति अर्जित की थी, मेरा विचार है कि हमारे कुटुम्ब की भावी तीन पीढ़ियाँ इस सिलसिले में कुछ किये बिना ही उस पर गर्व कर सकती है ।

उनके इन्हीं कारनामों की वजह से घर की जैसी स्थिति हो गयी और हमने जिस दारिद्र्य में बचपन के दिन काटे, उसने रक्त को कुछ ऐसा जमा दिया कि आज, जब मैं सिगरेट या शराब को उतना बुरा नहीं समझता, कभी खुल-खेलने का हौसला नहीं होता । पिता जी, जब एकाध पैग चढ़ा लेते थे, प्राय: नारा लगाते थे - "कौड़ी न रख कफन केलिए" । वे वर्तमान में जीते थे और उन्होंने कभी भविष्य की चिन्ता नहीं की । इसी की प्रतिक्रिया स्वरूप मैंने लड़कपन ही में जीवन का सारा ढांचा बना लिया था - और मंटो को मेरे इस संयम, हिसाब-किताब, प्लानिंग, मितव्ययता और ठहराव से घृणा थी ।"[1]

अश्क का तीसरा संकलन है "रेखाएं और चित्र" । इसमें सत्रह रचनाएं संकलित हैं । 1955 में इसका प्रकाशन हुआ था । इसमें उन्होंने प्रेमचंद को इस प्रकार देखा है -

"मैं प्रेमचन्द और देहात को अलग-अलग नहीं समझता । एक की याद आते ही मेरे सामने दूसरे का चित्र खिंच जाता है और यद्यपि मुझे उनके समीप रहने का सुअवसर प्राप्त नहीं हुआ और मैं नहीं जान सका कि वे बाह्रूप से कितने देहाती थे, पर उनकी अमर कृतियों को देखकर, उनका अध्ययन करके मैं इसके अतिरिक्त किसी नतीजे पर नहीं पहुंच सका कि देहात की रूह उनकी

---

1. उपेंद्रनाथ अश्क - मंटो मेरा दुश्मन, प्रथम संस्करण 1956] पृ.28

नस-नस में बसी हुई थी । शहरों में रहते हुए भी वे देहात में साँस लेते थे, शहरों में रहते हुए भी वे देहात की उन्नति और प्रगति के विषय में सोचते थे । वे जानते थे, भारत देहात में बसता है । उसकी स्वतन्त्रता और उन्नति देहातियों की स्वतंत्रता और उन्नति पर निर्भर है । जब तक देहाती, अंध-श्रद्धा, झूठी मर्यादा, अशिक्षा, जहालत और कर्ज के बोझ तले दबे हुए हैं, फजूल खर्ची और दुर्व्यसनों की बेड़ियों में जकडे हुए हैं, भारत भी स्वतंत्र नहीं हो सकता - दासता की बेड़ियों में जकड़ा रहेगा ।"[1]

सुमित्रानंदन पंत

प्रसिद्ध कवि पंत ने अनेक सुंदर रेखाचित्रों की रचना भी की है । आकाशवाणी के प्रसारण हेतु लिखे गए तथा विभिन्न पत्रिकाओं में उनके अनेक रेखाचित्र प्रकाशित हुए हैं । प्रकृति का अंचल का एक सुंदर चित्र यहाँ प्रस्तुत है -

"आँखें मूंद कर जब अपने किशोर जीवन की छाया-वीथी में प्रवेश करता हूँ तो नीली प्लेटों से पटी, ढालू छत के पहाडी घर का चहारदीवारी से घिरा छोटा-सा आँगन पलकों में नाचने लगता है । एक ओर पत्थर का

---

1. उपेन्द्रनाथ अश्क - रेखाएं और चित्र, (प्रथम संस्करण) पृ. 125

पक्का चबूतरा, दूसरी ओर छोटा-सा मन्दिर है । चबूतरे पर बैठा मैं पढ़ता हूँ और काँस की टेरी-सी गोरी बूढी दादी की गोद में सिर रख कर, साँझ के समय, दंतकथाएँ और देवी-देवताओं की आरती के गीत सुनता हूँ । बड़ी परिहासप्रिय है मेरी दादी । उनकी क्षीण दंतहीन कंठध्वनि - "भाई के मंदिरवा में दीपक बारूँ "या" हो रही जै-जैकारी शिवा तेरे बाके भवन में" पहाडी झुटपुटे में अब भी नींद लानेवाली झींगुर की झनकार-सी गूँज रही है । आँगन के उस छोटे-से मन्दिर में कोई प्रतिमा या मूर्ति नहीं है । बचपन का जिज्ञासा-भरा मन छोटे-से द्वार से बार-बार भीतर बैठ कर धुंधलके में कुछ टटोलता हुआ-सा, घबड़ा कर बाहर निकल आता है । एक ओर दो आड़ू के पेड हैं - एक मेरा, दूसरा मंझले भइया का । आड़ू की डालें हलकी ललहौंहीं कलियों से लद जाती हैं और आँखें एकटक उनके फालसई आकाश में खो जाती है । चहार-दीवारी के बाहर हरे भरे प्रसार और नीली रुपहली ऊँचाइयाँ हैं, जिनमें मेरा मन बहुत रमता है । बाईं ओर लम्बे-चौडे, गहरे हर रंग के मखमली कालीन-सी फैली, कस्तूर की जादू की घाटी है । सामने गेरुवी मिट्टी की पहाडी में कई टेढी-मेढी पगडंडियाँ साँप की केंचुली-सी पडी कल्पना को भटकाती हैं । पहाडी के ऊपर कोपलों का मर्मर करता हुआ रंग-बिरंगा अन्तरिक्ष ... बाँझ के वृक्षों की रुपहली बनावटी और ऊँचे खंभों पर खड़ा चीड का वन है । अहाते के बाहर ही प्रहरी-सा ऊँचा देवदारु, आसमान की ओर हरियाली का

फव्वारा सा फूट पडा है । इसकी शोभा-गरिमा का क्या कहना । यह धनी हरीतिमा का निरंतर कांपता हुआ एक पर्वत-शिखर ही तो है । इसके पके फलों से जब पीली-पीली बुकनी झरकर हवा के आंचल को रंग देती है, तब तो मन त्योहार मनाने लगता है, एक अजीब-सी खुशी नस-नस में दौडने लगती है । किन्तु इन सबसे ऊपर, बहुत ऊपर, और बहुत ऊँचा "स्थित: पृथिव्या इव मानदण्ड:", स्वयं नगाधिराज देवात्मा हिमालय, अपने दूर दिगंतव्यापी पंख फैलाये, महत् शुभ्र राजमराल की की तरह नि:सीम में निर्वाक् उड्डता हुआ-सा, दृष्टि को आश्चर्यचकित तथा मन को आत्म-विस्मृत कर देता है ।"[1]

रामधारी सिंह "दिनकर"

उच्चकोटि के रेखाचित्र उतारने में कवि "दिनकर" सिद्धहस्त हैं । "वट पीपल" उनका निबंध संग्रह है । इसमें अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंग भी निहित हैं । उनके संस्मरणात्मक रेखाचित्रों का संग्रह है "संस्मरण और श्रद्धांजलियां" । इसमें सत्रह संस्मरणात्मक रेखाचित्र संकलित हैं । डॉ॰ लक्ष्मीनारायण "सुधांशु" का एक चित्र इस प्रकार है -

---

1. सुमित्रानंदन पंत (प्रकृति का अंचल) रेखाएं और रेखाएं, पृ॰66

"सुधांशु जी के मिजाज में सादगी के साथ रईसी कूट-कूट कर भरी है । वे चादर और टोपी नहीं रखते हैं, मगर उनका व्यक्तित्व इतना भव्य है कि केवल धोती-कुरते में भी वे देवोपम दिखाई देते हैं । किंतु सुस्वाद, भोजन के वे रसिक हैं और एक समय वे भोजन भट्ट भी रहे थे। अब भोजन की मात्रा बहुत कम हो गयी है, लेकिन स्वाद को जीतने की चिंता उन्हें तनिक भी नहीं है । शरीर में अब रोग उत्पन्न हो गए हैं । उन्हें मधुमेह भी है, रक्तचाप भी और पैरों में गठिया भी । आंख की बीमारी तो है ही । लेकिन भोजन में संयम वे अब भीनहीं बरसते । यहाँ तक कि मधुमेह केलिए भी कोई दवा उन्होंने अब तक कबूल नहीं की है । और ईश्वर की ऐसी कृपा कि मिठाइयों में रस गुल्ले और फलों में आम के वे एक ही प्रेमी हैं ।"[1]

ओंकार शरद

ओंकार शरद प्रसिद्ध पत्रकार हैं । कथा साहित्य में भी वे निपुण हैं । उन्होंने अनेक संस्मरण तथा रेखाचित्रों की रचना भी की है । उनके सत्रह रेखाचित्रो का संग्रह है "लंका महाराजिन" 1949 में यह प्रकाशित हो गया । "लंका महाराजिन", "निशानियाँ", "लोटू", "नर नाहर निराला" आदि उनके रेखाचित्र उल्लेखनीय हैं ।

---

1. रामधारी सिंह "दिनकर" - डॉ.लक्ष्मीनारायण सुधांशु; संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ.118

ओंकार शरद का 1964 में प्रकाशित संग्रह है "देश-काल-पात्र" । इसमें "शिवपूजन सहाय" का एक मार्मिक रेखाचित्र भी संग्रहीत है ।

"नई धारा" पत्रिका में शरद के रेखाचित्र क्रमिक रूप से प्रकाशित होते रहे हैं ।

क्षेमचंद्र सुमन

क्षेमचंद्र सुमन के 31 चित्रों का संग्रह "रेखाएँ और संस्मरण" 1975 में प्रकाशित हो गया । इसके प्रारंभ में लेखक ने लिखा है - "प्रस्तुत पुस्तक में कुछ ऐसे दिवंगत आचार्यों, साहित्यकारों, नेताओं, पत्रकारों और कवियों के जीवन की ज्वलंत रेखाएँ और मार्मिक संस्मरण आकलित हैं, जिनसे मेरा निकट का परिचय रहा है या जिनसे मैं ने अपनी साहित्य यात्रा में प्रचुर प्रभाव ग्रहण किया है ।[1] स्वामी शुद्ध बोध तीर्थ बदरीदत्त जोशी, पं॰पद्मसिंह शर्मा, आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ, पद्म सिंह शर्मा कमलेश आदि इस संग्रह के कुछ चित्र हैं । "कमलेश" का एक चित्र इस प्रकार है -

> "चौमुखे दीपक की आलोकमयी आभा - जैसी अलौकिक प्रतिभा के धनी-ओजस्वी वक्ता, तपस्वी साधक, मनस्वी विचारक, वर्चस्वी कवि, मूक जन-सेवक नवीन विचारों के संवाहक और को कलम की नोक पर उतारने वाले सजग साहित्यकार ।

---

1. क्षेमचंद सुमन (निवेदन) रेखाएँ और संस्मरण (1975)

> मोम और इस्पात, कंचन और कसौटी, कुसुम और कुलिश, ज्योत्स्ना और ज्वालामुखी यह कुछ तत्व हैं, जिनसे डॉ॰ पद्मसिंह शर्मा "कमलेश" के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ था ।"[1]

हरिशंकर परसाई

श्री॰ हरिशंकर परसाई अपनी व्यंग्य रचनाओं केलिए प्रसिद्ध हैं । उनका रेखाचित्र संग्रह है "तिरछी रेखाएं" । अनेक साहित्यिकों के सुंदर चित्र इसमें संग्रहीत हैं । मुक्तिबोध का एक चित्र इस प्रकार है -

> "मैं कुछ लिखने लगा था । वे देखते रहते थे । मित्रों ने भी बताया होगा । मैं नागपुर शिक्षक-सम्मेलन के सिलसिले में गया था । मित्र मुझे उनसे मिलाने शुक्रवारा स्थित (शायद) उनके मकान पर ले गये सच कहूं मुझे मुक्तिबोध से डर लगता था । मित्रों, प्रशंसकों में वे "महागुरू" कहलाते थे । एक आतंक मेरे ऊपर था । मैं अपने अज्ञान में सिकुडा-सिकुडा पहुंचा । वे दरी पर पालथी मारे बैठे थे । पासपानी का लोटा और उस पर प्याला । हम लोग दरी पर बैठ गए । मुझसे बोले - आइए साहब ! निहायत औपचारिक दो-चार मामूली बातें हुई । यह जानकर कि मैं शिक्षकों के श्रम-संगठन के

---

1. क्षेमचंद सुमन (निवेदन) रेखाएं और संस्मरण (1975), पृ॰150

काम से आया हूँ, उन्होंने आँखें फाड़कर गौर से देखा। मुझसे न लिखने की बात की, न कोई तारीफ। चाय ज़रूर पिलाई। आगंतुक के बहाने खुद चाय पीने का मौका वे चूकते नहीं थे। यह मुलाकात बहुत सूखी रही। मुक्तिबोध मुझे शंका से देख रहे थे। जांच रहे थे। वे एकदम गले किसी से नहीं मिलते थे। प्रकृति से वे शंकालु थे। किसी को जैसा-का-तैसा स्वीकार नहीं करते थे। बाद के कटु अनुभव और अकेलेपन ने यह शंका की प्रवृत्ति और बढ़ा दी थी। राजनांदगांव में तो वे कई लोगों की कल्पना में न जाने कैसी, कैसी तस्वीरें बनाकर परेशान हुआ करते थे।"[1]

परसई के रेखाचित्र उनकी व्यंग्य रचनाओं के समान ही मार्मिक हैं।

महेंद्र भटनागर

श्री. महेंद्र भटनागर कविता के क्षेत्र में प्रसिद्ध हैं। रेखाचित्र रचना में भी उन्होंने सफलता हासिल की है। उनका रेखाचित्र संग्रह है - "विकृत रेखाएं धुंधले चित्र"। इसमें समाज की बुराईयों पर चोट पहुँचानेवाले व्यंग्य-रेखा चित्र संग्रहीत हैं। "नारी का विद्रोह", "एक रात की बात", "मुसलमान दीक्षा है", "जन सेवक" आदि इस संग्रह के उल्लेखनीय रेखाचित्र हैं।

---

1. हरिशंकर परसाई - तिरछी रेखाएं प्रथम संस्करण, पृ.55

विनोदशंकर व्यास

श्री॰ विनोदशंकर व्यास का रेखाचित्र संग्रह है "प्रसाद और उनके समकालीन । इस संग्रह में साहित्यकारों के चित्र ही संग्रहीत हैं । इसका प्रकाशन 1960 में हुआ । निराला, प्रसाद आदि साहित्यिक उनकी तूलिका से सप्राण हो जाते हैं ।

प्रेमनारायण टंडन

अपने सात रेखाचित्रों के संग्रह के रूप में डॉ॰प्रेमनारायण टंडन ने "रेखाचित्र" का प्रकाशन 1959 में किया । "कूकी", "रोगी", "मैं पत्रकार हूं" आदि समाज विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिनिधि इस संग्रह में चित्रित हैं ।

सत्यजीवन वर्मा "भारतीय"

1949 में "भारतीय" ने "शब्द-चित्रावली" शीर्षक से एक रेखाचित्र संग्रह का प्रकाशन किया । गृहिणी, सामाजिक दंपति, बनारसी, भाई साहब आदि अनेक अच्छे चित्र इस संग्रह में उपलब्ध हैं ।

वृन्दावनलाल वर्मा

सुप्रसिद्ध हिन्दी उपन्यासकार वृंदावनलाल वर्मा रेखाचित्र रचना में भी सफल रहे हैं। अपने उपन्यासों में उन्होंने सफलता पूर्वक रेखाचित्र कला का सन्निवेश किया। व्यक्तियों तथा प्रकृतिक दृश्यों के चित्रण वृन्दावनलाल वर्मा ने रेखाचित्र की शैली में की है।

इंद्र विद्यावाचस्पति

श्री॰ इंद्रविद्यावाचस्पति में "मैं इनका ऋणी हूं" निबंध संग्रह में अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंग उपलब्ध हैं। इस दृष्टि से तिलक, बापू, मोतीलाल नेहरू, हकीम अजमल खाँ, आदि उल्लेखनीय हैं।

शांतिप्रिय द्विवेदी

श्री॰ शांतिप्रिय द्विवेदी एक संस्मरण संग्रह 1946 में "पथचिह्न" शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसमें उनके समकालीन साहित्यिकों के चित्र उभारे गये हैं। उनका दूसरा संग्रह है "स्मृतियाँ और कृतियाँ"। इस संग्रह में दस संस्मरणात्मक रेखाचित्र संकलित हैं।

गंगाप्रसाद पांडेय

विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से श्री॰गंगाप्रसाद पांडेय ने रेखाचित्र के विकास में अपना योगदान दिया है । हंस, आजकल, लहर, आदि पत्रिकाओं तथा आकाशवाणी में उनके रेखाचित्र प्रकाशित हुए हैं ।

सियारामशरण गुप्त

श्री॰ सियाराम शरण गुप्त की ख्याति कविता और निबंध लेखन में है । "झूठ-सच" उनके निबंधों का संग्रह है । यह 1966 में प्रकाशित हुआ । इसके निबंधों में रेखाचित्र की अनेक विशेषताएँ पाई जाती हैं । इस दृष्टि से "मुंशी अजमेरी", "शुष्को वृक्षः", "घूंघट" आदि उल्लेखनीय हैं ।

राहुल सांकृत्यायन

बहुमुखी साहित्यकार पं॰राहुल सांकृत्यायन ने अपने यात्रा साहित्य, संस्मरण, निबंध आदि में रेखाचित्र कला को अपनाया है । "बचपन की स्मृतियाँ, जिनका मैं कृतज्ञ हूं, मेरे असहयोग के साथी" आदि में अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंग उपलब्ध हैं ।

हज़ारी प्रसाद द्विवेदी

आलोचना तथा निबंध साहित्य के क्षेत्र में हज़ारी प्रसाद द्विवेदी का नाम अविस्मरणीय है । उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह हैं "अशोक के फूल", "कल्पलता", "कुटज" आदि । उनके निबंधों में चित्रात्मकता के प्रर्याप्त नमूने उपलब्ध है । इस दिशा में उनका "गुरुदेव" तथा "एक कुत्ता और एक मैना" आदि विशेष उल्लेखनीय हैं ।

भगवतशरण उपाध्याय

यात्रा साहित्य में प्रसिद्ध भागवतशरण उपाध्याय के रेखाचित्रों का संग्रह है "वो दुनिया" । इस ग्रंथ में उन्होंने उनकी अमरीका यात्रा का सजीव चित्रण किया है । अपने विश्व प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों पर उन्होंने व्यंग्यात्मक चित्रण प्रस्तुत किया है । "सर जफरुल्ला खाँ", "सर ग्लैडविन जैब" आदि उनके सफल रेखाचित्र हैं ।

अन्य रेखाचित्रकारों का योगदान

रेखाचित्र एक ऐसी गद्य विधा है जिसमें प्राय: सभी साहित्यकारों का योगदान जाने-अनजाने से होता है । पात्रों के चरित्र-चित्रण, व्यक्तित्व चित्रण, प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण, नाटकीय प्रसंगों का चित्रण आदि के दौरान लेखक को रेखाचित्र की

प्रवृत्तियाँ प्रसंगवश स्वीकार करनी पड़ती हैं । इसी प्रकार निबंधों तथा संस्मरणों में रेखाचित्र की प्रवृत्तियों को समाविष्ट करनेवाले कतिपय लेखक भी होते हैं । ऐसे भी अनेक रेखाचित्रकार हैं जिन्होंने पत्र-पत्रिकाओं में अपने रेखाचित्र प्रकाशन करके इस विधा के विकास में अपना योग दिया है ।

श्री॰ शिवचंद नागर, गणेश वासुदेव मावलंकार, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, रामनाथ सुमन, श्रीप्रकाश आदि ने अपने आलोचनात्मक निबंधों के माध्यम से रेखाचित्र रचना में सफलता हासिल की है । "महादेवी : विचार और व्यक्तित्व" में नागर ने महादेवी के व्यक्तित्व पर अच्छा रेखाचित्र प्रस्तुत किया है । "मानवता के झरने" में मावलंकर ने बंदी जीवन पर मार्मिक रेखाचित्र खींचा है । बख्शी के रामलाल पंडित", "प्रेमचंद", "महावीर प्रसाद द्विवेदी" आदि में अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंग मौजूद हैं । "हंस" में प्रकाशित "बाबूराव विष्णु पराड़कर" रामनाथ सुमन का एक सफल रेखाचित्र है ।

जनार्दन प्रसाद झा "द्विज" (बाबू श्याम सुंदर दास) बलराज सहनी (आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी), गंगाप्रसाद पांडेय (दस्यु, रेखाचित्र, हरिऔध), रायकृष्णदास (प्रतीक-प्रवास) कृष्णानंद गुप्त (गणेशशंकर विद्यार्थी) आदि ने विभिन्न पत्रिकाओं तथा संकलनों के माध्यम से रेखाचित्र कला में अपनी कुशलता का परिचय दिया है । भदंत आनंद कौशल्यायन के "रेल के टिकट" और "जोलिखना पड़ा", यशपाल का "हम ने भी इश्क किया था," उदयशंकर भट्ट का "प्रो॰ माधवी प्रसाद", अमृतलाल नागर का

"अब न कहूँगी तुझे पतों फल", डाक्टर रामविलास शर्मा के "परसों के मिसिर", और "निराला", पहाडी का "आखिरी स्केच", अमृतराय का "रेल की खिड़की से" आदि उल्लेखनीय और सफल रेखाचित्र हैं । लक्ष्मीचंद जैन के कुछ रेखाचित्र "नए रंग नए ढंग में बिखरे पडे हैं ।

"भातजी", "प्रो॰ मिचलू", आदि रामकुमार भ्रमर के प्रमुख रेखाचित्र हैं । महावीर त्यागी का संस्मरण-संग्रह है "मेरी कौन सुनेगा" । चौदह संस्मरणों के इस संग्रह में अनेक रेखाचित्र भी शामिल हैं । यशपाल जैन का संस्मरणात्मक रेखाचित्र है "जीवन और प्रतिभा के धनी" । श्री अविनाश चंद्र की कहानी" 120 सैकिंड" में अनेक रेखाचित्रात्मक प्रसंग उपलब्ध हैं ।

श्री॰ राजेन्द्रलाल हांडा (दिलीप भंडारी), माखनलाल चतुर्वेदी (साहित्य देवता), लक्ष्मीकांत भट्ट (श्रद्धेय टंडन जी), अक्षय कुमार जैन (दूसरी दुनिया", "ब्रिटेन में चार सप्ताह" आदि में स्थानों के चित्र), बैकुंठनाथ मेहरोत्रा (एक्सीडेंट), मुक्तिबोध (नया खून" साप्ताहिक के रेखाचित्र), शमशेर सिंह नरूला (मूक नहीं यह पत्थर), अनंत गोपाल शेवडे (तीसरी भूख संग्रह), रामगोपाल विजय वर्गीय (सोनिया), मदन वात्स्यायन (कवि प्रिया", नमस्तस्यै नमस्तस्यै), विष्णु अंबालाक जोशी (कुंजडा) भिक्खु (मास्टर मोशाय) कृष्णा सोबाती (अस्पताल), गोपीकृष्ण गोपेश (सावनी-सावनी सा व्यक्तित्व), भवानी दयाल सन्यासी (प्रवासी की आत्मकथा" में गांधी, दीनबंधु एन्ड्रयूज़, तिलक, गोखले आदि), श्रीमति कमला रत्नम (भारतीय आदर्श पर अडिग एक निष्ठामयी नारी), शिवानी "गुरुदेव और उनका

आश्रय), रसिक बिहारी ओझा (सुरतिय न बिसरे" संग्रह), बी.जी. वैशंपायन (अमिट रेखाएं में संकलित आजादी की तीर्थयात्रा का वर्णन), सुरेंद्रनाथ दीक्षित (पंडितजी), मछिंद्रनाथ (घासवाली), अमरनाथ (खंडहर), तेजबहादुर चौधरी (सुखी बेल) कुंतल गोयल (कुछ रेखाएं : कुछ चित्र संग्रह), शिवचंद प्रताप (बोलती तस्वीरें), कृष्णा हठी सिंह (बोलती तस्वीरें" संग्रह), धर्मेंद्र गुप्त (व्यक्ति, व्यक्ति और व्यक्ति संग्रह, किशोरीदास वाजपेयी (रेखाचित्र) आदि भी रेखाचित्र के विकास की दृष्टि से उल्लेखनीय नाम हैं ।

रेखाचित्र के विकास में पत्रिकाओं की भूमिका

पत्र-पत्रिकाएं हमेशा साहित्य तथा विभिन्न विधाओं के विकास में सबसे महत्वपूर्ण योगदान दिया करती है । रेखाचित्र के उद्भव और विकास में प्राय: सभी पत्रों ने अपना योगदान दिया है । उनमें अनेक पत्रिकाओं के रेखाचित्र विशेषांक भी उल्लेखनीय हैं ।

"हँस"

1939 में "हँस" का रेखाचित्रांक प्रकाशित हो गया । रेखाचित्र का विकास इस समय तक काफी मात्रा में नहीं हुआ था । फिर भी यह अंक बहुत सफल माना जाता है । इसकी संपादक मंडली में विभिन्न भारतीय भाषाओं के विद्वान शामिल थे । प्रमुख हिन्दी रेखाचित्रकारों के साथ-साथ बंगला, मराठी, गुजराती, तमिल, कन्नड, उर्दू आदि भाषाओं के श्रेष्ठ रेखाचित्रकारों ने हंस रेखाचित्रांक में अपनी रचनाएं प्रकाशित की हैं ।

"मधुकर"

"मधुकर" का रेखाचित्र विशेषांक 1946 में प्रकाशित हुआ। इसका संपादन श्री॰ बनारसीदास चतुर्वेदी ने किया। देश विदेश के विख्यात लेखकों के रेखाचित्र इस के माध्यम से प्रकाशित हुए। रामवृक्ष बेनीपुरी, पं॰ सुंदरलाल, ए॰जी॰ गार्डिनर, श्रीराम शर्मा आदि की रचनाएं इसमें शामिल हैं।

विशाल भारत

श्रीराम शर्मा के संपादकत्व में 1959 में "विशाल भारत" का शहीद अंक प्रकाशित किया गया। इसमें शहीदों के जीवन, चरित्र और व्यक्तित्व पर अनेक रेखाचित्र प्रस्तुत किए गए हैं। श्रीराम शर्मा, बनारसी दास चतुर्वेदी, मन्मथ नाथ गुप्त, हरिशंकर शर्मा, आदि के रेखाचित्र इसमें प्रकाशित हुए हैं।

नई धारा

श्री॰ उदयराजसिंह के संपादकत्व में "नई धारा" बेनीपुरी स्मृति अंक का प्रकाशन 1969 में हुआ। बेनीपुरी के बाह्य तथा आंतरिक व्यक्तित्व को व्यंजित करनेवाले अनेक चित्र इसमें उपलब्ध हैं। अजित नारायण सिंह "तोमर", "उदयराज सिंह आदि अनेक जाने-माने लेखकों की रचनाएं इसमें संकलित हैं।

नया पथ, आजकल, रूपाभ, समाज, कहानी, प्रतीक, सरिता, कादंबिनी, हिंदुस्तानी साप्ताहिक, दस्तावेज, आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने रेखाचित्र विधा के विकास तथा उत्कर्ष में अपना योगदान दिया है।

अध्याय - दो

महादेवी वर्मा का रचना व्यक्तित्व

अध्याय - दो

महादेवी वर्मा का रचना व्यक्तित्व

गद्यकार की अपेक्षा हम महादेवी वर्मा के कवयित्री रूप से अधिक परिचित हैं। छायावाद-मंदिर के चार महान खंभों में एक रहस्यवादी पृष्ठभूमि पर बनाया गया है। उसकी प्रत्येक शिला महादेवी के प्रेम, विरह, दुख, वेदना, दर्द आदि से सिक्त हैं। किसी अनदेखे प्रेमी से मिलन की इच्छा का भार उनमें महसूस होता है। किसी कठोर तापसी की भाँति महादेवी उसी तपस्या में लीन है। महादेवी के "आँसू के निर्झर" दुख के पद छू झर-झर बहते हैं।[1] वे अपने उर में "आँसुओं का कोष"[2] लेकर हमारे सामने आती हैं। यह रूप उनके कवि व्यक्तित्व का सर्वस्वीकृत पक्ष है।

---

1. महादेवी वर्मा - रजत रश्मियों की छाया में, रश्मि। षष्ठ संस्करण 1962, साहित्य भवन, इलाहाबाद।
2. महादेवी - विरह का जलजात जीवन, नीरजा, द्वितीय संस्करण 1960, भारती भंडार, इलाहाबाद।

रंगमय जीवन

आँसू के मसि बनानेवाली महादेवी का जीवन कभी दुखपूर्ण वातावरण में नहीं रहा । होली के दिन प्राय: सभी भारतवासी रंगों में रंगकर नाचते हैं । 1907 के होली के दिन उत्तरप्रदेश के फरुखाबाद में महादेवी का जन्म हुआ । रंगों के त्योहार में जन्मी, महादेवी वर्मा रंगों की रंगी बन गयीं । समता का त्योहार होली ने महादेवी में समता की भावना भर दी । त्योहार के दिन जन्म लेना संयोग मात्र है । लेकिन महादेवी वर्मा के व्यक्तित्व में त्योहार ने रंगों के साथ अन्य कई बातें जोड दीं । "जन्म दिन की रंगमयता और सार्वजनीनता उनके व्यक्तित्व और कृतित्व में सन्निहित है । जीवन एवं साहित्य के पट में इतने विभिन्न रंगी सूत्रों का सम्मेलन सहज ही नहीं मिलता । रहस्यवादी कवि, यथार्थवादी गद्यकार तथा समन्वयवादी आलोचक होने के साथ-साथ वे अद्वितीय रेखाचित्रकार, संस्मरण-लेखिका, ललित निबन्धकार, उच्चकोटि की चित्रकर्त्री और परम प्रबुद्ध समाज तथा राष्ट्र सेविका भी हैं । उनके रचनात्मक कार्यों के प्रतीक प्रयाग महिला विद्यापीठ और साहित्यकार संसद के अतिरिक्त अन्य अनेक संस्थाएँ और पाठशालाएँ हैं । विशेषता यह है कि इन सभी क्षेत्रों में उनके व्यक्तित्व की अखण्डता सर्वथा अक्षुण्ण है । इस दृष्टि से वे केवल भारत में ही नहीं, विश्व भर में इतनी विराट और व्यापक प्रतिभा की अकेली कलाकार है ।"[1]

---

1. गंगा प्रसाद पाण्डेय जीवन झाँकी, महीयसी महादेवी, पृ.23 1969, लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली ।

महादेवी के घर में तो किसी भी चीज़ की कमी कभी नहीं थी । नारी का जन्म जिस समाज में अवांछित समझा जाता था, उस समाज में महादेवी का जन्म "कुलदेवी दुर्गा का विशेष अनुग्रह" माना गया - "महादेवी जी माँ-बाप की पहली संतान हैं । आज के प्राय: साठ वर्ष पहले तो प्रथम कन्यालाभ निश्चित रूप से शुभ या सुखद नहीं माना जाता था । सौभाग्य से इनका जन्म बडी प्रतीक्षा और मनौती के बाद हुआ था । बाबा ने इसे कुलदेवी दुर्गा का विशेष अनुग्रह माना और आदर प्रदर्शित करने केलिए नाम रखा-महादेवी । इन्होंने अपने नाम को अपने व्यक्तित्व और कृतित्व से सफल-सार्थक बना दिया । साकेतकार की यह उक्ति - सौ सौ पुत्रों से अधिक जिन की पुत्रियाँ पूतशीला वास्तव में राजा जनक की बेटियों केलिए जितनी उपयुक्त थी उतनी ही श्री गोविंद प्रसाद की पुत्री महादेवी केलिए भी ।"[1]

साधारण बच्चों की भाति खिलौनों के प्रति महादेवी का आकर्षण नहीं था । गृहकार्य में भी उनकी रूचि नहीं थी । वे कोयले से दीवारों पर चित्र खींचती थी । यह उनके चित्रकर्त्री रूप का पहला सोपान है । प्रकृति से महादेवी का प्रेम भी बचपन में प्रकट था । फूल, तितली आदि उनको पसंद थे ।

महादेवी की शिक्षा

जब महादेवी बडी हो गयी तो पिताजी ने उन्हें स्कूल भेजना चाहा । लेकिन उनकी माँ उन्हें घर का काम सिखाना

---

1. गंगा प्रसाद पाण्डेय - भूमिका, आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि, महादेवी वर्मा, प्रथम संस्करण 1968, राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली ।

चाहती थी । घर की शिक्षा ज़ोर से हुई - आँगन की पुताई, गेहूँ फटकना, बडे, पकौडी, कढी, पराठा, रोटी, तरकारी आदि बनाना । "और वे सब काम इतनी सहजता तथा दायित्व के साथ पूरा कर देती कि हम लोगों की प्रशंसा हो जाती ।"[1] महादेवी की कार्यकुशलता जब बगीचे के फूलों तथा पडोस के घरों में पहुँचने लगी तो माँ ने उन्हें शिक्षा केलिए मिशन स्कूल में भेज दिया ।

1912 में मिशन स्कूल में महादेवी की शिक्षा प्रारंभ हुई । इसके अलावा घर पर ही हिन्दी, उर्दू, संगीत तथा चित्रकला के अध्ययन का प्रबन्ध किया गया । कुछ ही दिनों में यह व्यक्त हो गया कि बातचीत और पढाई में वे समान रूप से प्रवीण हैं । महादेवी लडाकू और पढाकू थीं । "लडाकू रूप उनके विद्रोह और नारी विषयक निबन्धों में मुखरित है और उनका पढाकू रूप तो जगा-जाहिर है ही ।"[2] उनकी तीव्र बुद्धि, पढने में रुचि आदि के कारण सब कुछ उन्होंने जल्दी सीख लिया ।"[3]

नौ वर्ष की आयु में महादेवी का विवाह कर दिया था । इस कारण एक वर्ष केलिए उनकी पढाई स्थगित हो गयी । क्योंकि श्वसुर लडकियों की स्कूली पढाई का विरोधी था । साल-भर मैं

---

1. श्यामा देवी सक्सेना - बचपन के दिन, महादेवी संस्मरण ग्रंथ संपादक - पंत और शांति जोशी

2. गंगा प्रसाद पाण्डेय - जीवन झाँकी, महीयसी महादेवी, पृ.25

3. श्यामादेवी सक्सेना - बचपन के दिन, महादेवी संस्मरण ग्रंथ ।

श्वसुर की मृत्यु हो गयी ।[1] अगले साल पढाई फिर से शुरू हुई । 1921 में क्रास्थवेट कालेज प्रयाग से उन्होंने मिडिल की परीक्षा पास की । प्रान्त-भर में प्रथम स्थान प्राप्त करने के कारण उन्हें राजकीय छात्रवृत्ति मिली ।[2] 1925 में उन्होंने इंट्रेंस की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की । इसलिए उन्हें फिर से छात्रवृत्ति मिली ।[3] वे अपनी छोटी बहन के साथ क्रास्थवेट कालेज के बोर्डिंग हाउस में रहकर पढती थी । 1929 में प्रथम श्रेणी में बी॰ए॰ की परीक्षा उन्होंने पास की ।[4] स्वास्थ्य बिगड जाने के कारण महादेवी की पढाई फिर एक वर्ष तक रुक गई ।[5] 1930 में प्रयाग विश्वविद्यालय में वे संस्कृत में एम॰ए॰ करने लगीं । 1932 में वे एम॰ए॰ परीक्षा उत्तीर्ण हुई ।[6]

एम॰ए॰ पास होने के तुरंत बाद वे प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाचार्य नियुक्त हुई ।[7] 1960 में वे उसी विद्यापीठ की उपकुलपति नियुक्त हुई । सेवानिवृत्ति भी उसी संस्था से हुई ।

महादेवी का विवाह

यद्यपि महादेवी बाल्य विवाह से घृणा करती थी, फिर भी कन्यादान की दादा को आकुल प्रतीक्षा थी । इसलिए नौ

---

1. गंगाप्र साद पांडेय - जीवन झांकि, महीयसी महादेवी, पृ॰29
2. वही, पृ॰29
3. वही, पृ॰30
4. वही, पृ॰31
5. वही, पृ॰347
6. वही, पृ॰347
7. वही, पृ॰347

वर्ष की आयु में उनका विवाह निश्चित हुआ ।[1] यह सन् 1916 की बात है । पति स्वरूप नारायण वर्मा विद्यार्थी थे । उनका घर बरेली के पास नवाबगंज में था । व्याह के बाद एक दिन वे ससुराल गयी । उन्होंने रो-रोकर समय काटा ।[2] वहाँ वे न खाती, न पीती, न बोलती या न सुनती थी । रो-रोकर उनकी आँखें सूज गयी । दूसरे दिन ससुर उन्हें लौटा गए ।[3] उसके बाद वे ससुराल नहीं गयी ।

महादेवी के पिताजी ने उनके पति स्वरूप नारायण को लखनउ के मेडिकल कालेज में भेजकर डाक्टरी में योग्यता प्राप्त करा दिया था ।[4] लेकिन "अपनी लड़की के दिन-प्रति-दिन के व्यवहार से उन्हें लगने लगा कि इस अल्प आयु में लड़की की शादी करके उन्होंने महान भूल की और वह इस जीवन को सुख पूर्वक नहीं अपना पाएगी ।"[5] इसलिए उन्होंने दोनों को अलग अलग रखने का निश्चय किया । बी॰ए॰ पास होने के बाद फिर से गौने का प्रश्न आ गया । महादेवी ने इसका साफ इन्कार कर दिया । उन्होंने अपनी जिज्ञी से स्पष्ट घोषणा की कि वे कभी भी गार्हस्थ्य जीवन स्वीकार करना नहीं चाहती ।[6] यह उनके दृढ संकल्प का अनिवार्य परिणाम था । इनेगिने व्यक्तियों तक वे अपने प्रेम तथा सेवा को सीमित रखना नहीं चाहती थी । इस प्रकार उन्होंने "वसुधैव कुटुम्बकम्" के आदर्श का अक्षरशः पालन करने का निश्चय किया ।

---

1. श्यामादेवी - बचपन के दिन, महादेवी संस्मरण ग्रंथ
2. डॉ॰गणपतिचंद्र गुप्त - महादेवी : नया मूल्यांकन,प्रथम संस्करण 1969, भारतेंदु भवन, शिमला,।
3. गंगाप्रसाद पांडेय - जीवन झांकि, महीयसी महादेवी, पृ॰29
4. वही, पृ॰3।
5. श्यामादेवी - बचपन के दिन, महादेवी संस्मरण ग्रंथ, संपादक - पंत, शांति जोशी ।
6. गणपतिचंद्र गुप्त - महादेवी नया मूल्यांकन ।

करुणार्द्र स्वभाव

महादेवी के चरित्र में बचपन से ही करुणा की प्रवृत्ति विद्यमान थी, मानव मात्र के प्रति नहीं, पशु-पक्षियों के प्रति भी । एक बार जाडों के दिनों में पडोस में किसी कुत्ते के बच्चे हुए । पिल्लों की करुण आवाज़ महादेवी के कानों तक आ पडी । उन्होंने पिल्लों को घर लाने का हठ किया । वे ज़ोर-ज़ोर से रोने लगीं । घर के सब लोग जाग उठे । वे तभी शांत हो गयी जब पिल्ले घर लाए गए । यह करुणार्द्र और हठी स्वभाव उनके जीवन भर देख सकते हैं ।"[1]

महादेवी सात वर्ष की थीं । एक दिन नौकर की पत्नी, पति से असह्य मार-पीट सहकर महादेवी की माँ के पास आ गयी । वह गर्भिणी थी । घर-बार के काम के बाद पति की मार-पीट । महादेवी ने माँ से प्रश्न किया कि क्यों इसने (पत्नी ने) नहीं पीटा ? माँ ने उत्तर दिया कि पति को कोई पत्नी नहीं पीटती ।[2] इस घटना का गहरा प्रभाव महादेवी पर पडा । उनकी गद्य रचनाओं में इस प्रकार के अत्याचारों के प्रति विद्रोह भावना हमेशा दिखाई पड़ती है । नारी समस्या के विश्लेषण में ऐसी घटनाएँ महादेवी के चिंतन का मार्गदर्शक रही हैं ।

---

1. गंगाप्रसाद पाडेय - भूमिका, आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि महादेवी वर्मा ।
2. गंगाप्रसाद पाडेय - जीवन झाँकी, महीयसी महादेवी, पृ.27-28

बौद्ध सिद्धांतों के प्रति लगाव

करुणा-कलित स्वभाव होने के कारण बौद्ध सिद्धांतों के प्रति उनकी गहरी आस्था थी । बचपन से ही भगवान बुद्ध के प्रति उनका भक्तिमय अनुराग था । इसलिए वे बौद्ध भिक्षुणी बनना चाहती थीं । बी·ए· करने के पश्चात् ग्रीष्माकाश में वे संभावित गुरु बौद्ध महास्थविर से मिलीं । उन्होंने एक काष्ठ पट्टिका की ओर से उन से बातें की । महादेवी को यह बहुत अपमानकर लगा । उनके प्रति इतने अविश्वासी व्यक्ति को गुरु बनाना उन्होंने उचित नहीं समझा । इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप उन्होंने भिक्षुणी बनने का विचार ही त्याग दिया ।[1]

निडर संकल्पिता: महादेवी का वैराग्य जीवन, भिक्षुणी बनने से इनकार आदि ने उनको अनेक आरोपों का पात्र बना दिया । लेकिन उन्होंने यह कहकर उन सबका सामना किया कि "मेरे जीवन ने वही ग्रहण किया जो उसके अनुकूल था । कविता सबसे बडा परिग्रह है, क्यों कि वह विश्व-मात्र के प्रति स्नेह की स्वीकृति है ।[2] महादेवी ने जीवन भर वही किया, जो अपने जीवन केलिए उचित था । किसी भी प्रकार का प्रलोभन उन्हें अपने निश्चय से विमुख नहीं कर सकता था ।

1· गंगा प्रसाद पांडे - महीयसी महादेवी, पृ·347

2· वही, पृ·32

सुख-दुख में समरसता

दुख के प्रति महादेवी का वही भाव था जो सुख के प्रति था । एक बार वे बाथरूम में गिर गयी । उनके दाएँ हाथ की हड्डी टूट गयी । उस टूटे हाथ को झुलाती हुई वे बातें करती रही । दर्द बढने पर वे डाक्टर के पास गयी । उसे सेट करवाने केलिए डॉक्टर ने बेहोश करने का आग्रह किया । लेकिन बेहोशी लिए बिना ही सेट करवाया और जिज्ञासु भाव से वह देखती रहीं । लेकिन दूसरों को दुख सहते देखते रहना उनके लिए असंभव बात थी । इसलिए जब एक बार रामजी पांडे के पुत्र को चोट लग गयी तो महादेवी ने डाक्टर से कहा कि बेहोश करके उसका उपचार करें ।[1]

रहस्यवादी कवयित्री की खुली हँसी

महादेवी के हँसने की आदत का उल्लेख किए बिना उनके व्यक्तित्व का चित्र पूरा नहीं होगा । रहस्यवादी कवयित्री महादेवी का दुख उनके चेहरे पर झलकता नहीं है । वह मात्र कविता में दीख पड़ता है । हँसी उनके व्यक्तित्व का अविच्छिन्न अंग है । "महादेवीजी का व्यक्तित्व मधुरिमा, सौम्यता और संयम का अनुभव मिलनेवाले को देता है । वे विनोदपूर्वक हँसती रहती हैं, कुछ भी कहकर हँसती अवश्य हैं । कह सकते हैं कि कुछ कहती कम हैं, हँसती अधिक हैं, जिससे कभी कभी श्रोता भ्रम में भी पड जाता हैं ।"[2]

---

1. श्री राम जी पाण्डेय - महादेवी की छाया में, दस्तावेज - 39 (अप्रेल 1988) 1966, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, पृ.10
2. प्रकाशचन्द्र गुप्त - महादेवी वर्मा, आज का हिन्दी साहित्य 1966, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ.226

यह भी कहा जा सकता है कि वह हँसी सर्वथा बात में से निकली हुई नहीं होती । कुछ असंबद्ध भी होती है । .... इस तरह वह किंचित दुर्ज्ञेय बनती है ।"[1] कुछ लोगों का मत है कि उनकी हँसी निरर्थक और कृत्रिम है । लेकिन कृत्रिम हँसी से श्रोता का ऊब जाना स्वाभाविक है । उनसे अनेक बार मिलने पर भी ऐसा अनुभव कभी नहीं होता । "उनकी हँसी बातचीत के साथ-साथ चलती है कहीं वह बातचीत के आशय से संबन्धित भूमिका बनाती है, और कहीं पिछली बातचीत को बल देने केलिए आती है और कहीं विषय के अनुसार बातचीत के साथ साथ चलती है ।"[2] उनसे मिलनेवाले व्यक्ति उनके अविरल मुक्तहास से कभी वांचित नहीं होगा ।

महादेवी की समाज सेवा

साहित्य सेवा के साथ साथ महादेवी वर्मा समाज सेवा भी लगातार करती रही । उनकी समाजसेवा का क्षेत्र काफी विस्तृत था । राष्ट्र सेवा, नारी जीवन का सुधार, निम्न वर्ग का उद्धार, साक्षरता, निर्धन साहित्यकारों की सेवा आदि केलिए महादेवी ने अपने जीवन भर प्रयत्न किया ।

बौद्ध भिक्षुणी बनने का विचार छोडने के तुरन्त बाद महादेवी वर्मा महात्मागांधी के संपर्क में आ गयीं । इस प्रकार उनका मन सामाजिक कार्यों की ओर उन्मुख हो गया ।

---

1. जैनेन्द्र कुमार - सुश्री महादेवी वर्मा (प्रश्नोत्तर), महादेवी वर्मा संपादिका शचीरानी गुर्टू, तीसरा संस्करण, 1963 आत्माराम एण्ड संस, नई दिल्ली ।
2. शचीरानी गुर्टू, श्रीमती महादेवी वर्मा एक रेखाचित्र, महादेवी वर्मा पृ.22

प्रयाग के आस पास के गाँव में जाकर बच्चों को पढाना और उनमें शिक्षा की रूचि का उन्मेष करना इनका नियमित कार्यक्रम बन गया, जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय तक चलता रहा ।[1]

महादेवी के राष्ट्र-सेविका रूप से काफी लोग अनभिज्ञ हैं । स्वतंत्रता आंदोलन में उनका सक्रिय सहयोग था । "इनके ड्राइंग रूम को देखकर कौन अनुमान लगा सकता है कि इस महिला ने जेठ-आसाढ की जलती हुई दोपहरी में पैदल चल उन गाँवों की धूल छानी होगी, जिन्हें ब्रिटिश साम्राज्यशाही की गोलियों ने 1942 का आंदोलन कुचलने केलिए बरबाद किया था, जिनके आदमी गिरफ्तार कर लिए गए थे और जिनकी स्त्रियों तथा बच्चों को रोटी-कपडे का भी ठिकाना न था । ऐसी अवस्था में कहीं से भी जुटाकर इन्होंने उन स्त्री बच्चों को निरंतर भोजन की सामग्री और कपडा पहुंचाया है और जलती हुई दोपहरी में गाँव की गरम-गरम धूल छानी है ।"[2]

उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वालों के परिवार को सहायता दी । उनका संरक्षण उन्होंने किया । इस पर इलाचंद जोशी ने चेतावनी दी । उनकी प्रतिक्रिया थी - "इस समय देश को बहुत बडे बलिदान और त्याग की आवश्यकता है । पुलिसवाले हमें जीवित तो पकड नहीं सकते, और यथाशक्ति काम तो करना ही है । राक्षसी परपीडन का भय हमको नहीं है, क्योंकि जौहर व्रत के सच्चे उत्तराधिकारी हैं ।"[3]

---

1. गंगाप्रसाद पाण्डे - महीयसी महादेवी, पृ.347
2. शिवचंदर नागर - महादेवी वर्मा (संपादक शचीरानी गुर्टू, पृ.27
3. गंगा प्रसाद पाण्डे - महीयसी महादेवी, पृ.37

महादेवी का देश प्रेमी - रूप उनके संपादकत्व में प्रकाशित "बंग दर्शन" और "हिमालय" में हम देख सकते हैं । बंगाल का अकाल मनुष्य निर्मित था । इस विचार को उन्होंने "बंगदर्शन" की भूमिका में धीरता से स्पष्ट किया । शासन के विरुद्ध इस प्रकार तूलिका चलाना उस समय सामान्य बात नहीं थी । भारत की विरासत में मिली संस्कृति पर गर्व करते हुए उन्होंने हिमालय की भूमिका में लिखा कि हिमालय हमारी संस्कृति का मेरूदंड है । इतिहास ने अनेक बार प्रमाणित किया है कि जो मानव-समूह अपनी धरती से जिस सीमा तक तादाम्य कर सका है, वह उसी सीमा तक अपनी धरती पर अपराजेय रहा है । इस तादाम्य के अनेक साधनों में विशिष्ट साहित्य है किसी भूमिखंड पर किस मानव समूह का सहज अधिकार है, इसे जानने का पूर्णतम प्रमाण उसका साहित्य ही है । आधुनिक युग के साहित्याकार को भी अपने रागात्मक उत्तराधिकार का बोध था, इसी से हिमालय के आसन्न संकट ने उसकी लेखनी को ओज के शब्द और आस्था की वंशी के स्वर दिए हैं ।"[1] इसी अधिकार को स्पष्ट करने केलिए उन्होंने प्राचीन काल से हिमालय पर लिखी गयी कविता रत्नों को हिमालय में संकलित किया । "बंगदर्शन" में उन्होंने अपने समय के प्रसिद्ध साहित्यकारों को सहकारी बनाया ।

समाज सेवा का एक अन्य उदाहरण

महादेवी जी त्रस्त साहित्यकारों की शरण केलिए कुछ प्रयत्न करना चाहती थी ।"[2] साहित्यकारों के हित केलिए

1. महादेवी - समर्पण - हिमालय । प्रथम संस्करण । 963 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद ।

2. श्री प्रकाश चन्द्र गुप्त - श्रीमती महादेवी वर्मा एक संस्मरण, महादेवी संस्मरण ग्रन्थ ।

महादेवी ने "साहित्यकार संसद" की स्थापना 1944 में की। साहित्यकार संसद से महादेवी अविच्छिन्न रही है। उसके पालन पोषण केलिए उन्होंने काफी प्रयास किया। 1950 में उन्होंने साहित्यकार संसद की ओर से पाँच दिन का लेखन सम्मेलन तथा साहित्य पर्व का आयोजन किया। संसद में "वाणी मंदिर" का शिलान्यास राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद द्वारा किया गया। आम जनता से परिचित महादेवी को उत्तर प्रदेश की विधान परिषद् की सदस्या मनोनीत किया गया। यह 1952 में हुआ। इसी वर्ष श्री इलाचन्द जोशी, श्री दिनकर, श्री गंगा प्र साद पांडे के साथ दक्षिण भारत में कन्याकुमारी तक साहित्यिक यात्रा की। साहित्यकार संसद की ओर से महादेवी ने केन्द्रीय सरकार से कॉपी-राइट नियम में संशोधन की मांग की। संसद की ओर से ही "अपरा" नामक निराला की कविताओं का संग्रह प्रकाशित कराया। कापीराइट नियम में पड़कर निराला जी आर्थिक संकट में थे। महादेवी के प्रयास से ही वे मुक्त हो गए।"[1]

1955 में साहित्यकार संसद के मुख पत्र 'साहित्यकार' निकाला गया। उसका संपादन महादेवी और इलाचंद जोशी ने मिलकर किया। महादेवी ने "संसद" की ओर से ताकुला के उत्तरायण में अन्तर्प्रादेशिक साहित्यकार शिविर का आयोजन किया। इसी वर्ष उन्होंने एक नाट्य संस्था प्रयाग में खोली-'रंगवाणी'। उसका उद्घाटन प्रसिद्ध मराठी नाटककार मामा वरेरकर ने किया। मौलाना आज़ाद तत्काल शिक्षा मंत्री थे। हिन्दी साहित्य के

---

1. गंगाप्रसाद पाण्डेय - महीयसी महादेवी, पृ.348

बारे में उनकी भ्रांत धारणायें थीं । उसके विरुद्ध महादेवी ने मैथिलीशरण गुप्त तथा अन्य साहित्यकारों से जुझकर एक तीखी विज्ञप्ति प्रकाशित की ।[1] वे हमेशा अन्याय के विरुद्ध लडने केलिए कटिबद्ध थीं ।

चरित्र-निर्माण में माता-पिता का योगदान

महादेवी की माता और उनके पिता उनको हमेशा प्रोत्साहित किया करते थे । पिता श्री गोविंद प्रसाद आजीवन शिक्षा संस्थाओं से संबद्ध रहे थे । घर के सारे काम माँ हेमरानी देवी के हाथों सुरक्षित थे । पिताजी के परीक्षा-निरीक्षा के कारण विद्यार्जन और माँ की सहायता से घर के काम दोनों से महादेवी का अच्छा खासा परिचय हो गया । माँ-बाप के बारे में वे कहती हैं - "एक ओर साधनापूत आस्तिक और भावुक माता और दूसरी ओर सब प्रकार की साम्प्रदायिकता से दूर कर्मनिष्ठ और दार्शनिक पिता ने अपने अपने संस्कार देकर मेरे जीवन को जैसा विकास दिया उसमें भावुकता बुद्धि के कठोर धरातल पर, साधना एक व्यापक दार्शनिकता पर और आस्तिकता एक सक्रिय, किन्तु किसी वर्ग या सम्प्रदाय में न बांधनेवाली चेतना पर ही स्थित हो सकती थी ।"[2]

संभवत: इसीलिए एक सजग यथार्थवादी की तरह सोचने समझने और आस्थावान आदर्शवादी की तरह कार्य करने की उनकी अपनी एक अलग प्रणाली है । समन्वय और सामंजस्य उनके जीवन के

---

1. गंगाप्रसाद पाण्डे - महीयसी महादेवी, पृ.348
2. गंगाप्रसाद पांडेय, भूमिका, आजके लोकप्रिय हिन्दी कवि : महादेवी वर्मा ।

मूलाधार हैं । अनेक आश्चर्यजनक विलक्षणताओं का सहज समाहार, विविध विजातीय वर्गों से समान संबन्ध, विभिन्न वयस और विचार के व्यक्तियों से एक रस सहानुभूति, परस्पर-विरोधी नाना प्रकार के कार्यों को कर सकने की अद्भुत क्षमता, मोतियों की हाट और चिनगारियों का एक साथ मेला लगाते चलने की अनन्य धुन आदि उनकी समन्वय शीलता के साक्षी है । काव्य में गंभीर रहस्य वादी होकर भी जीवन में इतनी सहज-सरल तथा परानुभूतिशील, स्पष्ट और शिशुवत् कुतुहली होने का रहस्य भी है ।"[1]

काव्यांकुरण का पहला क्षण

महादेवी की काव्य-कला का प्रथम अंकुर सात की आयु में प्रकट हो गया -

"आओ प्यारे तारे आओ, मेरे आँगन में बिछ जाओ ।"

इसके बाद उन्होंने एक पूर्ण रचना की । वह समस्या - पूर्ती की है । कविता इस प्रकार है -

"आगम है दिन नायक को, अरुनाईभरी नभ की गलियान में,
सारी सुगंध बतास वही, मुस्कान नई बगारी कलियान में,
संख धुनि बिरुदावलियाँ अब गुंजित हैं खग औ अलियान में,
वारन के हित कंज-कली मुकुताहल जोरि रही अँखियान में ।[2]

---

1. गंगाप्रसाद पाडेय - महीयसी महादेवी, पृ.28
2. वही ।

महादेवी अब तक मैथिलीशरण गुप्त जी की खड़ीबोली कविताओं से परिचित हो चुकी थीं । उस समय कविता की भाषा ब्रज थी । गुप्तजी की कविताओं से प्रभावित होकर उन्होंने "मेघ बिना जलवृष्टि भई है" का रूपांतरण इस प्रकार किया -

"हाथी न अपनी सूँड में यदि नीर भर लाता अहो,
तो किस तरह बादल बिना जल-वृष्टि हो सकती कहो ?"[1]

ब्रज भाषा प्रेमी पंडित जी को यह पसंद नहीं हुआ ।

खड़ीबोली की महादेवी की प्रथम पूर्ण रचना "दिया" है । इसकी रचना उन्होंने आठ वर्ष की आयु में की । दस पंक्तियों की उस कविता की प्रथम चार पंक्तियाँ इस प्रकार हैं -

"धूलि के जिन लघुकणों में है न आया प्राण,
तू हमारी ही तरह उनसे हुआ वपुमान ।
आग कर देती जिसे पल में जलाकर क्षार,
है बनी उस बात से वर्ती नई सुकुमार ।"[2]

महादेवी के माँ-बाप को गाने का बड़ा शौक था । माँ परदे के अंदर से गाना सुनती और सीखती थीं । साल-भर के अंदर उन्होंने अनेक गाने सीखे । महादेवी के कुछ "गीतों में संस्कार एवं वातावरण वश माँ के गीतों की लय मिलती है । एक दिन

---

1. गंगाप्रसाद पांडे - जीवन झाँकी, महीयसी महादेवी ।
2. वही ।

माँ के भजन गाते समय आगे की पंक्तियाँ भूल गयीं ।
"लाल भयो नंदनलाल, श्यामता रंग गयो है" । आगे रुक गयी ।
तो महादेवी ने जोड दी -

"लाल मुकुट सिर लाल पीतांबर, लाल गले बनमाल ।
साधो लाल, सखी सब लाली सुंदर नैन विशाल ।"

इस प्रकार चार अंतरे बनाए । उसके बाद भी जब कभी माँ किसी गीत की पंक्तियाँ भूल जाती तो महादेवी तुरंत बना देती थी । महादेवी का कविता लिखना इसी प्रकार प्रारंभ हुआ ।[1]

काव्य कला का विकास

मिडिल तक की पढाई के बीच उन्होंने सौ छन्दों का एक खंड काव्य, "अबला", "विधवा" तथा "माँ भारती" आदि की रचना की । खंड काव्यको छोडकर अन्य सभी रचनाएं "आर्य महिला" और "महिला जगत" में प्रकाशित हुई । मिडिल, दसवाँ और ग्यारहवाँ कक्षा में पढते समय महादेवी वाद-विवाद, कवि सम्मेलन आदि में भाग लिया करती थीं । पुरस्कारों की ढेर से छात्रावास का कमरा भर गया था । इस नवीन "प्रांजल प्रतिभा" की ओर कवि मर्मज्ञों का ध्यान आकर्षित हो गया । उनकी रचनाएं प्रसिद्ध पत्र पत्रिकाओं में आने लगी । इंटर तक उनकी आश्चर्यजनक ख्याति फैल गयी थी ।

---

1. श्यामा देवी सक्सेना - बचपन के दिन, महादेवी संस्मरण ग्रंथ ।

अब तक महादेवी की कविता का "शैशव" समाप्त हो गया । काव्य प्रवृत्ति उनकी मूल-प्रवृत्ति की ओर उन्मुख हुई जिसमें व्यष्टिगत दुख समष्टिगत गंभीर वेदना का रूप ग्रहण करने लगा और प्रत्यक्ष का स्थूल रूप सूक्ष्म चेतना का आभास देने लगा ।" महादेवी के मन को वही विश्राम मिला जो पक्षि शावक को कई बार गिर उठकर अपने पंखों के संभाल लेने पर मिलता होगा । उनकी प्रथम प्रौढ रचना "चांद" के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई । "नीहार" का प्रकाशन बहुत बाद ही हुआ । लेकिन उसकी अधिकांश कविताओं की रचना मैट्रिक पास होने के अंतर लिख चुकी थी ।"[1]

"नीहार" महादेवी का प्रथम काव्य संग्रह है ।[2] उसका प्रकाशन 1930 में हुआ । उनकी दूसरी काव्य रचना, "रश्मि" 1932 में प्रकाशित हुई ।[3] दो वर्ष बाद उनके तीसरे काव्य संग्रह "नीरजा" का प्रकाशन हुआ । उनका चौथा काव्य संग्रह है "सांध्यगीत" जो 1936 में प्रकाशित हुआ । सांध्यगीत में उनके कविरूप ही नहीं, चित्रकार रूप भी उभर आया है । इसमें उनके अनेक भावोज्वल चित्र प्रकाशित हुए । उन चित्रों के नाम इस प्रकार है - "संध्या", "दीपक" "वर्षा", "अरुण", "निशीथिनी", "मृदु महान" आदि ।[4]

---

1. गंगाप्रसाद पांडे - महीयसी महादेवी, पृ.30
2. वही, पृ.347
3. वही ।
4. वही ।

महादेवी की पाँचवी काव्य रचना "दीपशिखा" का प्रकाशन 1942 में हुआ । "दीपशिखा" महादेवी की पूर्व रचनाओं से भिन्न है । उसमें संगृहीत हरेक गीत की पृष्ठभूमि में एक-एक चित्र अंकित है । "काव्य, संगीत और चित्र का यह सरस सम्मेलन हिन्दी साहित्य की अक्षय तथा अनन्य निधि है ।"[1]

महादेवी के काव्यों का विस्तृत अध्ययन अन्यत्र हुआ है ।

गद्यरचना में रुचि

कविता करने के साथ-ही-साथ महादेवी ने गद्य-रचनामें भी अपनी रुचि दिखाई । मिडिल की पढाई के बीच उन्होंने निबंध प्रतियोगिता में उत्तर प्रदेश शिक्षा विभाग का पुरस्कार प्राप्त किया । निबंध का विषय था "पर्दा-प्रथा" । अनेक संस्मरण भी उन्होंने लिखे । चाँद का संपादन करते समय के संपादकीय में नारी-समस्या पर उन्होंने जो लिखा वह काफी महत्वपूर्ण है । नारी-वर्ग पर होनेवाले अत्याचारों की उन्होंने कटु आलोचना की ।" इन निबंधों में उन्होंने भारतीय नारी की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का बहुत गहराई के साथ एक समाज शास्त्री की भाँति विश्लेषण-विवेचन किया है ।" शृंखला की कडियाँ " इन निबन्धों का संग्रह है ।[2] गद्य में उन्होंने एक क्रांतिकारी-स्वरूप ग्रहण किया है । विधवाओं, वेश्याओं और अवैध संतानों की

---

1. गंगाप्रसाद पाँडे - महायसी महादेवी, पृ.347
2. गंगाप्रसाद पाँडे - जीवन झाँकी, महीयसी महादेवी, पृ.33

समस्याओं पर उन्होंने अपने निर्भीक और साहसी विचार व्यक्त किए हैं । उनका प्रथम गद्य-संग्रह "अतीत के चलचित्र" (रेखाचित्र) 1941 में प्रकाशित हुआ । 1942 में उनकी दूसरी गद्य-रचना "शृंखला की कड़ियाँ" प्रकाशित हुई । "चाँद" के संपादकीय के निबन्धों का परिवर्द्धित रूप ही इसमें संगृहीत हैं ।

महादेवी के रेखाचित्रों का दूसरा संग्रह स्मृति की रेखाएं" 1943 में प्रकाशित हुआ । उन्होंने प्रतिष्ठित व्यक्तियों को ही विशेष महत्व नहीं दिया । अप्रतिष्ठित व्यक्ति भी उनकेलिए समान महत्वपूर्ण है । उनके रेखाचित्र इसका प्रमाण है । "अपने संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में महादेवी जी ने तथाकथित निम्न वर्ग के पात्रों को ही अंकित किया है इनके चयन से उनके लोक जीवन के प्रति अगाध स्नेह और आकर्षण का प्रमाण मिलता है ।"[1]

सभी साहित्यकारों के साथ महादेवी की गाढी मित्रता थी । 1956 में उन्होंने अपने "पथ के साथियों" के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों का संकलन प्रकाशित किया । उसके प्रारंभ में गुरुदेव का स्मृति चित्र अंकित हैं । फिर मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, निराला, प्रसाद, पंत, तथा सियाराम शरण गुप्त के चित्र हैं ।

महादेवी के रेखाचित्रों की शृंखला की अंतिम कडी "मेरा परिवार" 1972 में प्रकाशित हुई । यह विशेष प्रकार की पुस्तक है । महादेवी ने ग्रन्थ का नाम "मेरा परिवार" रखकर स्वीकार किया है कि

---

1. डॉ. शिवनाथ शुक्ल - महादेवी: स्मृति की रेखाएँ, महादेवी वर्मा अभिनंदन ग्रंथ, संपादक देवदत्त शास्त्री, 1964 भारती परिषद्, प्रयाग ।

पशु-पक्षी भी उनके परिवार के सदस्य हैं । यह महादेवी की विनम्रता और सादगी का प्रमाण है । नीलकंठ मोर, गिल्लू गिलहरी, सोना हरिणी, दुर्मुख खरगोश, गोरा गाय, नीलू कुत्ता निक्की नेवला, रोजी कुत्ती और रानी घोडी महादेवी के परिवार में शामिल थे । डॉ॰ इलाचन्द जोशी ने अपने "उच्छ्वास" में लिखा है "कवयित्री के इतने वर्षों के शिल्प-विकास के चरम रूप का पूर्ण निखार स्फटिक की तरह तरल उज्वल धाराओं में निर्झर की तरह पत्थरों पर टूट-टूट कर बिखरता हुआ, आनंदमयी क्रीडा द्वारा कुलकुलाता हुआ फेनिल हास बिखरे रहा है । यह न गद्य है, न काव्य-स्फुरण है न मात्र रेखा-चित्रण । यह एक बिल्कुल ही नयी विधा है, जिसका उपयुक्त नामकरण होने में अभी समय लगेगा ।"[1] लेकिन "मेरा परिवार" रेखाचित्र मानना ही अधिक समीचीन लगता है ।

वक्ता महादेवी

कविता, गद्य, चित्रकला आदि के साथ-साथ महादेवी भाषण कला तथा व्याख्या में भी निपुण है । भिन्न अवसरों पर उन्होंने अनेक भाषण दिए । "उनके पास सहज भाषा का ऐसा जादू है कि हजारों की भीड उन्हें सुनने को उमड पडती है । गांधी के बाद बोलचाल की भाषा का ऐसा सशक्त प्रवक्ता दूसरा नहीं देखा । उनकेलिए नियोजित हर सभास्थल छोटा पड जाता है ।"[2]

---

1. इलाचंद जोशी - उच्छ्वास, मेरा परिवार, छात्र संस्करण 1984 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
2. रामनारायण उपाध्याय - ममतामयी महादेवी, आजकल (सितंबर 1984)

वे बडी गंभीरता और धैर्य के साथ विषय को सुननेवालों केलिए इतना संवेदनीय बना देती हैं कि वे उनके शब्दों को अपने संवेदनों से मिलाते हुए उनके साथ परम आत्मीयभाव से बहते जाते हैं । वक्ता और श्रोता का भाव स्पंदन एक ही लय में लयमान हो जाते हैं । वक्ता और श्रोता ऐसा तादात्म्य स्थापन भाषण-कला की चरम परिणति है । महादेवी जी ऐसी ही समर्थ व्याख्याता है ।"[1]
1975 में उनके कुछ भाषण 'संभाषण' ग्रंथ में संग्रहीत हुए ।

अनुवादक महादेवी

मौलिक रचनाओं में ही नहीं महादेवी ने अनुवाद कला में भी अपनी कुशलता दिखाई है । भारतीय साहित्य की प्राचीन रचनाओं की कुछ चुनी हुई कविताओं का उन्होंने सरल अनुवाद किया । उसका प्रकाशन "सप्तपर्णा नाम से 1960 में किया गया । आर्षवाणी वेद, वाल्मीकी, थेरगाथा, अश्वघोष, कालिदास, भवभूति तथा जयदेव की कविताओं का काव्यानुवाद इसमें संग्रहीत है । भारतीय साहित्य में इन प्राचीन कवियों के योगदान का महादेवी कृतज्ञता से स्मरण करती हैं । "आज के नाना ज्ञान-विज्ञान, दर्शन और विचार की परस्पर-विरोधी प्रवृत्तियों के कलह-कोलाहल में मानव के तरुण काल की प्रशान्त प्रसादात्मक भावभूमि के प्रामाणिक परिचय की उपादेयता आज कितनी महत्वपूर्ण है, कहने की आवश्यकता नहीं । जीवन की ऊर्ध्वगामी प्रगति और स्वस्थ विकास केलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम अपने अतीत से परिचित और प्रेरित होने चले ।"[2] सप्तपर्णा इस बात का प्रमाण है कि

---

1. गंगाप्रसाद पांडे - महीयसी महादेवी, पृ.36
2. वही, पृ.43

महादेवी अपनी सांस्कृतिक विरासत पर बड़ा गर्व करती थी ।

सम्मान और पुरस्कार

महादेवी अनगिनत पुरस्कारों से सम्मानित हुई है । 1933 में उनके काव्य संकलन "नीरजा" पर उन्हें "सेक्सेरिया" पुरस्कार मिला । यह पुरस्कार इंदौर में महात्मा गांधी द्वारा वितरित हुआ । 1943 में उन्हें "स्मृति की रेखायें", "रेखाचित्र संकलन पर द्विवेदी पदक प्राप्त हुआ । हिन्दी साहित्य सम्मेलन का "मंगला प्रसाद पुरस्कार" उन्हें 1944 में प्राप्त हुआ । भारत सरकार ने 1956 में महादेवी को "पद्मभूषण" उपाधि से सम्मानित किया । 1963 में राष्ट्रपति डॉ॰राधाकृष्णन ने लेखिका संघ, दिल्ली की ओर से महादेवी को अभिनंदित किया । उस दिन उनके सम्मान में जो कवि गोष्ठी हुई, उसमें प्रधान मंत्री जवहरलाल नेहरू ने उनका स्वागत किया । 1964 में प्रयाग, भारतीय परिषद की ओर से उनके घर पर पंतजी ने उन्हें एक बृहत् अभिनंदन ग्रन्थ भेंट किया । यह महादेवी के षष्टि प्रवेश के उपलक्ष्य में किया गया था । इसी उपलक्ष्य में 1966 में कविवर पंत ने साहित्यकारों की ओर से महादेवी को एक संस्मरण ग्रन्थ भेंट किया ।

विक्रम विश्वविद्यालय के द्वारा 1969 में उन्हें डी॰लिट्॰ की उपाधि से सम्मानित किया । उत्तर प्रदेश सरकार ने 1976 में पन्द्रह हज़ार रूपये का विशिष्ट साहित्य पुरस्कार उन्हें दिया । 1977 में उन्हें कुमायूं विश्वविद्यालय से डी॰लिट् की

उपाधि प्राप्त हुई । महादेवी की साहित्यसेवा को दृष्टि में रखकर बिहार सरकार ने 1980 में महादेवी को विशेष रूप से सम्मानित किया । उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ ने साहित्यकारों को सम्मानित करने केलिए भारत-भारती पुरस्कार देने का आयोजन किया था । एक लाख रुपये का इसका प्रथम पुरस्कार 1982 में महादेवी का प्राप्त हुआ था । 1983 में "यामा" और "दीपशिखा" केलिए उन्हें डेढ लाख रुपये का "ज्ञानपीठ" पुरस्कार प्राप्त हुआ ।

स्वतन्त्रता के पश्चात् गठित उत्तर प्रदेश की विधान परिषद् की सम्मानित सदस्या के रूप में 1952 में महादेवी मनोनीत हुई । 1954 में दिल्ली में स्थापित साहित्य अकादमी की संस्थापक सदस्या के रूप में वे चुनी गई । 1960 में महादेवी ने प्रयाग महिला विद्यापीठ की उपकुलपति के रूप में सर्वसम्मति से निर्वाचित हुई ।

रुग्णावस्था

लंबे समय तक महादेवी बीमार पडी रही । फिर भी जितना संभव था उतना वे कार्य रत रहीं । मई 1987 को हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा लेखिका सम्मेलन आयोजित किया गया था । महादेवी को उसकी अध्यक्षता करनी थी । सख्त बीमारी के कारण वे जा न सकी । इसलिए उनके घर पर ही सम्मेलन आयोजित किया गया । उन्होंने एक छोटा सा भाषण भी

---

1. आशा रानी व्होरा - साप्ताहिक हिन्दुस्तान, सितंबर 1987 पृ. 14

दिया । देश की चिंता उन्हें सताती थी, विशेषकर उनके अंतिम समय में । महादेवी की रुग्णावस्था और अंतिम घड़ी के बारे में श्री राजेन्द्र अवस्थी इस प्रकार लिखते हैं । वे बहुत समय से बीमार चल रही थीं । मैं मुश्किल से एक महीने पहले ही इलाहाबाद में उनके अशोक नगर स्थित घर में मिला था । तब महादेवी जी की पूरी रीढ में बेल्ट बंधा हुआ था । उन्हें उठने-बैठने में परेशानी होती थी । थायराइड से वे बहुत समय से बीमार थी । मैं जब पहुँचा, उस समय शाम के लगभग आठ बजे थे । मेरा नाम सुनते ही उसी हालत में महादेवी जी ने मुझे अंदर बुला लिया । तब तक एक महिला उनका बेल्ट खोल चुकी थी ताकि वे टिककर बैठ सकें । मुझे देखते ही वे बेहद प्रसन्न हुई । .... महादेवी जी का पूरा शरीर लग भग ढीला पड चुका था और वह बर्फ की तरह ठंडा थीं । लेकिन उनके स्वर और आवेग में बेहद गर्माहट थी ।[1]

अंतिम संदेश

3 अगस्त 1987 को "हिन्दुस्तानी एकेडमी" इलाहाबाद ने श्री० मैथिली शरण गुप्त जन्म शती का समापन समारोह कवि दिवस के रूप में मनाया । समारोह का उद्घाटन महादेवी को करना था । वे वहाँ पहुँच नहीं सकती थी । उन्होंने एक संदेश भेजा । यह संदेश उनका अंतिम साहित्यिक संदेश है । उसमें उन्होंने लिखा - "नदी के तट भिन्न हो सकते हैं, किन्तु उसे गतिशील रखने केलिए गहराई सब तटों पर रहेगी । अन्यथा वह नदी नहीं बन सकती । प्रत्येक बडे कवि के साथ यही तत्व रहता है,

---

1. राजेन्द्र अवस्थी - संपादकीय साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 27 सितंबर 1987, पृ०8

जिसे हम प्रासंगिकता कहते हैं । पूज्य दद्दा में यह प्रासंगिकता मुख्य तत्व है जिसने उनकी भारतीयता को गति दी है । वह उन तत्वों को लेकर चले हैं जो समस्त काल-चक्र की धुरी हैं ।"[1]

अंतिम घडी और स्वर्गवास

महादेवी वर्मा का देहांत ।। दिसंबर 1987 को हुआ था । उनकी अंतिम घडी, श्री॰ रामजी पांडेय के शब्दों में इस प्रकार रही "दस दिसंबर को दिन में कई बार हम लोगों को लगने लगा था कि कल तक ये पूरी तरह से चेतना में आ जाएंगी । डाक्टर भी आशान्वित हुए थे, लेकिन वह तो मात्र छलावा था । कहते हैं - बुझते हुए दीपक की आखिरी लौ में एक बार तेजी आती है । वही तेजी थी वह, जिसने मन में इतनी बडी उम्मीद जगा दी थी कि कल तक ये ज़रूर पहचानने लगेंगी और कुछ बोलेंगी भी । अधिक नहीं । तो यह तो ज़रूर कहेंगी कि रामजी कोई ताकत की दवाई दो । क्योंकि इधर कमज़ोरी ऐसी हो गयी थी कि कहती थी कि - "डाक्टर से कहो ताकत की दवाई दें । पर कुछ न हुआ । ग्यारह की सुबह से ही रक्तचाप कम होने लगा तो कितनी-कितनी कोशिशों के बाद भी कम ही होता गया । कितनी मिन्नतें, मनौतियां मानी थीं सबने, लेकिन सब बेकार हो गया और रात में नौ पच्चीस होते होते सब कुछ समाप्त हो गया ।"[2]

1॰ महादेवी वर्मा - गगनांचल, वर्ष 10, अंक 4

2॰ रामजी पांडेय, दस्तावेज - 39, पृ॰10 (अप्रैल 1988)

कवयित्री महादेवी वर्मा

महादेवी की कविता व्यष्टि के केन्द्रित है । उनकी मूलधारा वेदना है । महादेवी की दृष्टि में वेदना आत्मा को परिमार्जित करती है । यह वेदना किसी बाहरी अभाव के कारण नहीं । "वस्तुत उनकी वेदना में व्यक्तिगत अभाव जन्य पीडा की स्थिति का कोई आभास नहीं है । इसीलिए उनकी वेदना में कहीं सुख की लालसा नहीं, केवल बाह्य और अन्तर्जीवन के सामंजस्य का ही आकुल आग्रह पाया जाता है । व्यष्टि केन्द्रित होने के कारण सुख से किसी सामंजस्य का आकलन संभव नहीं है । मानव के प्राय: उदात्त मूल्य, दया, क्षमा, न्याय, स्नेह, सहानुभूति, संवेदना तथा करुणा आदि का प्रेरक जितना दुख होता है, एकता तथा समता से दूर होने के कारण उतना सुख नहीं । यों भी दुख जितना व्यापक, तीव्र, सक्रिय और सचेतन होता है सुख आत्मविस्मृति में उतना ही शिथिल और प्राय: निष्क्रिय होता है । अत: सुख को सार्थक बनाने का मूल उपादान दुख ही है ।"[1]

महादेवी जी की वेदना में बडी तीव्रता है । उसमें नारी-सहज कोमलता भी है । इसी कोमलता से उन्होंने अपनी वेदना की अभिव्यक्ति दी है । इस प्रकार अभिव्यक्ति देने में भी एक प्रकार का सुख होता है । "अप्रियता को काव्य में स्थान नहीं । वेदना प्रिय लगने पर ही काव्य का रूप धारण करती है । कवयित्री ने दुखवाद को अपना काव्य विषय बनाकर सुखवाद से वैर नहीं ठाना, प्रत्युत सुखवाद का उल्लास प्राप्त करने केलिए ही उन्होंने वेदना से मैत्री स्थापित की ।"[2]

---

1. गंगाप्रसाद पांडे - महीयसी महादेवी, पृ.180
2. लक्ष्मीनारायण सुधांशु, श्रीमती महादेवी वर्मा (मूल्यांकन) महादेवी वर्मा, पृ.46

गीत के प्रति महादेवी का विशेष मोह रहा है । मीरा तथा तुलसी के गीत काव्यों से महादेवी बचपन से ही परिचित थीं । वे उनसे संप्रेषित भावों से उद्वेलित हो जाती थी । "सुख-दुख के भावावेशमयी अवस्था - विशेष का गिने चुने शब्दों में स्वर-साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है ।"[1] व्यक्ति-हृदय के भावों को अभिव्यक्ति देने का सबसे सफल माध्यम गीति-काव्य है । भावुक हृदय की कोमलता और सरसता गीति काव्यों में स्पन्दित रहती हैं । काव्य की ऊँची-ऊँची हिमालय श्रेणियों के बीच गीत एक "सजल कोमल मेखण्ड" है । महादेवी की कविताओं में उनका निर्मल प्रेम, अश्रुमय वेदना और रंगमय कल्पना का एक साथ समाहार दिखाई देता है ।"[2]

"हृत्तंत्री का अपूर्व झंकार" "नीहार"

महादेवी का प्रथम प्रकाशित काव्य संग्रह है "नीहार" । इसकी भूमिका में हरिऔध जी ने महादेवी तथा उनके प्रथम ग्रन्थ का परिचय दिया है । उनकी दृष्टि में "नीहार" महादेवी वर्मा की "हृत्तंत्री का अपूर्व झंकार" है । वे उनसे विनती करते हैं कि आगामी कृतियों में "भारत माता के कण्ठ की वर्तमान ध्वनी भी श्रुति होनी चाहिए । विश्व भर के साथ बन्धुत्व स्थापित करने इच्छा इस संग्रह की प्रथम रचना "विसर्जन" में ही मुखरित है । वे विनती करती है कि "विश्व वीणा" में अपनी "यह अस्फुट झंकार" मिला लें । दूसरी कविता में वे अपने अज्ञात प्रेमी से मिलन की इच्छा प्रकट करती हैं । "अनुरोध" में वे चाहती हैं कि उनकी

---

1. महादेवी - गीतिकाव्य, साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध 1962, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली ।
2. जगदीश गुप्त - महादेवी के व्यक्तित्व में कविता और चित्रकला का सहभाव, आजकल, नवंबर 1988, पृ.12

उनकी "बेसुध पीडा" को न छूले और प्रेमी के आ गमन तक उसे जगाने न दे । जिस परदेश में वे रहती हैं उसकी क्षणिकता के अलावा शेष सभी बातों को भूलने की चाह उनकी विस्मृति में है ।

"नीहार" की अधिकांश रचनायें मैट्रिक होने के पहले ही महादेवी ने लिखी थीं । उसके रचनाकाल में उनकी अनुभूतियों में वैसी ही कुतूहल मिश्रित वेदना उमड जाती थी जैसी बालक के मन में दूर दिखाई देनेवाली अप्राप्य सुनहली उषा और स्पर्श से दूर सजल मेघ के प्रथम दर्शन से उत्पन्न हो जाती है । वस्तुत: छायावाद और रहस्यवाद की विभाजक रेखा नीहार से ही स्पष्ट होते लगती है । आधुनिक काव्य में आध्यात्मिक अभियान का यह प्रथम चरण है, क्योंकि रहस्य साधना की खोज और इस पथ की पीडा का उभार "नीहार" में स्पष्टत: लक्षित होता है ।[1] ये कविताएं दुख से बोझिल हैं । "असीम" से मिलकर मिटने के खेल के द्वारा अमरता प्राप्ति की इच्छा भी इसमें है ।

आध्यात्मिक अनुभूतियों का दर्शन - "रश्मि"

महादेवी वर्मा के द्वितीय काव्य संग्रह का प्रकाशन 15 सितंबर 1932 में हुआ - "रश्मि" । इसमें महादेवी की आध्यात्मिक अनुभूतियां दर्शन के दृढ आधार पर खडी हैं । "नीहार" का धुंधलापन इसमें निखर उठा है । "रश्मि" की प्रकृति विस्मय की सृष्टि करनेवाली न होकर कवि-व्यक्तित्व-सापेक्ष हो जाती है ।

---

1. गंगाप्रसाद पांडे - आजके लोकप्रिय हिन्दी कवि : महादेवी वर्मा, पृ.28

इस कृति का आह्लादात्मक बोध वेदना को माधुर्य-मंडित करने में सक्षम है । इसकी रहस्यानुभूतियाँ स्पष्ट और साधना-समन्वित हैं । भावुकता प्रौढ दार्शनिकता में बदल गई है ।"[1]

महादेवी की मान्यता है कि "धर्मांख्य सुख हमें चाहे मनुष्यता की पहली सीढी तक भी न पहुँचा सकें, किंतु हमारा एक बूँद आँसू भी जीवन को अधिक मधुर अधिक उर्वर बनाए बिना नहीं गिर सकता ।"[2] वे कहती हैं कि दुख संसार को एक में बाँध देता है । इसलिए उनका हृदय "अश्रुहास" लेकर रंग रहा है । "अलि-सी मँडराती विरह पीर[3] का वे स्वागत करती हैं । "दुविधा" में वे माँ से पूछती हैं कि वे संसार के किस रूप को देखें । खिलाती कलियाँ और प्यासे सूखे अधर में किसे देखूँ यही उनकी चिंता है । अर्थात् लौकिक सुखों से भरी दुनिया देखूँ, या दुख के आँसू से भरी दुनिया । एक प्रकार की दुविधा इसमें प्रकट है ।

महादेवी की दृष्टि में "परिवर्तन का ही दूसरा नाम जीवन है । जीवन में यही विचार है । अलक्ष्य रूप से परिवर्तन लक्ष्य की ओर खींचता है । विनिमय एक बडी दार्शनिक कविता है । असीम और सीमित के बीच जब बिछुडन होता, तभी सृष्टि होती है । उस असीम से फिर मिलन की प्रतीक्षा में मनुष्य अपने जीवन रूपी प्याले में वेदना रूपी मदिरा भरकर रहता है - "कभी" कविता यही विचार संप्रेषित करती है ।

---

1. गंगा प्रसाद पांडेय - आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि महादेवी वर्मा, पृ.28।
2. महादेवी - अपनी बात, रश्मि । षष्ठ संस्करण 1962 साहित्य भवन प्र.लि.इलाहाबाद
3. महादेवी - सुधि, रश्मि ।

समात्मभाव की रहस्यात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति - नीरजा

महादेवी के आँसू से उत्पन्न, "मधुर पीर" से सुरभित वीरता पंकहीन है । 1934 में प्रकाशित "नीरजा" कवयित्री के प्रेमी-मिलन की इच्छा की अभिव्यक्ति है । "बाहर घन-तम, भीतर दुख तम फिर भी नभ में जो विद्युत है उसमें कवयित्री प्रियतम का अनुभव कर रही हैं । पूर्व रचनाओं से भिन्न महादेवी "नीरजा" में अपने प्रियतम की प्रस्तुति का अनुभव कर रही हैं -

"कौन बंदी कर मुझे अब
बँध गया अपनी विजय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में ?"[1]

अपने अपनापन को खोना महादेवी लाभकर मानती हैं । क्योंकि उसी के द्वारा वे प्रियतम को पा सकती हैं । उस महत्तम विजय के लिए वे अपनापन खो देने को तैयार हैं । इसलिए वे पूछती हैं - "मैं समझूँगी सृष्टि प्रलय क्या ?[2] इस अवस्था में महादेवी "मधुमय" और "विषमय" में कोई अंतर देखा नहीं पातीं । महादेवी के समात्मभाव की रहस्यात्मक अनुभूति की यहाँ अभिव्यक्ति हुई है -

"चित्रित तू मैं हूँ रेखाक्रम,
मधुर राग तू मैं स्वर संगम,

---

1. महादेवी - नीरजा, द्वितीय संस्करण 1960 भारती भंडार, इलाहाबाद
2. वही ।

तू असीम में सीमा का भ्रम,
काया छाया में रहस्य मय ।
प्रेयसि प्रियतम का अभिनय वया !"[1]

"नीरजा" में अनुभूति के उत्कर्ष और कलात्मक मनोरमता के साथ हिन्दी गीति-काव्य अपने चरम विकास की भूमिका पर प्रतिष्ठित हो जाता है । गीतों की दृष्टि से नीरजा हिन्दी की प्रोष्ठतम रचना है । आचार्य शुक्ल को भी इनके गीतों की सफलता को अनन्य मानना पडा था । "नीरजा" में चिंतन और अनुभूति, भाव और अभिव्यक्ति तथा गीत और संगीत का बहुत ही उत्कृष्ट समन्वय पाया जाता है । "रश्मि" की किरण-चेतना का आरोहण क्रम "नीरजा" में समात्मभाव के उस शिखर पर पहुँच जाता है, जो इनके काव्य की प्रतिष्ठा भूमि और आध्यात्मिक उन्मेष का प्रतीक है ।"[2]

श्री विश्वंभर "मानव" की दृष्टि में "नीरजा" फिर एक अनुभूति प्रधान रचना है । जैसे गिरि के चरणों में बहनेवाली किसी स्रोतस्विनी की लहर ऊँची उठकर गिरि पर चढ तो जाय, पर अपनी गति केलिए शुष्क और कठोर भूमि पाकर फिर तलहटी की सरस भूमि पर उतर आवे, वैसे ही "नीहार" की सिहिनी से उत्पन्न जो विचार की लहर उठी थी, वह "रश्मि" में ज्ञान की गिरि पर तो चढी, पर अपने संचार केलिए उपयुक्त भूमि पाकर "नीरजा" में फिर अनुभूति के पथ पर लौट आई ।"[3]

---

1. महादेवी - नीरजा, द्वितीय संस्करण 1960, भारती भंडार, इलाहाबाद
2. गंगाप्रसाद पाण्डेय - आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि:महादेवी वर्मा गंगाप्रसाद पांडे, पृ.23
3. विश्वंभर मानव - महादेवी की रहस्य साधना छठा संस्करण 1969 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद ।

प्रत्यक्ष में अप्रत्यक्ष की अनुभूति - सांध्यगीत

"संध्यगीत" महादेवी का चौथा काव्य संग्रह है । इसका प्रकाशन 1936 में हुआ । इसमें महादेवी ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किया है - "···· "नीरजा" और "सान्ध्यगीत" मेरी इस मानसिक स्थिति को व्यक्त कर सकेंगे जिसमें अनायास ही मेरा हृदय सुख दुख में समंजस्य का अनुभव करने लगा । ··· फिर वह सुख-दुख मिश्रित अनुभूति ही चिंतन का विषय बनने लगी और सब अंत में मन ने न जाने कैसे उस बाहर-भीतर में एक सामंजस्य आ ढूंढ लिया है जिसने सुख-दुख को इस प्रकार बुन दिया कि एक के प्रत्यक्ष अनुभव के सभ्य दूसरे का अप्रत्यक्ष आभास मिलता रहता है ।"[1]

प्रिय विरह की तीव्र अनुभूति इस संग्रह में भी अभिव्यक्त हुई है । अदृश्य प्रेमी की याद उन्हें सताती रहती है । फिर भी उसी याद में वे तल्लीन रहना चाहती हैं । इसलिए "प्राण में इसने विरह का / मोम सा मृदुलभ पाला ।"[2] एक क्षण वे "अंतहीन चिर विरह"[3] से पीड़ित जान पड़ती तो अगले क्षण वे कहती हैं -

"विरह का युग आज दीखा,
मिलन के लघु पल सरीखा,
दुख सुख में कौन तीखा,
मैं न जानी और न सीखा ।"[4]

---

1. महादेवी - अपनी बात, सांध्यगीत, पंचम संस्करण 1960 भारती भंडार, इलाहाबाद ।
2. महादेवी सांध्यागीत, पृ·2
3. वही, पृ·41
4. वही, पृ·42

विरह-दुख की चिर बन्दिनी महादेवी कहती हैं कि वे बंदिनी थी, लेकिन अब "बंधनों की स्वमिनी सी"[1] बन गयी हैं। फिर क्यों दूसरे क्षण वे "अंगार-शय्या पर मृदुल कलियाँ बिछाने"[2] का अनुरोध करती हैं ? वे यह भी कहती हैं कि अगवानी में "प्रिय मेरे गीले नयन बनेंगे आरती।"[2]

इस प्रकार "सांध्यगीत" आद्यंत सुख-दुख, विरह-मिलन, और बाहर-भीतर का सामंजस्य है।

महादेवी का चित्रकार रूप इस संग्रह के द्वारा प्रकाशित हुआ। इसमें अंकित "संध्या, दीपक, वर्षा, अरुणा, निशीथिनी, मृदुमहान आदि चित्र महादेवी ने अपनी तूलिका से खींचे थे। इस प्रकार "सांध्यगीत" काव्य, संगीत, और चित्र के समन्वित स्वरूप से आलोकित है।"[3]

भाव और कला की पूर्णता - "दीपशिखा"

महादेवी के पांचवें काव्य संग्रह "दीपशिखा" का प्रकाशन 1942 में हुआ। प्रारंभिक कविता में ही कवयित्री ने दुनिया भर के सभी जीव-जंतुओंके प्रति अपनी मंगल कामना व्यक्त की है। इस संग्रह के हर गीत के साथ एक एक चित्र खींचे गये हैं। महादेवी की काव्यकला तथा चित्रकला का विकास इसमें दर्शनीय है। ये चित्र कविता की भूमिका तथा उत्कर्ष के रूप में काफी प्रभावोत्पादक है। सार्वलौकिक प्रेम स्थापित करने केलिए महादेवी सभी बन्धनों को तोडना चाहती हैं।

---

1. महादेवी - सांध्यगीत, पृ.35
2. वही, पृ.19
3. गंगाप्रसाद पांडेय - भूमिका - आज की लोकप्रिय हिन्दी कवि महादेवी, पृ.28

इस संबन्ध में श्री॰ गंगाप्रसाद पांडे का विचार है "दीपशिखा की कवयित्री अपने से पहले अपनों की मुक्ति गौतमी गीता के अनुसार अपनेलिए व्यक्तिगत सुख से पूर्व विश्व को सुखी देखना चाहती हैं, सबका सुख बंटाने केलिए आतुर है और उसी को कवि का मोक्ष मानती हैं। महादेवी की अपनी इस विराट संवेदनशीलता के उन्मेष में लोक-कल्याण की भावना को व्यक्तिगत मोक्ष से कई गुना अधिक महत्व देती जान पड़ती हैं।"[1]

महादेवी की हस्तलिपि में ही यह संग्रह प्रकाशित हुआ। हस्तलिपि में लिखी सभी रचनाएं ब्लॉक द्वारा छपी गयीं। अपने जीवन की आवाज़ होने के कारण इसमें अधिक गहराई आ गई है। भाषा मोती के समान स्वच्छ और निर्मल है।[2] दीपशिखा के गीतों में आत्म निवेदन है। लेकिन यही कठिन प्रश्न है कि वह आत्म निवेदन किस प्रकार का है। अज्ञात के प्रति विरह निवेदन या रहस्योन्मुख प्रेम की अभिव्यक्ति है, यह कहना कठिन है। महादेवी का "दीपशिखा करुणा की स्निग्ध लौ है, जो मधुर-मधुर जलती हुई पृथ्वी के कण-कण के लिए आलोक वितरित करती है।[3]

विरह-पीर से ये गीत भी वंचित नहीं है। यह अधिक तीव्र हो गयी है। इसलिए इस मंदिर के दीप को नीरव जलने की इच्छा करती है।[4] लेकिन उनके लक्ष्य तक पहुँचने की प्रतीक्षा उनमें है। लेकिन उनकी तपस्या का सबसे प्रमुख लक्ष्य दूसरों को सुखी

---

1. गंगाप्रसाद पांडे - आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि महादेवी वर्मा, पृ॰25
2. प्रकाशचंद्र गुप्त - महादेवी की काव्य साधना, महादेवी वर्मा। संपादक शचीरानी गुर्टू, पृ॰25
3. डॉ॰नगेंद्र - दीपशिखा, महादेवी वर्मा, पृ॰200
4. महादेवी, दीपशिखा, छठा संस्करण 1962, भारती भंडार, इलाहाबाद

बनाना है । "दीपशिखा" के "चिंतन के क्षण" के अंत में महादेवी ने कहा है - "दीपशिखा" में अविश्वास का कोई कम्पन नहीं है । नवीन प्रभात के वैतालिकों के स्वर के साथ इसका स्थान रहे ऐसी कामना नहीं, पर रात की सघनता को इसकी लौ झेल सके यह इच्छा तो स्वाभाविक रहेगी ।"[1]

संकलित काव्य ग्रंथ

महादेवी ने कतिपय काव्य-संकलनों का प्रकाशन भी किया है । 1936 में प्रकाशित "यामा" में उनके प्रथम चार काव्य संग्रह- नीहार, रश्मि, नीरजा और सांध्यगीत-संकलित है । "यामा" और "दीपशिखा" पर उन्हें 1983 में "ज्ञानपीठ" पुरस्कार प्राप्त हुआ । उनकी चुनी हुई कविताओं के संकलन हैं - "संधिनी" "गीतपर्व" और "स्मारिका" ।

महादेवी वर्मा की काव्य-यात्रा में एक विशेष विकास-क्रम देखा जा सकता है । "नीहार" में धुंधलापन है । उसका परिष्कार "रश्मि" में हुआ है । विरह-पीड़ित आत्मा की दर्दीली कराह पाठक को संप्रेषित करने की क्षमता उनमें है । "नीरजा" और "सांध्यगीत" कवयित्री के विचारों का परिपाक हैं । विरह-वेदना से पुलकित और प्रफुल्लित महादेवी की आत्मा यहाँ सुख-दुख का सामंजस्य करने का प्रयास कर रही है । इनमें उन्हें अपने प्रेमी की स्पष्ट छवि कहीं दिखाई पड़ती सी लगता है । "सांध्यगीत" की पंक्तियों में जो चरितार्थता का आभास है उसका परिपाक

---

1. महादेवी - दीपशिखा - छठा संस्करण 1962, भारती भण्डार, इलाहाबाद ।

"दीपशिखा" में दर्शनीय है । "महीयसी महादेवी" में श्री गंगाप्रसाद पांडे ने "प्रमा" नामक चित्र-गीत-कृति का उल्लेख किया है ।[1] लेकिन अभी तक इसके प्रकाशन की सूचना नहीं है । यदि वह प्रकाश में आया होता तो महादेवी के काव्य की चरम परिणति की संपूर्ण जानकारी हमें प्राप्त हो जाती ।

अकारण-अकाल पर विद्रोह-बंगदर्शन

1944 में श्रीमती महादेवी वर्मा के संपादकत्व में "बंगदर्शन" का प्रकाशन हुआ । तत्कालीन शासक अंग्रेज़ों ने बंगाल में कृत्रिम अकाल की सृष्टि की । कवियों ने अपनी लेखनी द्वारा अपनी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की । उनका संग्रह है "बंगदर्शन" । इसकी "अपनी बात" में महादेवी ने लिखा - "प्रत्येक विचारक जानता है कि यह अकाल आकस्मिक वज्रपात नहीं है जिसका कारण दुर्दैव या संयोग मानकर जिज्ञासा विराम पा सके । यह तो मनुष्य के स्वार्थ की शिला पर उसके प्रयत्न और बुद्धि द्वारा निर्मित नरक है । अत: इसका कारण ढूँढने दूर न जाना होगा । इस दुर्भिक्ष की ज्वाला का स्पर्श करके हमारे कलाकारों की लेखनी-तूली यदि स्वर्ण न बन सकी तो उसे राख होना पड़ेगा ।"[2]

बंगाल की दुस्थिति पर महादेवी का मन द्रवीभूत हो गया । कवियों और कलाकारों से बंगाल की जनता को सहायता पहुँचाने की उन्होंने अपील की । इस प्रकार वैचारिक और आर्थिक सहायता

---

1. गंगाप्रसाद पांडे - जीवन झांकी, महीयसी महादेवी, पृ.38
2. महादेवी - अपनी बात, बंगदर्शन-1962, भारती भंडार, इलाहाबाद ।

अकाल पीड़ित जनता तक पहुँचाने में वे समर्थ हो गयी । "बंगदर्शन" से जो धन मिल गया उन्होंने वह भी उनकेलिए भेजा । "जब बंगाल में भयंकर अकाल पडा था तो उन्होंने अकाल पीड़ितों केलिए, कपडे भोजन और दवाइयाँ इकट्ठी की । "बंगदर्शन" नामक पुस्तक का सम्पादन किया, जिसका पूरा रुपया अकाल पीड़ितों के सहायता कोष में गया था ।"[1]

महान "बंग भू" की वेदना का अनुमान करके महादेवी उसकी तत्कालीन स्थिति पर विचार कर रही है -

"वेणुवन में भटकता है एक हाहाकार का स्वर,
आज छाले से जले जो भाव से वे सुभर पोखर,
छंद से लघु ग्राम तेरे,
खेत लय विश्राम तेरे,
वह चला इन पर अचानक नाश का निस्तब्ध सागर ।
जो अचल बेला बने तू आज वह गति-साधना ले ।"[2]

इस भावोज्वल कविता के अंत में वे बंगाल की पूर्वाधिक मंगलमयी होने की आशा करती हैं ।

"भारत के इस रक्त चन्दन में ज्वलित दिनमान जागे,
मन्द्र सागर तूर्य पर तेरा अमर निर्माण जागे,
क्षितिज तम साकार टूटे,
प्रखर जीवन-धार फूटे,
जाह्नवी की उर्मियाँ हो तार भैरव राग जागे ।

---

1. शिवचंदर नागर - श्रीमती महादेवी वर्मा - एक रेखाचित्र, संपा.शचीरानी गुर्टू
2. महादेवी - बंग भू शत शत बंदना ले.बंगदर्शन ।

अो विधात्री ! जागरण के गीत की शत अर्चना ले ।
ज्ञान गुरु इस देश की कविता हमारी बंदना ले ।
बंग भू शत बन्दना ले ।
स्वर्ण भू शत बन्दना ले ।"[1]

भारतीय संस्कृति की अपराजेय भूमिका "सप्तपर्णा"

"सप्तपर्णा" एक अनूदित काव्य है । 1960 में महादेवी ने इसका प्रकाशन किया । काव्यकला तथा अनुवाद कला में महादेवी की क्षमता का यह ग्रन्थ परिचायक है । भारतीय साहित्य की पौराणिक रचनाओं में से कुछ चुनी गयी कविताओं का सरलीकृत, बोधगम्य काव्यानुवाद इस पुस्तक में संग्रहीत है । इस ग्रंथ की "अपनी बात" में महादेवी कहती हैं - "प्रत्येक युग के साहित्य में नवीन तरंगाकुलता उसे मूल प्रवाहिनी से विच्छिन्न नहीं करती, वरन् उन्हीं नवीन तरंग, भंगिमाओं की अनंत आवृत्तियों के कारण, मूल प्रवाहिनी अपने लक्ष्य तक पहुंचने की शक्ति पाती है ।"[2]

धर्म, दर्शन और आध्यात्म का समन्वय "सप्त पर्णा" में हुआ है । इसकी मूल रचनायें आर्षवाणी वेद, वाल्मीकि, थेरगाथा, अश्वघोष, कालिदास, भवभूति तथा जयदेव की हैं । यह एक प्रकार से अतीत की परिक्रमा है ।

---

1. महादेवी - बंग भू शत शत बंदना ले·बंगदर्शन ।
2. महादेवी - अपनी बात, सप्तपर्णा । तृतीय संस्करण, 1982 लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद ।

भारतीय संस्कृति तथा परंपरा की गाथा - "हिमालय"

"बंगदर्शन" के समान ही "हिमालय" एक संपादित ग्रंथ है । भारत पर जो "चीन का आक्रमण हुआ उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप ही महादेवी ने 1963 में इसका प्रकाशन किया । भिन्न-भिन्न भारतीय भाषाओं में प्राचीन काल से हिमालय-विषयक जो कविताएं लिखी गयी थीं उनका संकलन है "हिमालय" । भारतीय एकता, भारत की स्वर्णिम संस्कृति आदि के सुन्दर चित्र इसमें हैं । भारतीय संस्कृति तथा परंपरा का हिमालय के साथ जो अटूट संबन्ध है, अधिकांश कविताओं का वही विषय है । महादेवी का मत है कि अपनी धरती से मनुष्य ने जिस हद तक तादात्म्य कर लिया हो उसी हद तक वह उस धरती पर अपराजेय है । इसे तादात्म्य की जानकारी सिर्फ साहित्य से उपलब्ध होता है । भारत की मुक्ति के लिए जिन वीरों ने परिश्रम किया और अपनी बलि दी उनके विषय में भी काफी प्रभावोत्पादक रचनाएं भी इस संकलन में संग्रहीत हैं । उन्हीं के प्रति यह ग्रंथ समर्पित है । चीन के आक्रमण से धीरज छोड देने के संदेश और प्रेरणा देना इस संग्रह का उद्देश्य है ।

संसार के किसी पर्वत की जीवन-कला इतनी रहस्यमयी न होगी, जितनी हिमालय की है । उसकी हर चोटी, हर घाटी हमारे धर्म, दर्शन, काव्य से ही नहीं हमारे जीवन के संपूर्ण नि:श्रेयस् से जुडी हुई है । जिस प्रकार गंगा-यमुना और अंत: सलिल सरस्वती के बिना हमारे महादेश के सजल पर रहस्यमय हृदय की कल्पना नहीं की जा सकती, उसी प्रकार अभ्रंकष हिमालय के बिना देश के उन्नत मस्तक की कल्पना सम्भव नहीं है ।"[1] महादेवी जी की दृष्टिमें

---

1. महादेवी - संकल्पिता (भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि)
प्रथम संस्करण 1987, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ।

दुनियाँ भर में हिमालय के समान कोई पर्वत नहीं होगा जिसका मानव की संस्कृति, काव्य, दर्शन, धर्म आदि के निर्माण में इतना महत्व हुआ हो । "वह मानों भारत की सश्लिष्ट विशेषताओं का ऐसा अखंड विग्रह है, जिस पर काल कोई खरोंच नहीं लगा सका ।"[1] भारत का हिमालय के साथ संबन्ध जितना बाहरी है उतना आंतरिक भी है । इसी प्रकार महादेवी भी मानती है कि हिमालय अपना है । इसीलिए भारत से उसे विच्छिन्न करने के विरोध में उन्होंने अपनी आवाज़ इस ग्रंथ के द्वारा उठाई है ।

"हिमालय" में कुछ हिन्दीतर भाषाओं की रचनाओं के काव्यानुवाद महादेवी ने संगृहीत किये हैं । इसमें संस्कृत की मूल कृतियाँ हिन्दी काव्यानुवाद के साथ प्रस्तुत की गयी है ।

"हमारे राष्ट्र के उन्नत शुभ्रमस्तक हिमालय पर जब संघर्ष की नीललोहित आग्नेय छटाएँ छा गयी, तब देश के चेतना केंद्र ने आसन्न संकट की तीव्रानुभूति देश के कोने कोने में पहुँचा दी ।"[2] उस प्रयास में महादेवी ने इस संकलन द्वारा अपना सफल योगदान दिया है ।

महादेवी वर्मा की गद्यरचनाएँ

इस प्रकरण में रेखाचित्रेतर गद्य रचनाओं का विश्लेषण अभीष्ट है ।

---

1. महादेवी - संकल्पिता (भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि) प्रथम संस्करण 1987, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।
2. महादेवी, भूमिका - हिमालय, प्रथम संस्करण 1963, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद ।

शृंखला की कड़ियाँ

सामाजिक समस्याओं के विश्लेषण में महादेवी वर्मा एक समाजशास्त्री की क्षमता रखती हैं । शृंखला की कड़ियाँ के निबंध इस बात के प्रमाण हैं । नारी समस्या के विभिन्न पहलुओं को इन निबंधों के माध्यम से महादेवी ने विश्लेषित किया है ।

सदियों से भारतीय नारी के मन में जो समस्याएं ज्वलंत रहीं उनको महादेवी ने शब्दबद्ध किया है । भारतीय समाज में नारी जीवन निकृष्ट माना जाता है । समाज और धर्म पुरुषाश्रित है । इसलिए नारी पुरुष के गुलाम के रूप में जीवन बिताती है । नारी को जो संस्कृति देवी मानते हैं उसी संस्कृति पर गर्व करने वाले पुरुष स्त्री से उसके अधिकारों को छीन लेता है । सामाजित तथा सांस्कृतिक परंपरा और धार्मिक आवरणों के सहारे पुरुष को यह आसानी से संभव हो जाता है । पुरुष हमेशा नारी की कोमलता से लाभ उठाते आ रहा है ।

पुरुष और स्त्री के व्यक्तित्व के विकास की दिशाएँ भिन्न हैं । व्यक्तित्व विकास केलिए सच्चे नागरिक बनना ज़रूरी है । महादेवी की राय में "नागरिक" का अर्थ पशु के समान मूक रहकर जिंदा रहना नहीं है । उसे कानून और व्यवस्था का सही ज्ञान अनिवार्य है । तभी वह अपने अधिकारों की रक्षा कर पाएगी ।

नारी के व्यक्ति-विकास की सबसे बडी बाधा उसका घर में बंद रहना है । वह चारों ओर घिरी हुई सीमाबद्ध होकर मुरझा जाती है । महादेवी कहती हैं कि इस स्थिति में परिवर्तन जरूर लाना चाहिए । महादेवी की दृष्टि में पुरुष की अपेक्षा स्त्री का कार्यक्षेत्र विशाल होना चाहिए ।

घर के बाहर स्त्री केलिए उपयुक्त अनेक कार्य क्षेत्र उपलब्ध हैं । शिक्षा, चिकित्सा आदि क्षेत्र में पुरुष की अपेक्षा स्त्री अधिक सफल रहेगी । बालकों की मानसिक शक्तियाँ स्त्री के स्नेह की छाया में पुष्ट और विकसित हो सकती है । पुरुष से उनका संपर्क उन्हें असमय कठोर बना देगा । चिकित्सा के क्षेत्र की बात भी इसी प्रकार है । सहानुभूति तथा स्नेह प्रकट करने में स्त्री की कोमलता सहायक है । स्त्रीयों को कानूनी शिक्षा प्रदान करना, साहित्य रचना करना, नारी और बालकों केलिए संस्थाएं खोलना आदि अनेक कार्य स्त्री कर सकती है ।

हिन्दू स्त्री के पत्नीत्व की चर्चा करते हुए महादेवी के स्वर में विद्रोह की छाया पडती है । स्त्री कभी अपनी इच्छाके अनुसार किसी भी बात पर निर्णय नहीं ले सकती है । कभी-कभी विवश होकर वह मातृत्व भी स्वीकार करती है । मातृत्व ही बात नहीं, किसी भी क्षेत्र में वह स्वतंत्र नहीं हैं । इसलिए महादेवी कहती हैं - "माता-पिता को बाध्य होना चाहिए कि वे अपनी कन्याओं को अपनी-अपनी रुचि तथा शक्ति के अनुसार कला, व्यवसाय आदि की ऐसी शिक्षा पाने दें, जिससे उनकी शक्तियाँ भी विकसित हो सकें और वे इच्छा तथा आवश्यकतानुसार अन्य क्षेत्रों में कार्य भी कर सकें ।"[1]

---

1. महादेवी - शृंखला की कडियाँ, पृ.85
षष्ठ संस्करण 1950, भारती भंडार, इलाहाबाद ।

स्त्री अपने अधिकारों से हमेशा वंचित रहती है । अपने पिता की जायदाद में भी उसका कोई अधिकार नहीं होता । इसलिए वह व्याह करने केलिए मज़बूर हो जाती है ।

अन्याय के प्रति असहिष्णु, महादेवी ने भारतीय नारी-जीवन की दर्दनाक समस्याओं का विश्लेषण "शृंखला की कड़ियाँ" में प्रस्तुत किया है । नारी के प्रति अत्याचार समाज में बढ़ती जा रही है । इसलिए महादेवी इस संग्रह के द्वारा अपनी

क्षणदा

महादेवी के चिंतन के कुछ क्षणों का समाहार है "क्षणदा"। भारतीय संस्कृति तथा जीवन से संबन्धित कुछ विश्लेषणात्मक निबंध इसमें संग्रहीत हैं ।

"करुणा का संदेशवाहक" श्रीबुद्ध के व्यक्तित्व के पुनर्मूल्यांकन के साथ पुस्तक प्रारंभ होती है । गतिहीन भारतीय संस्कृति को "शतशत धाराओं में फूटकर" बहने में "बुद्ध के पर्वत जैसे व्यक्तित्व" का बडा योगदान रहा है । हम बुद्ध के जिस व्यक्तित्व से परिचित हैं, उससे महादेवी का बुद्ध काफी भिन्न है । महादेवी बुद्ध को यथार्थवादी दृष्टि से देखती हैं । महादेवी के अनुसार बुद्ध की दूरदर्शिता तथा संगठन शक्ति बेजोड है । उन्होंने "महामैत्री और महाकरुणा के माध्यम से दुनिया पर विजय पा ली है ।

संस्कृति का प्रश्न "निबंध में महादेवी ने भारतीय तथा अन्य संस्कृतियों पर विचार किया है । वे कहती है, "किसी मनुष्य समूह के साहित्य, कला, दर्शन आदि के संचित ज्ञान और भाव का ऐश्वर्य ही उसकी संस्कृति का परिचायक नहीं, इस समूह के प्रत्येक व्यक्ति का साधारण शिष्टाचार भी उसका परिचय देने में समर्थ है ।"[1] महादेवी की दृष्टि में संस्कृति किसी भी उत्तराधिकारी का पैतृक धन है । उसे पुरानी मृत जाति में नहीं जीवित प्रत्येक मनुष्य में उसे खोजना है ।

"कसौटी पर" निबंध में भी महादेवी ने यह विचार प्रकट किया है । वे पुराने आदर्शों पर पडे रहने की प्रवृत्ति की आलोचना करती हैं । वे समसामयिक परिवर्तन की पक्षपाती हैं । "स्वर्ग का एक कोना" श्रीनगर स्वर्णिम, स्वर्गीय रंगों से झिलमिलाती है । लेकिन महादेवी वहाँ कुरूपता का दर्शन करती हैं - "प्रकृति ने इन्हें इतना भव्य रूप दिया, परंतु निष्ठुर भाग्य ने दियासलाई के डिब्बे जैसे छोटे मलिन अभव्य घरों में प्रतिष्ठित कर और एक मलिन वस्त्र मात्र देकर इनके सौन्दर्य का उपहास कर डाला .... ।"[2]

कला और हमारा चित्रमय साहित्य में महादेवी ने चित्रमय साहित्य की उपादेयता तथा उसकी दुखस्था पर विचार कर रही हैं । साथ ही साथ वे इस कला से जुटी हुई त्रुटियों से बच निकलने का संदेश भी देती हैं । संपादकों के कर्तव्यों पर अपने विचार महादेवी ने "दोष किसका" में प्रकट किया है ।

---

1. महादेवी - क्षणदा, प्रथम संस्करण 1956, भारती भंडार, इलाहाबाद
2. वही, पृ.47

संपादक, व्यक्ति और मानव-समुदाय के बीच का दूत है । उसे सच्चाई पर अटल रहना पड़ता है । जैसे नश्तर हाथ में आ जाने से कोई डाक्टर नहीं बनता उसी प्रकार संपादक नहीं बन सकता । उसे पूरे मनोयोग से तत्कालीन सांस्कृतिक, साहित्यिक, राजनीतिक और सामाजिक गतिविधियों को समझना चाहिए और उसका प्रतिबिंब समाज के सामने रखना चाहिए । इस निबंध में महादेवी ने बडी आत्मीयता के साथ लेखकों की दुरवस्था पर विचार किया है । दुनिया भर के लोगों को वे मस्तिष्क का भोजन देते हैं । लेकिन उनकी अपनी दशा पिंजर बद्ध सिंह के समान है ।

महादेवी केलिए यात्रा जिज्ञासापूर्ति का साधन है । विभिन्न स्थानों एवं लोगों तथा उनके जीवन की असली स्थिति का परिचय करना ही उनका लक्ष्य है । यों बद्रीनाथ यात्रा पर उन्होंने एक मार्मिक निबंध लिखा है - "सुई दो रानी, डोरा दो रानी" शीर्षक का मतलब भिक्षाटन से है । हमारे आराधना स्थलों में जो कुप्रथाएं विद्यमान हैं उनपर यहाँ महादेवी ने व्यंग्य कसा है । उनके शब्द काफी कर्कश है - "उस द्वार को भी पार कर नर-नारायण की मूक प्रतिमा देखी, जिस पर न हर्ष था या न विषाद, न कभी कुछ होने की आशा ही थी । केवल उनके पुजारी की आखें हर्ष से नाच रही थीं, वे दोनों हाथों से चढावे के थाल से चांदी की राशि बटोर रहे थे । भगवान केलिए नहीं, परंतु उनके पुजारी की प्रसन्नता केलिए मैं ने भी रजत खंड चढाकर विष्णु मुख विदा ली ।"[1] किसी धन्ना सेठ को देखकर पंडाजी खुश हो जाते हैं,

---

1. महादेवी - सुई दो रानी, डोरा दो रानी, क्षणदा, प्रथम संस्करण 1956, भारती भंडार, इलहाबाद, पृ.85

किसी गरीब को देखकर उनकी सारी खुशी मिट जाती है । इसी दुरवस्था के प्रति महादेवी अपना दुख प्रकट करती हैं ।

"हमारा देश और राष्ट्र भाषा" निबंध में महादेवी कहती हैं कि भारत की "विविधता का नष्ट होना उसके व्यक्तित्व का पाषाणीकरण है ।"[1] राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का समर्थन करते हुए वे कहती हैं - "हिन्दी अपना भविष्य किसी के दान में नहीं चाहती वह तो उसकी गति का स्वाभाविक परिणाम होना चाहिए ।"[2] वे मानती हैं कि भारत के सर्वाधिक लोगों की भाषा हिन्दी है । इसलिए राष्ट्रभाषा के रूप में उसे स्वीकृत करने में कोई आपत्ति नहीं है ।

साहित्यकार की सामाजिक सापेक्षता के संबंध में महादेवी अपना विचार "साहित्य और साहित्यकार" में प्रकटकिया है । "हमारे वैज्ञानिक युग की समस्या इस संग्रह का अंतिम निबंध है । उनकी राय में दूरी की निकटता विज्ञान की सबसे बडी उपलब्धि है । लेकिन यह निकटता कितनी उपयोगी है, यही प्रश्न है । आसमान के बादल और बमवर्षक दोनों हमारे निकट हैं । एक उपयोगी और दूसरा हानिकारक है । इस प्रकार दूरी की निकटता कभी कभी मनुष्य-मनुष्य के बीच की दूरी को बढाती है । हमें अपनी सांस्कृतिक परंपरा को एक नई दिशा प्रदान करने केलिए हमारी बुद्धि में अभेद और हृदय में सामंजस्य लाना है । लेकिन आज मनुष्य, मनुष्य से डरता है । महादेवी चेतावनी देती है कि आज दूरी को निकटता बनाने का मुहूर्त में हमें निकट की दूरी से सावधान रहने की आवश्यकता है ।

---

1. महादेवी - हमारा देश और राष्ट्रभाषा, क्षणदा, पृ.100
2. वही, पृ.100

साहित्य में वैदिक साहित्य सबसे प्राचीन माना जाता है । वैदिक काल से लेकर भारतीय साहित्य तेजी से प्रगति करते आ रहा है । भारतीय साहित्य की महत्ता को महादेवी वर्मा ने "संकल्पिता" के आठ निबंधों में संग्रहीत किया है । भारतीय संस्कृति तथा परंपरा के अनुरूप भारतीय साहित्य ने विकास पाया है । इसी दृष्टि पर महादेवी ने अधिक बल दिया है । इस संग्रह में "वसुधैव कुटुंबकम" की भावना प्रस्फुटित हुई है ।

इस संग्रह की भूमिका में भारतीय साहित्य की परिवर्तनशीलता पर महादेवी ने जोर दिया है । भारतीय वाङ्मय: एक दृष्टि" इस संग्रह का प्रथम निबंध है । इसमें महादेवी ने वैदिक साहित्य का संक्षेप में विश्लेषण किया है । वे कहती है - "नदी के एक होने का कारण उसका पुरातन जल नहीं, नवीन तरंग भंगिमा है ।"[1] जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विशेषकर साहित्य में परिवर्तनशीलता अनिवार्य है । भारतीय साहित्य की परिवर्तनशीलता की चर्चा के दौरान लेखिका रामायण, महाभारत तथा बौद्ध सिद्धांतों से समृद्ध पाली साहित्य की भी चर्चा करती हैं । वाल्मीकी, अश्वघोष, कालिदास, भवभूति, जयदेव आदि भारतीय वाङ्मय-सृजाकों के साहित्य का विश्लेषण करके वे उनकी रचनाओं के मर्म तक पाठक को ले जाती हैं ।

"भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि" के द्वारा महादेवी साबित करना चाहती है कि भारतीय संस्कृति पच्चीस हज़ार से लेकर पचहत्तर हज़ार वर्ष तक पुरानी है । और वह संपूर्ण मानव जाति का उत्तराधिकार है । भारतीय संस्कृति के संदर्भ में हिमालय का

---

1. महादेवी - भारतीय वाङ्मय: एक दृष्टि, संकल्पिता, प्रथम संस्करण 1987, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ.3

सर्वाधिक महत्व है । अन्य नदियों तथा पहाडों ने भी भारतीय संस्कृति के विकास में अपना योग दिया है । हमारी चिंतन पद्धति भी इन प्राकृतिक परिवेशों से संबद्ध है ।

भारत की राष्ट्रीयता पर प्राकृतिक परिवेशों के प्रभाव का विश्लेषण "प्राकृतिक परिवेश और राष्ट्रीयता" में हुआ है । वे मानती हैं कि राष्ट्र रूपी शरीर का चेतना केन्द्र है राष्ट्रभावना भारतीय राष्ट्रीयता की परंपरा का उद्घाटन महादेवी ने इस निबंध के माध्यम से किया है ।

"हमारा देश और राष्ट्रभाषा" तथा 'साहित्य और साहित्यकार" "क्षणदा" में संगृहीत निबंध है । "संकल्पिता" का अंतिम निबंध साहित्यकार : व्यक्तित्व और अभिव्यक्ति" है । महादेवी का मंतव्य है कि व्यक्तियों के बाह्यकरण और अंत:करण की क्रिया-प्रतिक्रिया के कारण ही उनके व्यक्तित्वों में अंतर आ जाता है । प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का कोई स्थिर रूप होता है । इसलिए प्रत्येक साहित्यकार के दृष्टिकोण में अंतर होता है । व्यक्तित्व विकास की सीमाएं प्रकृतिनिर्मित ऋत् और मानवनिर्मित नियम है । इस प्रकार सीमाबद्ध व्यक्तित्व का प्रभाव उनकी रचनाओं में ज़रूर पडता है ।

साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध

इस निबंध संग्रह का प्रकाशन 1962 में हुआ था । इसमें आठ आलोचनात्मक निबंध संगृहीत हैं । श्री गंगाप्रसाद पांडेय ने इस ग्रंथ की विज्ञप्ति में लिखा है, "इन निबंधों में महादेवीजी को

व्यापक तथा गहन अनुभूति, समन्वयात्मक चिंतन-मनन और सामंजस्य-पूर्ण जीवन-दर्शन का जो उन्मेष उद्घाटित हुआ है, वह जीवन और साहित्य के पारस्परिक संबंधों को स्पष्ट करने की अद्भुत क्षमता के साथ विवेचना के स्तर को ऊपर उठाने में भी सफल हैं। सिद्धांतों को धो-माँजकर चमाचम रखनेवाले और जीवन में जंग लग जाने देनेवाले आलोचकों के प्रति उनका कथन कितना मार्मिक है।"[1]

"साहित्यकार की आस्था" में महादेवी कहती हैं कि आस्था का मूल संस्कारजन्य है, पर प्रसार और व्याप्ति अनुभवों की उपलब्धि है। साहित्यकार समाज का अंग है। इसलिए उसके जीवन-दर्शन और आस्था उस समाज और युग के आधार पर निर्मित होते हैं। पुराने समय में साहित्यकार विश्व भर के जीवों से आस्था रखते थे। लेकिन आज मनुष्य संकुचित हो गया है। उसकी आस्था खो चुकी है। महादेवी ने अपनी आस्था यहाँ स्पष्ट की है - "माता जिस प्रकार आस्था के बिना अपने रक्त से संतान का सृजन नहीं कर सकती, धरती जिस प्रकार ऋतु के बिना अंकुर को विकास नहीं दे सकती, साहित्यकार भी उसी प्रकार गंभीर विश्वास के बिना अपने जीवन को अपने सृजन में अवतार नहीं दे पाता।"[2] "काव्य-कला" निबंध में महादेवी यह विचार प्रकट करती हैं कि अभिव्यक्ति-पद्धति के भाषा, छंद आदि व्यक्तिगत पक्ष को पकड़ते हुए भी जीवन के अनिर्वहित सामंजस्य को अभिव्यक्त करना कवि का कर्तव्य है। उसे सत्य के साथ रहना चाहिए। यह सत्य साधना का माध्यम से ही उपलब्ध हो जाता है।

---

1. गंगाप्रसाद पांडेय - विज्ञप्ति, साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध, 1962, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 14
2. महादेवी वर्मा - साहित्यकार की आस्था, साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध, पृ. 29

"छायावाद" निबंध के माध्यम से महादेवी "छायावाद" के बारे में पाठकों और विचारकों के संदेह और भ्रम मिटाना चाहती है । छायावाद में प्रकृति, नारी भावना, कल्पना, दुखवाद, स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति, राष्ट्रीयता आदि का सोदाहरण विवेचन छायावाद में हुआ है ।

रहस्यवादी कविता को विदेशी अनुकरण और काल्पनिक कहनेवालों को महादेवी "रहस्यवाद" के माध्यम से उत्तर देती हैं । उनके विचार में यह प्रवृत्ति भारतीय साहित्य की एक मौलिक प्रवृत्ति है । वैदिक, पाली और प्राकृत काव्यों के माध्यम से वे यह सिद्ध कर देती हैं ।

महादेवी के सभी निबंध चाहे सामाजिक समस्या प्रधान हो या साहित्य से संबद्ध, वे गंभीर चिंतन से प्रसूत हैं । किसी भी विषय पर वे वस्तुनिष्ठ आलोचना कर सकती है । "साहित्य के सनातन और स्थायी सत्यों का निरूपण जिस निष्पक्ष और परिमार्जित एवं सरस-स्पष्ट शैली में हुआ है, वह अन्यत्र दुर्लभ है । अपने युग में प्राण प्रवेग भरने के साथ युग की समीक्षा को प्रेरणा देने में भी यह समीक्षा सफल रही है ।"[1]

संभाषण

1975 में "महादेवी का "संभाषण" नामक ग्रंथ प्रकाशित हुआ । इसमें पंद्रह भाषण संग्रहीत हैं । भिन्न-भिन्न अवसरों में भिन्न-भिन्न स्थानों में ये भाषण दिए गए थे । इसके द्वारा महादेवी ने भारतीय

---

1. गंगाप्रसाद पांडेय - विज्ञप्ति, साहित्यकार की आस्था तथा

समाज, संस्कृति, शिक्षा, भाषा, साहित्य और साहित्यकार, नारी समस्या आदि पर अपने स्पष्ट विचार प्रकट किए हैं । इन निबन्धों के शीर्षक इस प्रकार हैं - §1§ शिक्षा का उद्देश्य, §2§ मातृभूमि देवो भव, §3§ साहित्य, संस्कृति और शासन §4§ कुछ विचार §5§ संस्कृति और प्राकृतिक परिवेश §6§ भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि §7§ भाषा का प्रश्न §8§ हमारा देश और राष्ट्रभाषा §9§ साहित्य और साहित्यकार §10§ साहित्यकार और समाज, §11§ भारतीय संस्कृति और नारी §12§ नये दशक में महिलाओं का स्थान §13§ स्त्री के अर्थ-स्वातंत्र्य का प्रश्न §14§ घर और बाहर, §15§ युद्ध और नारी ।

महादेवी के अन्य गद्य संकलन हैं - "मेरे प्रिय संस्मरण" "मेरे प्रिय संभाषण और मेरे प्रिय निबंध ।

महादेवी की इन गद्य रचनाओं को निकट से देखने पर एक तथ्य स्पष्ट होता है कि वे किसी भी विषय पर अधिकार पूर्वक अपना मत प्रकट कर सकती हैं । सामाजिक समस्याएं उनके विचार के विषय बनते रहते हैं । सच बात तो यह है कि वे एक साहसिक साहित्यकार है ।

§§§§§§§§§§§§

अध्याय - तीन

रामवृक्ष बेनीपुरी का रचनाव्यक्तित्व

अध्याय - तीन

रामवृक्ष बेनीपुरी का रचनाव्यक्तित्व

बेनीपुर गाँव के "बेनीपुरी"

बेनीपुर गाँव "बागमती" के किनारे पर स्थित है । बेनीपुर गाँव का बागमती नदी के साथ गहरा संबंध भी है । हर साल बागमती में बाढ़ आया करती है और बेनीपुर पानी-पानी हो जाता है । इस का गहरा प्रभाव हर बेनीपुर-निवासी पर पड़ता है । बागमती को पार किए बिना बेनीपुर के लोग शहर से संबन्ध नहीं रख सकते । पुल के अभाव में लोग नाँव पर ही बागमती पार करते हैं । बागमती का प्रत्येक बूँद बेनीपुर निवासियों से संबंध रखता है । हिन्दी के प्रसिद्ध गद्यकार श्री॰ रामवृक्ष शर्मा का जन्म इसी बेनीपुर गाँव में 23 दिसंबर 1899 को हुआ । बिहार के मुज़फ्फरपुर जिले का बेनीपुर साधारण किसानों से भरा गाँव है । श्री॰ रामवृक्ष शर्मा का पिता यदुनंदन सिंह भी एक साधारण कृषक थे । बचपन में ही माँ-बाप की मृत्यु हो गयी ।"[1]

1॰ रामरीझन रसूलपुरी - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, 1969 पृ॰200-201

उन्हें मां-बाप का स्नेह अधिक समय तक नहीं मिला । बेनीपुर गांव से उनका बड़ा लगाव था । इसलिए उन्होंने अपने नाम के साथ "बेनीपुरी" नाम भी जोड दिया है । इस प्रकार रामवृक्ष शर्मा बाद में रामवृक्ष बेनीपुरी के नाम से प्रसिद्ध हुए ।

प्रारंभिक शिक्षा

पिता की मृत्यु के उपरांत मामा द्वारिकासिंह बेनीपुरी को अपने गांव वंशीपचडा ले गए । वहीं उनकी प्राथमिक शिक्षा हुई । उसके बाद वे अपने बहनोई के साथ मुजफ्फपुर में रहने लगे । वहां "भूमिहार ब्राह्मण कालेजियट स्कूल" में इनकी विधिवत् शिक्षा प्रारंभ हुई ।[1] वे बडे कुशाग्र बुद्धि थे । अपने दर्जे में वे हमेशा प्रथम स्थान पर आया करते थे । हिन्दी भाषा तथा साहित्य के प्रति उनका बडा लगाव था । आठवें वर्ग में पढ़ते समय वे "हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग" की हिन्दी विशारद परीक्षा पास हुए ।[2] पंडित मथुरा प्रसाद दीक्षित बेनीपुरी के अध्यापक थे । वे बहुत प्रसिद्ध हिन्दी विद्वान थे । उन्होंने बालक रामवृक्ष की प्रतिभा को पहचान लिया । वे उन्हें काफी प्रोत्साहन देते रहे । बेनीपुरी प्रवेशिका परीक्षा की तैयारी कर रहे थे । उस समय पंडित मथुरा प्रसाद जी सरकारी स्कूल भूमिहार ब्राह्मण कालिजियट स्कूल की नौकरी छोडकर असहयोग आंदोलन में कूद पडे । फिर वे "तरुण भारत" का संपादक बन गए । उन्होंने बेनीपुरी को सहकारी संपादक नियुक्त किया । इस दौर में उन्हें पत्रकारिता का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त हुआ ।

---

1. रामरीझन रसूल पुरी - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.20।
2. वही, पृ.20।

बेनीपुरी की स्कूली शिक्षा भी वहीं समाप्त हो गयी ।

शिक्षार्जन केलिए बचपन में बेनीपुरी ने काफी कठिनाई झेली है । गाँव में कालेज न होने के कारण उन्हें शहर जाना पडा था । उन्होंने देखा कि अपने गाँव में कोई भी उच्च शिक्षा पा नहीं सकता, क्योंकि आस-पास में कोई कालेज नहीं था । इसलिए उन्होंने संकल्प किया कि अपने गाँव में एक कालेज की स्थापना करूँ । अपनी इस अभिलाषा की पूर्ति के लिए उन्होंने अथक परिश्रम किया । अपनी अस्वस्थ अवस्था में भी वे गाँव-गाँव घूमकर पैसे इकट्टा करते थे । "दिसंबर की ठिठुरती रात में पैदल गाँव-गाँव धांगना ! कहीं खाना, कहीं सोना, और कहीं मांगना । उस बुढापे और रोग जर्जर शरीर में भी उन्हें जब मैं दिन-रात खटते देखता तो लगता वे अपार कार्य-क्षमता के उच्छल ज्वार भाटा हो ।"[1] इस संबंध में श्री॰ रामस्वार्थ अभिनव कहते हैं कि उनके सभी दोस्त छोड गए फिर भी उनकी हालत थी - तन थका-थका पर मन कहता है - बढते चलो, बढते चलो बेनीपुरी ।"[2] और वे बढते चले ।

किसी भी महान व्यक्ति के जीवन में एक ऐसा मोड दिखाई देता है जो अप्रत्याशित रूप से घटित हो जाता है । वह उनके सफल जीवन की प्रथम सोपान या निमित्त होता है । 1920 का असहयोग आंदोलन बेनीपुरी केलिए एक निमित्त बन गया । इसका कारण उनकी देशभक्ति है । गांधीजी से वे किस हद तक प्रभावित थे, इसका अनुमान इन शब्दों से लगा सकते हैं -

---

1॰ सुरीन्द्रनाथ दीक्षित - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰292

2॰ रामस्वार्थ चौधरी "अभिनव" - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक 1969, पृ॰215

"असहयोग का बिगुल फूंकते तुम मुजफ्फरपुर पहुंचे थे। ओहो, कैसी भीड उमडी थी तुम्हारे दर्शनों केलिए ! दर्शनार्थियों ने तुम्हारे पैर छू-छूकर उन्हें घायल कर दिया था। तुम्हें निकट से देखूं, इस केलिए मैं ने स्वयं-सेवकों में नाम लिखा लिया था ! तुम मना कर रहे थे, हम लोगों को हटा रहे थे, किन्तु उस पागल भीड को कौन रोके ! तुम्हारी वेशभूषा में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ था। हां, कपडे और भी खुरदरे हो चले थे ! किंतु ज्योंही तुम मुंह खोलते, लगता, ज्वालामुखी ने मुंह खोला है - एक-एक शब्द, क्रांति के शोले।"[1]

संघर्षशील जीवन

बेनीपुरी आगे रखे पैर पीछे हटानेवाले नहीं थे, व्यक्तिगत रूप से भविष्य के बारे में सोचनेवाले भी नहीं थे। अन्यथा वे प्रवेशिका की परीक्षा छोडकर कभी स्वतंत्रता आंदोलन में कूद नहीं पड़ते। आज़ादी के समर में भाग लेने के उनका कोई वैयक्तिक लाभ नहीं था। उनके मन में देश की रक्षा का विचार था। उन्होंने संकल्प किया और आगे करते गए। जीवन के अंत तक इस प्रकार का संकल्प उनमें हम देख सकते हैं।

1934 में बिहार में भीषण भूकंप भी आया। भूकंप-पीडितों को सांत्वना देते गांधीजी वहां आए थे। उस स्थान में गांधीजी की स्मृति में एक कालेज बनवाने की इच्छा बेनीपुरी

---

1. रामवृक्ष बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.13
   सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, 196।

को हुई । बेनीपुरी चाहते थे कि उस कालेज का नाम "बागमती कालेज" रखा जाय । क्योंकि गांधीजी बागमती के कारण ही वहां पधारे थे । वे गांव में ही कालेज बनाना चाहते थे । क्योंकि गांधीजी की सदा इच्छा रही कि सुख-समृद्धि, ज्ञान - विज्ञान को नगर से खींचकर देहात में लाया जाय ।"[1] गांधी भूमि के बारे में उनका सपना इस प्रकार था - "गांधीजी भूमि में एक कालेज बन जाय, बीच में पचास फुट ऊँचे स्तंभ पर महात्माजी का मूर्ति हो, जहां गांधीजी का मंच बना था वहां एक गांधी-स्वास्थ्य मंदिर बन जाय, इस गांधी-भूमि में साहित्य, संगीत और कला की त्रिवेणी अहर्निश बहा करे । भव्य भवनों से पूरित नाना प्रकार की पुष्पराजी से सुसज्जित, युवक-युवतियों के कलकूजन से मुखरित इस आदर्श संस्था की स्थापना केलिए यदि में अपना जीवन-दान कर दूँ - तो क्या वह सब प्रकार से शुभ और सुंदर नहीं होगा ?"[2] इस स्वप्न को सफल बनाने का अथक परिश्रम उन्होंने किया ।

निष्ठावान व्यक्ति

बेनीपुरी का विश्वास था कि कर्मनिरत होने पर सभी कार्य सफल हो सकते हैं । इसलिए वे जार्ज बर्नार्ड शॉ के ये शब्द कहा करते थे, कार्य ही मेरे जीवन की खुशी है ।[3] उनके पास व्यर्थ समय नहीं था । शौचालय में भी वे पत्र पढते थे ।"[4]

---

1. रामस्वार्थ चौधरी अभिनव - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक पृ.214
2. वही, पृ.214
3. वही, पृ.3
4. वही, पृ.3

उनके अंतर सचमुच एक विराट मानव छिपा हुआ था - कर्मठ और संघर्षशील ।"[1] उनका संपूर्ण जीवन संघर्षशील था । बचपन में मां-बाप की मृत्यु से लेकर जीवन के अंतिम समय तक उनका जीवन संघर्षमय रहा था । संघर्षों में भी मुस्कराहट के साथ उनका सामना करना उनकी एक बडी विशेषता है । इसी कारण कलक्टर सिंह केसरी कहते हैं कि "बेनीपुरी तूफानों और झंझाओं पर सवार थे ।"[2] बडे से बडे संकट आने पर भी वे मुस्कुराते ही रहते थे, जो कि नैसर्गिक योद्धा का लक्षण है ।"[3] बेनीपुरी जी कहते हैं - "हर दुर्भाग्य मेरा सौभाग्य बनता आया है । माता-पिता स्वर्गीय नहीं हुए होते तो आज मैं बेनीपुर में भैंस चराता, घास छीलता ... किंतु वह न होता, जिसने मेरे छोटे से गांव को देशव्यापी बना दिया है ।"[4] सामान्य रूप से लोग जिसे आनंद मानते हैं, वह उनकी दृष्टि में आनंद नहीं है । सेठ या बैल को ही आनंद चाहिए । क्योंकि भरे पेट से कोई सर्जनात्मक कार्य नहीं होता । उसकेलिए संघर्ष ही चाहिए । "कला का पिता संघर्ष है ।"[5] बेनीपुरी केलिए यही संघर्ष आनंद है । इसलिए वे शारीरिक आवश्यकताओं की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया करते थे । कहते हैं - कुंभकर्ण के संग्राम हम नहीं । जिस तारीख को सोते हैं,

---

1. रामस्वार्थ चौधरी - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक पृष्ठ-214
2. वही, पृ.5।
3. वही, पृ.58
4. वही, पृ.69
5. वही, पृ.69

उसी तारीख को जागते हैं ।"[1] उनके घर में चार "अखंड चीज़" थे उनका पंखा, रेडियो, नौकर और स्वयं वे ।"[2]

गरीबी का एहसास

कठोर गरीबी से बेनीपुरी का जीवन गुजरा था । इसलिए गरीबी का सच्चा अर्थ वे जानते थे । यौवनावस्था तक कई प्रकार के अभाव से उन्हें गुजरना पडा । उनका जन्म साधारण-से-साधारण, बल्कि गरीब परिवार में हुआ था । मगर गरीबी की बाधा को उन्होंने स्वीकार नहीं किया । उनकी शिक्षा केवल मेट्रिक तक हुई थी, किंतु यह बाधा भी उनके विकास को नहीं रोक सकी । तेजस्वी और अपना निर्माण आप करनेवाले लोग धनी खानदानों में कभी-कभी ही पैदा होते हैं । बेनीपुरी जी भी उसी प्रकार बढे थे, जिस प्रकार गरीब परिवार के नवयुवक अपना विकास करते हैं ।"[3] स्पष्ट है कि गरीबी के शिकार होकर भी वे विचलित नहीं हुए । गरीबी उसमें किसी भी प्रकार की कुंठा ला नहीं सकी ।[4] लेकिन वे हमेशा उसकी याद रखते थे - "तीस वर्ष की उम्र तक रेशमी और ऊनी कपडा नहीं देखा ।"[5] बचपन में माँ-बाप की मृत्यु, गरीबी, अभाव आदि के कारण कोई सामान्य व्यक्ति असुरक्षा का अनुभव करेगा । वह उस चिंता में अपना नाश भी

---

1. रामस्वारथ चौधरी - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.256
2. वही, पृ.256
3. रामधारी सिंह दिनकर - संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ.97
   प्रथम संस्करण 1987
   नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।
4. नरेन्द्र सिन्हा - हिन्दी का मस्तमौला शब्दशिल्पी, गगनांचल
   वर्ष 10, अंक 3, 1987
5. वीरेन्द्र नारायण - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.255

कर सकता है । लेकिन बेनीपुरी जी ऐसे संघर्षों से होकर साहसिकता के साथ गुज़र गए ।

मानवीयता

बेनीपुरी दूसरों का दुख अच्छी तरह समझ सकते थे । दु:खियों और अभावग्रस्तों की सहायता करने केलिए हमेशा वे तैयार थे । बेनीपुरी जी के जीवन और संपूर्ण साहित्य में एक महान मानवतावादी का रूप हम देख सकते हैं । उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था । साहित्य और भाषण तथा जीवन में उनका एक ही रूप था । जो स्वर उनके जीवन में मुखर हुआ, वही उनके साहित्य में भी ।"[1]

आचार्य शिवपूजन सहाय से बेनीपुरी की गाढी मित्रता थी । जब शिवजी क्षयरोग से पीडित हुए तो बेनीपुरी ने एक मार्मिक अपील निकाली । सरकार की ओर उनकी चिकित्सा कराने का सफल प्रयास भी उन्होंने किया ।[2] जब शिवजी अस्पताल में पडे थे श्री·वीरेन्द्र नारायण उनके साथ अस्पताल में थे । उनसे बेनीपुरी ने कहा - "देखो बबुआ ! भैया का इलाज पैसे केलिए रुकना नहीं चाहिए । जब सौ रुपए रह जाय तो मुझे खबर कर देना ! यहाँ की देखभाल तुम्हारे ऊपर, बाहर का जिम्मा मेरा ।"[3] किसी भी प्रकार की अपनी कठिनाई के बारे में विचार

1· प्रकाशचंद्र गुप्त - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ·129, 1969
2· आनंद नारायण शर्मा, नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ·17
3· वीरेन्द्र नारायण - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ·255

किए बिना दूसरों की सहायता करने में बेनीपुरी कभी हिचकते नहीं थे। जिसे ज़रूरत हो उसका वे सहायक ज़रूर थे। इसी प्रकार योगेन्द्र शुक्ल की चिकित्सा भी बेनीपुरी ने की। इसके बारे में कपिल जी कहते हैं योगेन्द्र शुक्ल की तारीफ, उनकी दिलेरी की प्रशंसा सभी करते थे, पर उनके निवास और इलाज केलिए व्यवस्था बेनीपुरी जी को ही करनी थी।[1] बडे बडे साहित्यिकों से लेकर विद्यार्थियों तक को उन्होंने काफी सहायता की है।

पैसा लेने से इनकार करने पर भी बेनीपुरी लेखकों का अभाव समझकर उन्हें पैसा भेज दिया करते थे। ओंकार शरद को उन्होंने यह पत्र भेजा - ".... रुपए इसलिए कि तुम्हें दौड-धूप में परेशानी न पडे तुम्हारा स्वास्थ्य खराब रहता है। ..... जिद न करो। मेरी आज्ञा है, स्वीकार करो। वे बिना कहे ही दूसरों की कठिनाइयाँ समझ पाते थे। "नई धारा" में काम करते समय वे रुपये केलिए तंग रहते थे। शरद इसी कारण रुपया लेने से इनकार कर रहे थे। दूसरों के कष्ठ अच्छी तरह समझनेवाला बेनीपुरी शरद जी की जिद स्वीकार करने केलिए तैयार नहीं थे।

बेनीपुरी की महानता उनकी सरलता तथा मानवीयता से बंधी हुई है। दूसरों को समझना, और उन केलिए अपने स्वार्थ को मिटाना आदर्श की ही बात लग सकती है। पर बेनीपुरी ने इसे अपना जीवनदर्शन बना लिया था।

---

1. कपिल - नई धारा, बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.43

उभरते साहित्यकारों का प्रोत्साहन

बेनीपुरी जी किसी भी नए साहित्यकार को प्रोत्साहन दिया करते थे। साहित्य के क्षेत्र में बेनीपुरी का प्रभाव इतना अधिक था कि कोई भी साहित्यकार बिना उनके प्रभाव में आए आगे बढने की कल्पना नहीं करता था।"[1] श्री॰ पांडेय नर्मदेश्वर सहाय लिखते हैं - "बेनीपुरी जी का जीवन तरुण साहित्यकारों केलिए एक अशेष प्रेरणा स्रोत था। बेनीपुरी जी एक युग-स्रष्टा साहित्यकार थे। इस नाते उन्होंने नवीन प्रतिभाओं केलिए जिस प्रेरणा का व्यवहार किया उसे कभी भी भुलाया नहीं जा सकता।"[2]

बेगूसराय में हुए कवि सम्मेलन में केदारनाथ मिश्र "प्रभात" और रामधारीसिंह "दिनकर" की रचनाएं सुनकर बेनीपुरी ने कहा - "आगे चलकर ये दोनों कवि हिन्दी जगत की बेजोड निधि होंगे।"[3] और हम जानते हैं कि यह भविष्यवाणी सही साबित हुई। दिनकर जी लिखते हैं - "वे सचमुच मेरी आत्मा के शिल्पी और मेरे कवि-जीवन के निर्माता थे। ... अपनी तत्कालीन कविताओं में कई बातें मैं ने बेनीपुरी जी के मुख से सुनकर लिखी थी। उनके मुख से चिनगारियां छिटकती थीं, उन्हें मैं मंजूषा में सजाकर उन्हीं के सामने रख देता था और वे सारे सुरों के उछल पड़ते थे। ....

---

1. सकलदीप सिंह - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰278
2. श्री॰पांडेय नर्मदेश्वर सहाय - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰140
3. वही, पृ॰141

मेरे प्रति उनके उस प्रेमभाव ने मुझे बडा भारी प्रोत्साहन दिया ।"[1] यही कारण है कि दिनकर ने अपनी पुस्तक "सामधेनी" का समर्पण बेनीपुरी को किया था । समर्पण में उन्होंने ये पंक्तियाँ लिखीं -

"हैं कुमुद फूलते जहाँ, धन्य वह विधुमंडल,
दिन के प्रदाह से बचे किंतु किस भाँति कमल ?
विधु पर आ जाऊँ मिले अगर आधार एक,
आत्मा के शिल्पी, बढा किरण का तार एक ।"[2]

बेनीपुरी जी हमेशा युवकों का विकास चाहते थे । किसी क्षेत्र-विशेष में उनकी चाह संकुचित नहीं थी । नई पीढी को उन्होंने हर संभव प्रोत्साहन दिया । बेनीपुरी ने कितने अनगढ़ युवक लेखकों को गाढा तराशा होगा इसका अन्दाज कौन लगा सकता है ।"[3] 50-55 वर्ष की उम्र में भी वह बेझिझक युवा साहित्यकारों के कंधे पर झूल जाता, उनकी पीठ थपथपाता । स्वयं अपना रास्ता बनाया और उन्हें प्रोत्साहित करता रहा- बहादुरों आगे बढो । बढते जाओ प्यारे, मैदान तुम्हारा है ।"[4]

1945 में नालंदा कालेज में कवि सम्मेलन हुआ । बेनीपुरी सभापति थे । तरुण नवागत कवियों को आमंत्रित करते हुए उन्होंने कहा - "तुम लोगों पर साहित्य का भविष्य है, खूब सोचो और खूब लिखो । मुगलकालीन समय में ईंट-पत्थरों के कारीगरों ने

---

1. दिनकर - संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, प्रथम संस्करण 1987, नई दिल्ली, पृ. 100-101
2. वही
3. नरेन्द्र सिंहा - गगनांचल, पृ. 91 वर्ष 10, अंक 3, 1987
4. वही ।

एक भवन बनाया, जो ताजमहल के नाम से प्रसिद्ध है । साहित्य के एक शिल्पी ने कागज के टुकड़ों पर एक भवन निर्मित किया, जिसे रामचरित मानस कहते हैं । तुलना करो दोनों भवनों में कौन श्रेष्ठ है, अमर है और जनता केलिए लाभदायक है । तुम्हारी एक-एक कृति का मुकाबला हजार-हजार ताजमहल भी नहीं कर सकते ।"[1] संदेह नहीं कि बेनीपुरी मनुष्य का सर्वांगिक विकास चाहते थे । इस विकास की प्राप्ति केलिए उन्होंने दूसरों की मदद की है ।

1949 में उमाशंकर और अजित नारायण सिंह "तोमर" ने प्रेमचंद साहित्य परिषद की स्थापना की । बेनीपुरी को परिषद का अध्यक्ष बनाना चाहते थे । लेकिन बेनीपुरी से यह बात कहने को वे हिचकते थे । क्योंकि उमाशंकर और "तोमर" साहित्य क्षेत्र में नए थे । लेकिन बेनीपुरी ने अध्यक्षता स्वीकार की । उन्होंने कहा - "वाह पट्ठे ! बढे चलो । प्यारे भाइयों, तुम लोग एक ऐतिहासिक काम कर दिखाओगे।"[2] युवकों के प्रति उनका दृष्टिकोण इस घटना में स्पष्ट है । उनके हर कदम में वे प्रोत्साहन ही देते रहे । उनकी दृष्टि में साहित्यकारों के बीच कोई विशेष फरक नहीं था । चाहे वह बडा हो या छोटा, प्रसिद्ध हो या नया, सभी को वे समान रूप से आदर करते थे । "युवक" के संपादन काल में एक बार बेनीपुरी ने कहा कि उर्दू कवियों की सादगी और विचार गर्भिता हिन्दी कवियों में नहीं है । तब राहुल जी ने कहा कि नए लेखकों को

---

1. पांडेय नर्मदेश्वर सहाय - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.142
2. उदयराज सिंह - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.6

छोड़ने पर ठीक हो जाएगा । युवकों के पक्षधारी बेनीपुरी बोले - "किंतु मैं तो नई पौध का माली बनना पसंद करूँगा । नई-नई कलियों की बहार मुझे चाहिए, हिन्दी का चमन अभी बहुत बहुत खाली है ।"[1] युवकों के प्रति उनकी सद्भावना का स्पष्ट रूप यहाँ मिलता है । उभरते साहित्यकारों के प्रति उनकी संपूर्ण आस्था थी । उनके विकास में वे आह्लादित होते थे । साथ-ही-साथ वे नवीन तथा प्रौढ साहित्यकारों के स्नेह संबंध भी बढाना चाहते थे ।

मस्तमौला बेनीपुरी

विनोद, हँसी, मस्ती, ठहाका आदि श्री॰ बेनीपुरी के जीवन के अंग थे । जब तक उनकी याददाश्त खो नहीं गयी उस समय तक यह चलता रहा । कुछ लोग ऐसे हैं जो चाहे कितने ही बूढे हो जाय, लेकिन मन से युवक ही रहते । बेनीपुरी जी उनमें से थे । बच्चों के समान वे खिलखिलाते थे, ठहाके मारते थे और बच्चों, युवकों और बुजुर्गों के साथ वे समान रूप से मिलते-जुलते थे ।

बेनीपुरी का "प्यारे भाइयों" और ठहाका साहित्यकारों के बीच प्रसिद्ध था ।"[2] गाँव के संबंध में भी यह कथन सत्य है । उनकी मुक्त हँसी से ही सारा गाँव जान जाता था कि वे आ गए हैं ।"[3] कोई भी परिस्थिति उनकी मस्ती केलिए बाधक नहीं थी ।

---

1. कलक्टर सिंह केसरी - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰56
2. छविनाथ पांडे - नई धारा, पृ॰82
3. राधेश्याम - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰38।

पने अंतर बडे-बडे संघर्ष के बावजूद उन्होंने हँसने में कोई कंजूसी
हीं दिखाई । हास-परिहास के क्षणों में विनोदी बेनीपुरी अपने
ाम की व्याख्या यों करते - रामवृक्ष याने राम का पेड, यानी
ुलसी ! इसलिए तुम लोग मुझे तुलसी भी कह सकते हो ।"[1]
ारा-सी बातों पर भी वे हँसा करते थे । हर समय वे दूसरों
ो हँसाने और स्वयं हँसने की चेष्टा करते रहे ।[2] किसी भी
ालत में वे इस स्वभाव को छोडने केलिए तैयार नहीं थे ।
ीमार हो जाने पर डाक्टर की सिफारिश थी कि भात, चाय,
छली आदि का उपयोग न करें । लेकिन वे जिद करते थे -
"मैं भात खाऊँगा, मैं मछली खाऊँगा, थोडा दे दीजिए नहीं तो
ं दवा नहीं लूँगा"।[3] बच्चों का सा व्यवहार हम यहाँ देख
कते हैं । गरीब किसान का पुत्र था बेनीपुरी । गरीबी और
ुल्मों के बीच में वे पले थे । फिर भी उनमें अजीब उमंग और
वानी थी । "बेनीपुरी की मस्तानी हँसी, छतों और दीवारों
ो हिला देनेवाली हँसी, कौन नहीं जानता, उनके मित्रों में ?"[4]
े स्वयं मस्त रहते थे और मस्ती बिखरने का हर संभव कोशिश
रते रहे ।"[5]

उनका विवाह 1915 में श्रीमती उमारानी के साथ हुआ ।
मारानी जी अग्रणी स्वतंत्रता सेनानी महादेवशरण सिंह की कन्या थी

---

1. कलवटर सिंह केसरी, पृ.53
2. ओंकार शरद - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.437
3. रामस्वरूप अभिनव - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.215
4. देवेंद्र सत्यार्थी - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.113
5. उदयराज सिंह - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.6

व्याह की रात दूध का प्रबंध देखकर उन्होंने कहा - "दुल्हिन, आजकल सरस्वती की उपासना दूध से नहीं, चाय से की जाती है । चाय मानवों का एकमात्र पेय है । जब ब्रह्माजी पेय पदार्थों का बँटवारा कर रहे थे, तब देवताओं ने सोमरस हथिया लिया और दानव वारुणी ले भागे । फिर बहुत सोचविचार कर बुद्धु ने मनुष्यों केलिए असम की पहाड़ियों पर एक खास किस्म की पत्तियाँ उगाई । झूठ नहीं, ईमानदारी ।"[1] अनपढ पत्नी ने कुछ देर विश्वास किया । फिर ठहाका मारने पर ही उनकी समझ में असली बात आ गयी । बेनीपुरी का मतलब था कि आज जो दूध मिला उसका प्रबंध हर दिन संभव नहीं होगा ।

बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन चल रहा था । कर्मचारियों से बेनीपुरी ने कहा कि अब थोडा "प्यारे भाइयों" करो । कर्मचारी समझ नहीं पाए । उनका मतलब पान से था ।[2] नरेंद्र सिन्हा कहते हैं कि जिसने उन्हें देखा नहीं, उनके संपर्क में नहीं आया वह नहीं समझ सकता उनकी मस्ती, उनकी जिंदा दिली को । जिंदगी जिंदादिली का नाम है, मुर्दादिल खाक जिया करते हैं इस शेर को सार्थक करनेवाला वह कलाकार ।[3] जहाँ कहीं हँसी की फुलझाड़ियाँ और ठहाके सुनाई देते बस समझिए बेनीपुरी जी वहाँ विराजमान हैं । गेया हँसी-खुशी का दूसरा नाम ही बेनीपुरी है ।[4] जिस परिवेश में वे रहते थे उसमें घुल-मिल जाने की एक विशेष क्षमता वे रखते थे । इसी कारण वे उन्मुक्त रूप से हँस सकते थे ।

---

1. आनंद नारायण शर्मा - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.16
2. नरेन्द्र सिंहा - गगनांचल, वर्ष दस, अंक 3, 1987, पृ.9।
3. वही ।
4. राम नगीना सिंह "विमल" - नई धारा, बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.197

बेनीपुरी जी ने जीवन को आनंद का माध्यम बनाया है । उनका विचार था कि जीवन मौज मनाने केलिए है न कि रोने केलिए । इसका मतलब यह नहीं कि उन्होंने मौज मनाने में उनका सारा समय उडा दिया । उन्होंने कभी ऐसा नहीं किया । जीवन में वे बहुत व्यस्त थे । इस कर्मशीलता और खुश रहने की आदत ने उन्हें महान बना दिया था ।

बेनीपुरी की हंसने और मस्त रहने का शौक उनके जीवन के प्रभात काल से देख सकते हैं । 1916 में उनकी किशोर अवस्था में कानपुर के "प्रताप" में उनकी प्रथम रचना छपी गयी । वह तेज और नटखट प्रकृति का किशोर गाया करता था -

"प्रभु, दीजिए वरदान यही, मैं लुक्कड होऊँ ।
हंसू-हंसाऊँ, कवि न होऊँ-तुक्कड होऊँ ।।"[1]

इस प्रकार बेनीपुरी ने जीवन के प्रारंभ से लेकर अंत तक हंसने और दूसरों को हंसाने की कोशिश की है । इसमें सफल भी रहे । लेकिन इस हंसी के बीच में भी उन्होंने जीवन को गौर से देखा । जीवन का यथार्थ रूप उनसे छिपा नहीं था । शायद इसी कारण वे हंस सकते थे । क्योंकि किसी का असली रूप जानने पर मन में कोई द्वन्द्व होता नहीं । फिर हंसने में कोई बाधा नहीं होता । सुखकर न हंसने का प्राय: यही कारण होता है कि मन में किसी प्रकार का द्वन्द्व हो । वक्त के अनुसार आचरण करनेवाले बेनीपुरी जी में इस प्रकार का द्वन्द्व कम था ।

---

1. रामरीझन रसूलपुरी - नईधारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.20।

राजनीति

बिहार प्रदेश, राजनीति के क्षेत्र में बहुत प्रसिद्ध है । वहाँ से अनेक व्यक्ति राजनीतिक नेता हुए हैं । बेनीपुरी के बचपन में देश भर राष्ट्रीयता का नारा गूंज रहा था । अपने शिक्षक तथा गाँधीजी के प्रभाव के कारण बेनीपुरी ने राजनीति में कदम रखा ।

बचपन से ही बेनीपुरी अंग्रेज़ों के अत्याचारों के कारण विद्रोही थे । अंग्रेज़ साहब के घोड़े के आने पर भारतवासी को रास्ते से हटना पड़ता था । नहीं तो कोड़े की मार पीठ पर पड़ती थी । एक दिन बेनीपुरी संयोग से बच गए । वे याद करते हैं - "काला घोड़ा उस पर गोरा साहब । एक हाथ में लगाम, एक में कोड़ा । जंजीरें अब से मेरे सामने एक प्रतीक रूप में आ गयी ।"[1] इस प्रकार उनके मन में अंग्रेज़ों के विरुद्ध विद्रोह की भावना जाग उठी । अंग्रेज़ों को भगाने का विचार उनमें रूढमूल हो गया । तभी 1921 में गाँधीजी का असहयोग का आह्वान मिला । और स्कूल की पढाई छोड़ बाहर निकल आए । तब उनके स्कूल के हेडमास्टर ने भरी आँखों से यह कहकर रोकना चाहा - तुम गरीब लड़के हो, पढना मत छोड़ो, तुम्हें स्कालरशिप ज़रूर मिलेगी, ये चौंचले चार दिनों में खत्म हो जाएगी, फिर तुम्हें पछताना पड़ेगा ।[2] लेकिन उन्होंने अपना निश्चय नहीं बदला ।

---

1. बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें - संशोधित संस्करण 1966 मुजफ्फरपुर, पृ.7
2. वही पृ.7

कारावास

कांग्रेस से संबद्ध होकर राजनीतिक कार्य में शामिल होने के उपरांत बेनीपुरी का कैदी-जीवन प्रारंभ हुआ । 1930 में नमक आंदोलन से ही इसकी शुरुआत हुई । 1945 तक यह जारी रहा ।[1] 1930 में वे "युवक" पत्रिका निकाल रहे थे । इसलिए अंबिका ने उन्हें पत्रिका निकालते रहने केलिए रोका था ।[2] अंबिका तत्काल टाउन कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष था । उनके रोकने पर भी उनकी गिरफ्तारी के तुरंत बाद बेनीपुरी भी गिरफ्तार हुए । वे सकारण गिरफ्तार होने से बच सकते थे । फिर भी वे अपने को रोक न सके । यही उनका देशप्रेम है । उनके घर की हालत भी कुछ अच्छी नहीं थी । जेल में जाकर वे पत्नी और नवजात शिशु की याद करते हैं ।[3] जेल का भयानक वातावरण देखकर वे कांपने लगता है । लेकिन "गीता" का वह संदर्भ उन्हें याद आता है जब कृष्ण अर्जुन को संबल कर देते थे ।[4] इस बार उन्हें छह महीने की सजा मिली थी ।[5] यह सजा भुगतने को उन्हें हज़ारीबाग जेल भेजा गया ।

1932 में उन्हें डेढ साल केलिए जेल जाना पडा । "युवक" पत्रिका के पहले अंक में प्रकाशित दो लेखों केलिए पत्रिका के उस अंक को जब्त कर लिया गया । बेनीपुरी पर राजद्रोह के अभियोग में

---

1. रामवृक्ष बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, 1966, मुज़फ्फरपुर, पृ.11
2. वही, पृ.16
3. वही, पृ.19
4. वही, पृ.18
5. वही, पृ.37

वारंट निकाला गया । "इन्कलाब ज़िंदाबाद" नामक लेख सरदार भगतसिंह और साथियों के आधार पर लिखा हुआ था । दूसरा लेख नेताजी सुभाष चंद्रबोस पर केंद्रित था । सरकार का कहना था कि उनमें हिंसा केलिए उत्तेजना थी । उनकी सजा हजारीबाग और पटना कैंप जेल में हुई थी ।[1]

1937 में चुनाव हुआ । सात प्रांतों में कांग्रेस को बहुमत मिला । विधान के अनुसार कांग्रेस मंत्रिमंडल बनाने केलिए बुलाया गया । लेकिन अस्वीकार किया गया । क्योंकि मंत्रिमंडल को गवर्नर जब चाहें भंग कर सकते थे । इस विशेषाधिकार का प्रयोग न किए जाने का आश्वासन मिले बिना कांग्रेस मंत्रिमंडल बनाने को तैयार नहीं हुआ । इस प्रकार सातों प्रांतों में अल्पमत का मंत्रिमंडल बनाया गया । इसके विरुद्ध पटना शहर में आंदोलन करने का निश्चय किया गया । शहर कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष बेनीपुरी थे । पहले अप्रैल 1937 को "दिनभर हड़ताल, शाम को जुलूस, अंत में सभा आदि का कार्यक्रम बनाया गया था । अचानक सरकार ने बेनीपुरी, जयप्रकाश तथा अन्य साथियों पर 144 धारा के अनुसार नोटिस ज़ारी की । नोटिस उन पर कोई प्रभाव नहीं डाल पायी । कार्यक्रम की बात गुप्त रखी गयी । और वही हुआ जो उन्होंने निर्णय किया था । जयप्रकाशजी बेनीपुरी और अन्य साथी गिरफ्तार हुए । इस बार उनकी सजा तीन महीने की थी । और वे हजारीबाग जेल में भेजे गए ।"[2]

---

1. रामवृक्ष बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.87
2. वही, पृ.131-133

अल्पमत के मन्त्रिमंडल की आयु तीन महीने थी । अर्थात् हज़ारीबाग जेल से बेनीपुरी के छूटते ही मन्त्रिमंडल को भी किया गया । फिर कांग्रेस मन्त्रिमंडल ने अपना अधिकार जमाया । उस समय पटना में तीन मिलें थीं और करीब एक हज़ार मज़दूर । "जनता" का संपादक होने के कारण उनका कार्यक्षेत्र अब पटना ही था । उन्होंने मज़दूरों के बीच में एक मज़बूत संगठन बनाया - "पटना सिटी मज़दूर यूनियन" मिल मालिकों के सामने मांगों की सूची उपस्थित की गयी । वे गरम हो गये । आखिर हड़ताल चलाया । बेनीपुरी गिरफ्तार हुए । इस प्रकार दो दिन केलिए उन्हें कांग्रेज़ शासन काल में भी कारावास का सुख भोगना पडा । यह 1938 में सिटी जेल, पटना में हुआ ।[1]

26 जनवरी स्वतंत्रता दिवस के रूप में मनाया जाता था । 1939 में कांग्रेस मन्त्रिमंडल ने इस्तीफा दिया । गवर्नर ने हुकम दिया था कि स्वतंत्रता दिवस को कोई जुलूस न निकाला जाय । कांग्रेस ने यह स्वीकार किया । फिर भी बेनीपुरी के नेतृत्व में जुलूस निकली । वे गिरफ्तार हुए । इस बार भी पटना जेल में वे बंद हुए । फिर जुर्माना अदा करके वे मुक्त हो सकते थे । उन्होंने अपील दी ।[2]

नेपाल राजा, बंदी के समान रह रहे थे । वहाँ राणाशाही चल रही थी । राज सेवकों पर उनकी मनमानी चल रही थी । इस सच्चाई पर बेनीपुरी ने "जनता" में लेखमाला शुरू किया ।

---

1. रामवृक्ष बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ. 147-149
2. वही, पृ. 155-156

नेपाल अंग्रेज़ों का मित्र राज्य था । इसलिए यह कार्य उन्हें अच्छा नहीं लगा । उन्होंने बेनीपुरी को कैद कर दिया और एक वर्ष की सजा मिल गयी । इस सिलसिले में जब वे कैद हुए उस समय उनकी अपील चल रही थी । इस बार उन्हें फिर हजारी बाग जेल जाना पडा ।[1]

जेल मुक्त होकर वे जगह-जग घूमकर भाषण देते चलते थे । उनके भाषण के बारे में एक सी·आई·डी· इन्स्पेक्टर का कहना है - "आप आग-आग ही उगलते हैं, किंतु ऐसी सावधानी से बोलते हैं कि यदि बेईमानी नहीं की जाए तो आप कानून के शिकंजे में नहीं आ सकते ।"[2] फिर भी 1941 में गाजीपुर के एक गाँव में दिए गए भाषण पर वे गिरफ्तार हुए । उन्हें छह महीने की सख्त सजा मिल गयी । उन्होंनेमुजफ्फरपुर जेल में कुछ दिन काटे । इस बीच उनकी जमानत मंजुर हुई । उन्होंने अपील दी । लेकिन अपील अस्वीकृत हुई और फिर से गिरफ्तार हुए । इस बार डेढ साल की सजा दी गयी । लेकिन अपील में वे छोडे गए ।[3]

लेकिन सीतामढी जेल से छूटते ही मधुबनी से वारंट आ गया । सीधे वहाँ भेजे गए । मधुबनी और दरभंगा जेलों में उन्हें छह महने काटना पडा ।[4] 1947 अगस्त में वे नज़रबंदी हो गए और 1945 तक जेल में ही रहना पडा । इस बार उनकी सजा हजारीबाग और गया जेल में हुई ।[5] इस प्रकार यों कहा जा सकता है कि बेनीपुरी का राष्ट्रकर्मी जीवन कारावास के साथ संबद्ध था ।

1· रामवृक्ष बेनीपुरी जंजीरें और दीवारें, पृ·157-159
2· वही, पृ·184
3· वही, पृ·186-189
4· वही, पृ·189
5· नईधारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ·443

कैदी की सृजन-क्षमता

अपने जेल-जीवन की लंबी अवधि में बेनीपुरी ने अनेक सर्जनात्मक कार्य किए । यों कहना ठीक होगा कि उनकी कार्यक्षमता वहाँ रहकर फूली और फली । साहित्यिक रचनाओं को अधिकतर उन्होंने जेल में की थी । जेल में उन्होंने एक महाविद्यालय का संचालन करके अपने अध्यापक रूप का प्रमाण दिया । उनकी संगठनशीलता में वहाँ काफी वृद्धी हुई । कला के क्षेत्र में भी वहाँ उनकी काफी वृद्धी हुई । दो पत्रिकाओं का संपादन और प्रकाशन करके उन्होंने अपने संपादन कार्य को भी वहाँ रहकर जारी रखा ।

बेपीपुरी की मिलनसरिता प्रख्यात है । थोडी देर में ही किसी से वे घनी मित्रता कर सकते थे । जेल में वे अपने मित्रों के साथ मिलकर संध्या को कविसम्मेलन आयोजित करते थे । वे कहते हैं - "मैं ही इसका स्वनिर्वाचित संयोजक था । मैं उन दिनों कविता भी किया करता था । गद्य में जिस तरह मैं चिनगारियाँ उगलता, पद्य में उसी प्रकार हास्य की पुट भरता । लोग खूब हँसते ।"[1] एक दिन वे गुनगुना रहे थे कि एक कैदी ने उसमें एक देहाती कडी जोड दी । पूछने पर पता चला कि वह एक "रेप-केस" का कैदी है । "उसकी प्रेम कथा ही "पतितों के देश में" परिणत हुई ।"[2] इस प्रकार के कैदियों के जीवन को आधार बनाकर उपन्यास परंपरा की रचना करना वे चाहते थे । लेकिन उनके व्यस्त जीवन के बीच में यह इच्छा अधूरी रह गयी ।[3]

---

1. बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.68
2. वही, पृ.69
3. वही, पृ.175

एक बार बेनीपुरी की पत्नी उनसे मिलने सीवान गयी ।

एक बार बेनीपुरी की पत्नी उनसे मिलने सीवान गयी । लेकिन उनसे भेंट न हो सकी । बेनीपुरी को इस पर बडा दुख हुआ । उस घटना से प्रेरित होकर 'कैदी की पत्नी' नाम से एक उपन्यास ही उन्होंने लिख डाला । बेनीपुरी इस पर कहते हैं-" "यह मानहानि एक पुस्तक भी दे सकी ।"[1] "अम्बपाली", "माटी की मूरतें", "रोजा लुक्सेंबुर्ग", आदि पुस्तकों की रचना बुनीपुरी ने जेल-जीवन में ही की थी । और "नया आदमी" वहीं शुरू किया, जो आज तक अधूरा ही पडा है ।[2] वे रात के सन्नाटे में बैठकर लिखा करते थे । जब अन्य सभी कैदी सोते थे, वे लिखने बैठते थे । उनका कहना है - "मैं ने अपना साहित्यिक कार्यक्रम शुरू कर दिया । "अंबापाली" को फिर से देखकर प्रेस-कापी तैयार कर ली । "रोजा" की प्रेस-कापी भी तैयार हुई । "वेवाइट फ्लोज द डोन" का संक्षिप्त रूपांतर "दोन के किनारे" नाम से गया जेल में ही शुरू कर दिया था । उसे पूरा करके फिर एक महाग्रंथ की ओर टूटा-ट्राटस्की की "रूस की क्रांति" का संक्षिप्त रूपांतर करने लगा । बडी मेहनत करनी पडती, किंतु बडा आनंद मिलता ।"[3] इसके अलावा उन्होंने कवींद्र रवीन्द्रनाथ की पचास कविताओं का हिंदी रूपांतर "रवींद्र भारती" नाम से कर दिया । इकबाल की चुनी हुई कविताओं का उन्होंने संटिप्पण संकलन किया । फिर उन्होंने जोश की कविताओं का रूपांतरण किया । अंग्रेजी रोमांटिक कवियों की चुनी हुई कविताओं का रूपांतरण उन्होंने "ट्यूलिप" नाम से कर दिया ।[4]

---

1. रामवृक्ष बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.18।
2. वही, पृ.25।
3. वही, पृ.264
4. वही, पृ.264

श्री॰रामवृक्ष बेनीपुरी जाने-माने बाल-साहित्यकार थे। इस संदर्भ में पटना जेल में उन्होंने जो कार्य किया वह स्मरणीय है। उन्होंने देहाती भाईयों को सिखाने का कार्य प्रारंभ किया। "हमारे देहात के ये भाई कितने अज्ञान में थे और ज्ञान की कैसी तीव्र पिपासा उनमें जग आई थी। भूगोल, इतिहास, गणित, विज्ञान का साधारण ज्ञान भी उनमें नहीं था। यह पृथ्वी क्या है, कैसी बनी, इस पर जीव कैसे आए, कैसे उनका विकास हुआ, मनुष्य का अवतार कैसे हुआ, कैसे उसने उन्नति की, आदि बातें सुनते समय उनकी प्राचीन गरिमा कैसी थी, क्यों वह गुलाम हुआ और फिर किस प्रकार हम आजाद होंगे, उस आज़ादी का क्या नक्शा होगा - ये प्रसंग उन्हें कितने रोचक लगते।"[1] नये-नये ज्ञान स्वीकार करने केलिए वे जिज्ञासु थे। विज्ञान की नई-नई बातें सुनकर वे अघाते नहीं थे। बेनीपुरी के इन विचारों से आसानी से हम अनुमान कर सकते हैं कि उनके बालसाहित्य का आधार यही विचार है। उन्होंने इसी दृष्टि से बालसाहित्य का निर्माण किया। बालसाहित्य की दृष्टि से उन्होंने ज्ञान-विज्ञान के कईक्षेत्रों को अपनाया है। भूगोल, इतिहास, विज्ञान आदि को बहुत सरल ढंग से उन्होंने वर्णित किया है।

कैंप जेल में रहते समय बेनीपुरी ने वहाँ शहीद हो जानेवालों की एक लिस्ट बनायी। उसके साथ उनका संक्षिप्त विवरण भी

---

1. बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ॰126

दिया गया था । लेकिन वह कागज़ खो गया । उनकी दृष्टि में यह सरकार का कर्तव्य है कि ऐसी एक सूची प्रकाशित कराएं । "कहीं धूप, कहीं छाया" उनकी पहली कहानी है । इसकी रचना कैंप जेल में हुई थी । चंद्रगुप्त पर जो नाटक उन्होंने लिखा वह अच्छे ढंग से वहीं खेला गया । लेकिन नाटक खो गया और उसका प्रकाशन नहीं हुआ ।[1]

बेनीपुरी ने अपना संपादन कार्य जेल में भी जारी रखा । उन्होंने "कैदी" नामक एक हस्तलिखित पत्रिका निकाली । कैदियों की ही रचनाएं प्रकाशित होती थीं । साथ-साथ कुछ जाने माने नेताओं की रचनाएं भी उस में आया करती थी ।[2] 1930 की कैदी के समान उन्होंने 1942 में "तूफान" हस्तलिखित पत्रिका निकाली । वह "कैदी से भी अधिक शानदार" थी ।[3] ये दोनों हज़ारीबाग जेल से ही निकली । बेनीपुरी जी जेल में अध्यापन कार्य भी करने लगे । अपढ देहाती कैदियों को वे शिक्षा देते थे । लेकिन कैम्प जेल में एक नियमित महाविद्यालय खोलना बहुत बडी बात है । उसका नाम रखा गया "राजबंदी - महाविद्यालय" । करीब बीस अध्यापक भिन्न-भिन्न विषयों पर शिक्षा देते थे ।[4] महाविद्यालय का आचार्य बेनीपुरी ही थे । जेल में रहकर संगठन कार्य भी उन्होंने कुशलता से किया । पार्टी का एक "कन्सोलिडेशन" बनाया गया । बेनीपुरी उसका मंत्री था ।[5]

---

1. बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.124
2. वही, पृ.66
3. वही, पृ.214
4. वही, पृ.123
5. वही, पृ.213

इसी प्रकार कवि सम्मेलन तथा अन्य कार्यक्रम चलाना, बंदियों की मांगों केलिए आवाज़ उठाना इत्यादी अनेक कार्यों का वे नेता थे। जयप्रकाश नारायण तथा अन्य साथियों को जेल से भागने की योजना के पीछे भी अधिकतर बेनीपुरी का हाथ था। कैंप जेल में रहते समय उन्होंने समाजवाद का प्रचार किया। उसके पूर्व बिहार सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना 1931 में हो चुकी थी। समाजवाद की नींव कैंप जेल में ही पडी।[1]

संघर्षमय राजनीतिक जीवन

बेनीपुरी बडे ईमानदार राष्ट्रकर्मी थे। वे कांग्रेस पार्टी के कार्यकर्ता थे। गांधीजी के आदर्शों पर उनका अटल विश्वास था। जयप्रकाश नारायण को वे बहुत आदर करते थे। किसी कार्य की योजना बनाते समय वे जयप्रकाश से सलाह किया करते थे। 1930 के आसपास रूस के प्रभाव से भारत में समाजवाद का प्रारंभ हुआ। जयप्रकाश और बेनीपुरी कांग्रेस के अंतर्गत समाजवादी पार्टी के सदस्य थे। आज़ादी की लडाई में कांग्रेस के साथ तहे दिल से उन्होंने भाग लिया। फिर भी ऐसे भी लोग थे जो उन्हें पार्टी से बाहर करना चाह रहे थे।तब तक मतलबी राजनीति का प्रारंभ हो चुका था। कांग्रेस पार्टी का चेहरा किस तरह बदल गया उसके बारे में बेनीपुरी कहते हैं - "अब मैं पटना शहर कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष नहीं था। मुझे इस पद से हटाने केलिए कांग्रेस मंत्रिमंडल की स्थापना होते ही तरह-तरह की चालें चली गई। कांग्रेस में नए-नए लोगों की पैठ हुई। सदाकत आश्रम में मोटरों का तांता लगा।

---

1. बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.109

गाँधी-टोपी ने खाजा-मार्का टोपी का नाम धारण किया । कांग्रेस चुनाव में थैलियाँ खोली जाने लगीं, सरकारी सूत्रों का भी प्रयोग किया जाने लगा । हम समाजवादी थे, समाजवादियों को कांग्रेस संगठन से निकाल कर ही दम लेने की प्रतिज्ञा हुई ।"[1] बेनीपुरी याद करते हैं - "इस कांग्रेसी शासन की स्थापना केलिए हमने कितना किया था । गाँव-गाँव, गली-गली घूमे, किसानों से, मज़दूरों से कांग्रेस को वोट देने केलिए अपील की । पैदल चले, गाडी पर चले, साइकिल से गये - मोटरें तो कम ही नसीब हुई । यही नहीं, तीन-तीन महीने की जो सजाएँ भुगतीं वह इसी कांग्रेसी शासन की स्थापना केलिए ही न ? और कैसा तमाशा, कांग्रेसी शासन के कुछ महीने ही गुज़रे हैं, और मैं जेल में हूँ ।"[2]

जयप्रकाश के कार्यों में बेनीपुरी हमेशा साथ दिया करते थे । कई बार इन दोनों ने जेल की सजा साथ-साथ एक ही जेल में काटी थी । जयप्रकाश को भागने केलिए बेनीपुरी ने जेल में विशेष कार्यक्रम बनाया । कार्यक्रम रात देर तक चलता रहा । अगले दिन तक खबर जेल अधिकारियों से छिपी रही ।[3] वह घटना बेनीपुरी की कार्य क्षमता का परिचायक है । फिर भी बेनीपुरी के अंतिम समय जयप्रकाश की सहायता नहीं मिली । बेनीपुरी के मृत्युपरांत अपने जीवनी लेखक को देखने या उसके अंतिम संस्कार में भाग लेने केलिए जयप्रकाश के पास वक्त नहीं था ।[4]

---

1. बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.155
2. वही, पृ.152
3. वही, पृ.212=242
4. ओंकार शरद - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.40

बेनीपुरी हमेशा व्यस्त रहते थे। समाज से संबंधित किसी भी समस्या को वे अपने ऊपर उठा लेते थे। जनता के बीच में रहने के कारण उनकी समस्याओं से वे अपने को अलग नहीं कर पाते थे। उन्होंने किसानों को संगठित किया। जब वे विधान सभा के सदस्य थे किसानों के पक्ष में जोर से आवाज उठाया करते थे।[1] किसानों की वृद्धि केलिए उन्होंने अनेक कार्य किए। वे याद करते हैं - "कैंप जेल में ही बिहार की किसान-समस्या से अवगत हुआ। हर जिले के किसानों से मिलता, उनसे जमींदारी जुल्मों के बारे में पूछताछ करता और नोट तैयार करता जाता। इस संबन्ध की कुछ किताबें भी पढीं। मैं इस निष्कर्ष पर हुंचा कि जमींदारी प्रथा का अंत किए बगैर न तो बिहार की आर्थिक स्थिति सुधार सकती है, न यहाँ की जनता की सुख-समृद्धि में वृद्धि हो सकती है। इस बार जब मैं जेल से लौटा, किसान-सभा में जबर्दस्त भाग लेने लगा। अपने लेखों और भाषाणों के द्वारा ज़मींदारी प्रथा उठाए जाने केलिए घन घोर आंदोलन करने लगा। जेल से लौटते ही "बिहार के किसान" नामक एक विस्तृत लेख "विशाल भारत में दिया और "ज़मींदारी क्यों उठा दी जाय?" शीर्षक लेख "प्रताप" में। एक युग तक मेरे ये दो लेख किसान सभा केलिए दीपस्तंभ का काम करते रहे।"[2] स्पष्ट है कि किसानों की उन्नति केलिए उन्होंने काफी परिश्रम किया। बाद में वे प्रांतीय किसान सभा का अध्यक्ष चुने गये।[3] 1937 के बाद बिहार में बडे जोरों से बकाश्त सत्याग्रह चला था। सारन जिले के आमवारी

---

1. सुरेन्द्रनाथ दीक्षित - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.290
2. रामवृक्ष बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.109
3. वही, पृ.182

गाँव के ज़मींदार के खिलाफ बकाश्त सत्याग्रह हुआ था, जिसका नेतृत्व राहुल जी ने किया था । जमींदार के कारिंदे का मार खाकर उनका सिर फूट गया । फिर भी राहुल जी की गिरफ्तारी हुई । प्रहार और गिरफ्तारी के विरुद्ध बेनीपुरी ने "जनता" द्वारा जबर्दस्त आंदोलन किया । "जनता" किसान-आंदोलन का मुखपत्र था । संघर्ष में जमींदार हार गये । अपनी पराजय को छुपाने केलिए उसने बेनीपुरी पर मान-हानि का मुकदमा चलाया ।[1] उसमें भी वह हार गये ।

प्रांतीय किसान सभा के अध्यक्ष के रूप में बेनीपुरी ने तूफानी दौरा शुरू किया । शहर-शहर, गाँव-गाँव घूमकर वे भाषण देते चले । आखिर हाजीपुर में दिए गए भाषण केलिए वे गिरफ्तार हुए ।[2] किसान-जीवन से बेनीपुरी का बचपन से ही निकट संबंध था । इसी कारण उन्होंने 'माटी की मूरतें' में सर्वाधिक किसानों को चित्रित किया है । किसानों का जीवन-स्तर ऊपर उठाना उनकी तपस्या थी । बागमती की गाँधी भूमि इस तपस्या का परिणाम है । बागमती में कालेज का निर्माण भी उन्होंने इसी लक्ष्य से किया था ।

बचपन से लेकर बेनीपुरी ने जो गरीबी झेली, शायद उसके कारण ही वे समाजवाद की ओर आकृष्ट हुए । जयप्रकाश के नेतृत्व में कांग्रेस के अंतर्गत जो समाजवादी पार्टी बनी, उसकी स्थापना में बेनीपुरी का सक्रिय योगदान रहा है ।[3] समाजवादी होने के

---

1. रामवृक्ष बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.164-165
2. वही, पृ.184
3. नरेंद्र सिंह - गगनांचल (अंक तीन) 1987

कारण कांग्रेस के अन्य लोगों की अनिच्छा के वे पात्र बन गए । उन्हें पार्टी से बाहर करने की कोशिशें भी जारी थीं । आखिर वे सोशलिस्ट पार्टी का पार्लियामेंटरी पार्टी के अध्यक्ष बन गए । अंत तक वे समाजवादी रहे । मृत्युपरांत की उनकी अंतिम यात्रा में उनका शरीर समाजवादी पार्टी के झंडे से ओढा गया था ।[1]

बेनीपुरी का कृतिपक्ष

श्री॰ रामवृक्ष बेनीपुरी एक बहुमुखी प्रतिभा है । रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी, पत्रकारिता, बालसाहित्य, यात्रा साहित्य, उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी आदि के साथ-साथ संपादन, प्रकाशन, और भाषण द्वारा भी उन्होंने हिन्दी साहित्य की सेवा की है । उन्होंने दो-एक कविताएं भी लिखी हैं । फिर भी उन्हें सर्वाधिक सफलता गद्य में ही मिली है । उनके साहित्य के आधारभूत विषयों में काफी भिन्नता है । ऐतिहासिक पात्र, पौराणिक पात्र, निम्न वर्ग के लोग, जेल-जीवन, कैदी, देश-विदेश के साहित्यकार, कलाकार आदि पर केंद्रित उनकी रचनाएं हैं ।

संपादक

बेनीपुरी अपने समय के प्रसिद्ध पत्रकार रहे हैं । उनसे संपादित "युवक", "जनता", "कैदी" और "तूफान" आदि पत्रिकाओं का उल्लेख, बेनीपुरी के व्यक्ति पक्ष की चर्चा के दौरान हो चुका है । उन पत्रिकाओं के अलावा बेनीपुरी द्वारा संपादित

1॰ देवेंद्रकुमार बेनीपुरी - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰425

पत्रिकाएं उपलब्ध हैं । बेनीपुरी की पत्रिकाएं मोटे तौर पर तीन प्रकार की हैं -

1. बाल साहित्य की पत्रिकाएं
2. प्रौढ साहित्य की पत्रिकाएं
3. स्वतंत्रता संग्राम से संबद्ध पत्रिकाएं

1. बाल साहित्य की पत्रिकाएं

बेनीपुरी प्रसिद्ध बालसाहित्यकार है । उन्होंने पत्रकारिता के माध्यम से भी बाल साहित्य को प्रश्रय दिया है । उनके द्वारा संपादित बाल साहित्य की पत्रिकाएं "बालक" और "चुन्नू-मुन्नू" है । "बालक" निकालते समय हिन्दी में कोई अच्छी बाल साहित्यिक पत्रिका नहीं थी । बंगाल में अनेक पत्रिकाएं प्रचलित थीं । "बालक" उनसे बराबरी करती थी । इसलिए "बालक" ने बिहार में ही नहीं संपूर्ण हिन्दी क्षेत्र में आदर का स्थान प्राप्त कर लिया । यही उनके संपादन क्षेत्र की सूझ-बूझ है । उनकी जबानी की मस्ती भरी जादू का असर डालनेवाली लेखन-शैली "बालक" के संदर्भ में भी विशेष उल्लेखनीय है ।[1] "चुन्नू-मुन्नू" मासिक पत्रिका का संपादन बेनीपुरी ने बालकों के मानसिक संस्कार को लक्ष्य करके किया था ।

---

1. उदयराज सिंह - नईधारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.7

2. प्रौढ साहित्य की पत्रिकाएं

बेनीपुरी के संपादित पत्र पत्रिकाओं में सबसे मशहूर है "नई धारा"। बहुत समय तक बेनीपुरी इसके संपादक रहे। "नई धारा" बेनीपुरी की पैनी दृष्टि और उनके संपादन वैशिष्ट्य का प्रतीक है।[1] इसके संचालक डॉ. राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह, और उदयराज सिंह थे। "हिन्दी साहित्य की गंगा में "शिवं सुंदरम" की अमल-धवल सुधा-धारा प्रवाहित करने में "नई धारा" का महत्वपूर्ण योग रहा है। "नई धारा" के अनेक महत्वपूर्ण विशेषांक तो हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य धरोहर है।[2] नई धारा सचमुच एक लोकप्रिय साहित्यिक पत्रिका थी। उसकी लोकप्रियता आज भी बनी हुई। साहित्य और कला को प्रश्रय देने में "नई धारा" के माध्यम से बेनीपुरी ने काफी परिश्रम किया। उनके राजनीतिक तथा सामाजिक विचारों को भी इस पत्रिका के माध्यम से उन्होंने प्रकाशित किया। इसके संपादकीय में उन्होंने विभिन्न विषयों पर अपना दृष्टिकोण व्यक्त किया। "नई धारा" के माध्यम से बेनीपुरी ने अपनी लेखनी तथा संपादन कला का वह कमाल दिखाया कि "नई धारा" नई पीढी का कंठहार बन कर रही। नई पीढी का ही नहीं, पुरानी पीढी का भी। इस पत्रिका को नये पुराने सबका हार्दिक सहयोग मिला।[3]

---

1. उदयराज सिंह - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.6
2. रामरीझन रसूलपुरी - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.202
3. नरेंद्र सिन्हा - गगनांचल अंक 3, 1987, पृ.90

"हिमालय" पत्रिका का संपादन 1946 में बेनीपुरी ने किया। यह एक प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका थी। "हिमालय के संपादन में बेनीपुरी को द्विवेदी युग की अंतिम कड़ी के रूप में शिवपूजन सहाय का सहयोग प्राप्त था। इन दोनों के सहयोग और सद्भाव ने "हिमालय की कीर्ति में चार चाँद लगा दिये। "हिमालय" का प्रकाशन हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के इतिहास में एक घटना थी।"[1]

3. स्वतंत्रता संग्राम को प्रश्रय देनेवाली पत्रिकाएं

बेनीपुरी के संपादन कार्य का प्रारंभ "तरुण भारत" के साथ हुआ था। उसके बाद जीवन भर वे पत्रकारिता से संबद्ध रहे।

किसान-पुत्र बेनीपुरी का ध्यान किसानों की ओर था। वे किसानों के जीवन-स्तर को उठाना अपना धर्म मानते थे। अतः 1922 में वे "किसान-मित्र" के सहकारी संपादक बन गए। वकील पं. गणेश शर्मा दीक्षित यह पत्रिका निकालते थे। इसके पूर्व वे "किसान" और "गोलमाल" साप्ताहिकों के संपादक थे। उस समय उनकी उम्र 19-20 साल की थी। किसानों की मांगों की पूर्ति केलिए बेनीपुरी ने काफी परिश्रम किया। ज़मींदारी प्रथा के उन्मूलन का नारा सबसे पहले बेनीपुरी ने ही लगाया था।[2]

---

1. नरेन्द्र सिन्हा - गगनांचल, पृ.90
2. दिनकर - संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, प्रथम संस्करण 1987, पृ.98 दरियागंज, नई दिल्ली।

"जनता" अपने समय की सबसे प्रसिद्ध पत्रिका थी । उसके माध्यम से बेनीपुरी ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध यह नारा बुलंद किया "न देंगे एक पाइ, न देंगे एक भाई" ।[1] ज़मींदारों के विरुद्ध उनकी लेखनी आग उगलती थी ।[2] "योगी" नाम्क प्रसिद्ध पत्रिका का संपादन बेनीपुरी ने किया । बेनीपुरी के हाथों कोई भी पत्रिका नाम पाती थी । वे युवकों के बीच लोकप्रिय बन जाती थी । लेकिन उनके छूटते ही उनकी दुर्गति होती थी । बेनीपुरी के उग्रतम राजनीतिक विचारों को "योगी" सहन नहीं कर सकी । उस समय तक बेनीपुरी प्रगतिशील राजनीति के सूत्रधार बन चुके थे ।

लोक संग्रह (1934), कर्मवीर (1934), जनवाणी (1948) आदि भी जन आन्दोलन से संबद्ध पत्रिकाएं हैं ।

पत्र-पत्रिकाओं द्वारा बेनीपुरी ने न केवल साहित्य सेवा की बल्कि समाज को सुधारने का कार्य भी किया । किसी भी परिस्थिति में उन्होंने सत्य का साथ नहीं छोडा । इस संबंध में उन्होंने पक्ष-विपक्ष की मान्यताओं को भी अनदेखा किया । व्यक्ति और समाज की प्रगति में जो कुछ किया जाय, वही उन्होंने किया । यही कारण है कि वे समाजवादी बन गए । समाज की उन्नति ही उनके जीवन तथा साहित्य का लक्ष्य था । इस समर में कभी-कभी उन्हें अकेलेपन का अनुभव करना पडा । बेसहारा होकर भी वे अपने लक्ष्य में अटल रहे । कांग्रेस दल से

---

1. रामस्वार्थी "अभिनव" - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.209
2. रामरीझन रसूलपुरी - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.205

निकाल देने के प्रयास की बात जानकर भी वे अकेले रहे । संक्षेप में, बालकों, युवकों, किसानों से लेकर समाज के विभिन्न वर्ग के लोगों को सुधारने का सफल कार्य पत्र-पत्रिकाओं के संपादन के द्वारा बेनीपुरी ने किया है ।

लेखन कार्य

राजनीति, समाजसेवा, कारावास, पत्रकारिता आदि में व्यस्त होने पर बेनीपुरी के पास समय कम था । फिर भी उनके ग्रंथों की संख्या कम नहीं । बाल साहित्य, शब्द-चित्र, निबंध, संस्मरण, जीवनी, नाटक, एकांकी - सभी में बेनीपुरी ने अपनी क्षमता दिखाई है । अनेक ग्रंथों की रचना उन्होंने जेलों में की थी । जेल में रहते समय उन्होंने सर्वाधिक समय पढने-लिखने और पढाने में ही बिताया । जेल में उन्होंने जो रचना की उसके लिए उन्हें आवश्यक समय भी मिला होगा । उनकी कर्मठता में जेल में भी कोई कमी नहीं आयी थी । रात देर तक वे पढते लिखते थे । "बेनीपुरी के भीतर जो स्रष्टा छिपा हुआ था, उसकी चेतनगारी उनके अखबारी लेखों में भी छिटकती आयी थी, किंतु उनके स्रष्टा के असली चमत्कार तब प्रकट हुए, जब बेनीपुरीजी "भारत छोडो" आंदोलन के सिलसिले में जेल गए और वहाँ उन्होंने "अंबपाली" नाटक और "माटी की मूरतें" नामक पुस्तकों की रचना की । जेल से जब वे लौटे, उनका स्रष्टा अपने पूरे जागरण में था ।[1]

---

1. रामधारी सिंह दिनकर - संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ.100

बेनीपुरी की अधिकांश रचनाएं उनके अपने अनुभवों पर आधृत हैं । बचपन से लेकर उन्होंने जिन किसानों को देखा उन्हीं के चित्रों ने उनके संपूर्ण साहित्य में सर्वाधिक लोकप्रियता पायी । "माटी की मूरतें" में भारत की मिट्टी की महक है, भारत के गाँव का जीवन है और ग्रामीण लोगों के दिलों की धड़कन है ।"[1] बेनीपुरी कहते हैं कि उनकी इन मूरतों में न खूब-सूरती है, न रंगीनी । लेकिन उनमें जीवन है । वे देखती, सुनती, खुश होती, नाराज़ होती, शाप और आशीर्वाद देती हैं ।[2] वे इतने भोलीभाली हैं कि अपने अंतर के विचारों को तुरंत ही प्रकट करते हैं । छुपाने की प्रवृत्ति उनमें नहीं है । "माटी की मूरतें" में ग्रामीण जीवन का सच्चा रूप उभर आया है । बेनीपुरी जी स्वीकार करते हैं कि इस रचना में उन्होंने कल्पना का सहारा लिया है । लेकिन कल्पना के रंगों में मूल रेखाएं कभी गायब नहीं हुई । बल्कि इसके कारण वे स्पष्टतर हो गई हैं ।[3] नारी समस्या, आर्थिक विषमता, बेकारी की समस्या, सांप्रदायिक दंगें, अंधविश्वास, मूल्य विघटन आदि को ग्रामीण पृष्ठभूमि पर बेनीपुरी ने चित्रित किया है । बेनीपुरी की प्रगतिवादी विचारधारा का परिपाक इसमें हुआ है । जगदीशचंद्र माथुर की राय में बेनीपुरी की रचनाएं प्रगतिवादी रचनाओं में बाढ-सी आ गयी । क्योंकि प्राय: प्रगतिवादी बौद्धिक थे । उनकी रचनाओं का आधार "सेकिंड हैंड" अनुभव थे । लेकिन "बेनीपुरी ने आप बीते अनुभवों के आधार पर गरीबी, निर्दयता, और बेबसी का खाका खींचा,

---

1. ओंकार शरद - माटी की मूरतें, 1976, संस्करण लखनऊ
2. बेनीपुरी - माटी की मूरतें (भूमिका)
3. वही ।

उन्हें अतिशयोक्ति का सहारा लेने की ज़रूरत कहाँ थी ?"[1]

श्री॰ मैथिलीशरणगुप्त "माटी की मूरतें" से बहुत प्रभावित थे - "मैं तो बेनीपुरी को एक पत्र लिखने जा रहा हूँ जिसमें मैं जोर देकर कहना चाहता हूँ "लोग माटी की मूरतें बनाकर सोने के मोल बेचते हैं, पर आप तो सोने की मूरतें बनाकर माटी के मोल बेच रहे हैं।"[2] 1956 में साहित्य आकादमी द्वारा इस ग्रंथ का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। कई विदेशी भाषाओं में भी इसका अनुवाद हुआ। बेनीपुरी की सर्वाधिक चर्चित पुस्तक हैं "माटी की मूरतें"।

बेनीपुरी की बहुचर्चित रचनाओं में गेहूँ और गुलाब का महत्वपूर्ण स्थान है। बेनीपुरी का विचारक और दार्शनिक रूप इस ग्रंथ में उभर आया है। वे कहते हैं कि यह पुस्तक और आंदोलन है। आंदोलन जो हमें भौतिकता की अंधगुफा से उठाकर सांस्कृतिक धरातल की ओर ले जाय।"[3] इस ग्रंथ की पच्चीसों शब्दचित्रों की सबसे बडी विशेषता उनकी प्रतीकात्मकता है। एक दूसरी दृष्टि से देखें तो ये सामाजिक समस्याओं पर आधारित हैं। बेनीपुरी की "लाल तारा" भी इस श्रेणी में आ जाती है। यह भी सामाजिक समस्याओं के आधार पर लिखी गई रचना है। वर्ग-विषमता, आर्थिक विषमता, मूल्य बिघटन, सांप्रदायिक विरोध, महाजनों का अत्याचार, किसानोंकीअसली स्थिति, नारियों की बुरी हालत आदि अनेक ज्वलंत सामाजिक समस्याएं उसमें आ गयी हैं। "गेहूँ और गुलाब" तथा "लाल तारा" में प्रगतिवादी चेतना है। कहा जाता है कि

1॰ नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰90

2॰ देवेंद्र सत्यार्थी द्वारा उद्धृत - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ॰113

3॰ बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब (पुस्तक-आंदोलन)

1935-36 में जब लालतारा का प्रकाशन हुआ तभी प्रगतिशील साहित्यिक आंदोलन हुआ ।[1] सामाजिक-यथार्थके स्पष्ट और जीवंत चित्र उनकी पुस्तकों में बिखरे पडे हैं । बेनीपुरी जी कलम के जादूगर थे । उसकी कलम आग उगलती थी । वे खरी-खरी बात कहती थी ।[2] क्योंकि "कला का काम जीवन को छिपाना नहीं, उसे उभारना है । कला वह जिसे पाकर जिंदगी बिखर उठे, चमक उठे ।"[3]

बेनीपुरी जब विदेश गए थे, जीवित साहित्यकारों से मिले और मृत साहित्यकारों के स्मारक पर श्रद्धांजलि अर्पित की । पेरिस में वाल्तेयर, विक्टर ह्यूगो, एमिली जोला, रूसो, बॉलज़ाक, अलसर वाइल्ड आदि के मज़ार थे । बेनीपुरी का दु:ख है, कि सूर, तुलसी, विद्यापति, मीरा, प्रेमचंद, हरिऔध, रामचन्द्र शुक्ल जैसे भारतीय साहित्यकारों का अभी तक कोई स्मारक नहीं बनाया गया ।[4] इसलिए बेनीपुरी अपने गाँव में एक शानदार मकान बनवाया । इसके बारे में प्रश्न करने पर उनका जवाब था "मैं तो अपना स्मारक आप ही बना रहा हूँ । कौन जाने मेरे पीछे कोई बनाए या नहीं बनाए । गाँव में आलीशान मकान बन रहा है - वह गाँव जहाँ मैं ने जन्म लिया, जहाँ भूकंप के समय महात्मा गाँधी पधारे .... ।"[5]

---

1. प्रकाशचंद्र गुप्त - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.130
2. उमाशंकर शुक्ल, वहीं, पृ.37
3. बेनीपुरी - माटी की मूरतें, पृ.9
4. उदयराज सिंह - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.28
5. विष्णु प्रभाकर द्वारा उद्धृत - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक,पृ.252

बेनीपुरी के कैदी-जीवन के कटु और मधुर अनुभवों का चित्रण "जंजीरें और दीवारें" में मिलता है । 1921 से लेकर 1945 तक के उनके जीवन का संक्षिप्त में विवरण भी उसमें शामिल है । जेल जीवन के बीच वे जिन कार्यकलापों से संबद्ध रहें उनका विस्तृत वर्णन इस ग्रंथ में है । जेल जीवन के अंतर्गत उन्होंने अनेक ग्रंथों की सामग्री भी तैयार की । उनमें प्रमुख है - पतितों के देश में" । रेप-केस में कैद हो गए एक व्यक्ति की प्रेम कथा का संवर्द्धित रूप ही "पतितों के देश"में हैं । इसी प्रकार उन्होंने अन्य कैदियों के जीवन के आधार पर इसके दूसरे भाग की सामग्रियाँ इकट्ठा की थी ।"[1] लेकिन वह अप्रकाशित रह गयी । यह प्रमाणित हो जाता है कि बेनीपुरी जी अपने वातावरण में कितना लयमान हो जाते हैं । अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उन्होंने जो देखा, मन में चित्रकार के समान अंकित किया । वे ही बाद में पुस्तकों की ढेर बन गई । उनके जीवन के सूक्ष्म और स्थूल अनुभवों को लिपिबद्ध करने की कोशिश उन्होंने की ।

किसी भी अपरिचित से वे आसानी से मिलनसार हो सकते थे । अजित नारायण सिंह "तोमर" ने लिखा है "प्रथम दर्शन में ऐसा लगा जैसे बेनीपुरी जी का दर्शन पहले भी कर चुका हूँ और प्रथम दर्शन में ही उनके व्यक्तित्व की छाप मेरे ऊपर पड गयी ।"[2]

सुख और दुख को बेनीपुरी ने समान दृष्टि से देखा था । उनका आत्मबल, और अपने आप पर भरोसा होने के कारण वे किसी के सामने झुकना नहीं चाहते थे । इसलिए वे लिखने मात्र से तृप्त नहीं हुए । "उन्होंने गरीबी का स्वयं अनुभव किया । अभाव व अन्याय को अपने ऊपर झेला । तभी तो उनकी कृतियों में इन सब की सशक्त धड़कन सुनाई देती है ।"[3] उन्होंने कृष्ण को क्रांतिकारी के रूप में चित्रित किया है । मात्र विचार-प्रवाह[4] के क्रांतिकारी नहीं, "थियोरी के साथ वह ऐक्शन" पर भी पूरा

---

1. बेनीपुरी - जंजीरें और दीवारें, पृ.175
2. अजित नारायण "तोमर" - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक
3. विष्णु प्रभाकर - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.253

ध्यान देता है ।"[1] किसी के हाथों उसके गुरु पितामह आदि की हत्या कर सकता है । यहाँ तक कि अपने बेटे-पोते भी अनाचार की ओर बढे तो उनका नाश निर्विकार रूप में देख सकता है ।"[2] "मशाल" एक प्रगतिशील रचना है । अंधकार और आंधी भरे रास्ते में डगमगाते लोगों में स्फूर्ति भरना बेनीपुरी का लक्ष्य है । वे कहते हैं - "युवकों ! कठोर बनो - साहसी बनो, दुस्साहसी बनो । आंधी में चलो, तूफान से दोस्ती जोडो, हाँ, तूफान से ।"[3] ग्रंथ के अंत में उन्होंने गाँधी जी को श्रद्धांजली अर्पित की है । वे गाँधीजी के शिष्य थे । वे गाँधीजी को पथ-प्रदर्शक मानते थे । किसी आंध के द्वारा उनकी हत्या होना बेनीपुरी केलिए असहनीय था । उनके दुख का प्रवाह ही "तमसो मा ज्योतिर्गमय !" है ।

देश-विदेश के महान व्यक्तियों से स्फूर्ति और प्रेरणा ग्रहण करने में बेनीपुरी ने कभी संकोच नहीं दिखाया । देश-देशांतर की सीमा लांघकर उन्होंने सभी प्रकार के आदर्शों के प्रचार में लगे व्यक्तियों का आदर किया है । अपनी आँखों के सामने आ पडनेवाले सभी पर अपना विचार करना बेनीपुरी का स्वभाव है । वैसे "मील के पत्थर" में उन्होंने देश-विदेश के कुछ महान व्यक्तियों के चित्र उभारे हैं ।

जयप्रकाश नारायण के साथ बेनीपुरी की गाढी मित्रता थी । उनके राजनीतिक जीवन में जयप्रकाश हमेशा उनके साथ थे । लगातार जेल जीवन में भी दोनों साथ रहे थे । राजनीतिक कार्यों में

---

1. बेनीपुरी "मशाल द्वितीय संस्करण 1961, किताब महल, इलाहाबाद
2. वही ।
3. वही ।

वे जयप्रकाश के साथ विशेष सलाह किया करते थे । यो उनकी श्रद्धा हमेशा जयप्रकाश के साथ रही थी । यही कारण है कि उन्होंने जयप्रकाश की जीवनी रच डाली । बेनीपुरी ने इसे एक अलबम कहा है "इस पुस्तक में मैं ने अपने चरित नायक को मुख्यत: चित्रों के एक अलबम के रूप में पेश करने की चेष्टा की है ।"[1] "जयप्रकाश" ज़रूर जीवनी है । लेकिन सामान्य जीवनियों से यह एकदम भिन्न है । बेनीपुरी कहते हैं - "जीवन का वर्णन उसकी गति में होना चाहिए उसकी धारा में । मैं ने अपने नायक को कहीं खडा करके उसका फोटो लेने की चेष्टा नहीं की है - जब वह खेल रहा है, पढ रहा है, जा रहा है, रो रहा है, हँस रहा है - जब वह किसी महानतम् कार्य को संपन्न करने में लीन है, या जब वह अदना से अदना काम में अपने को बहला रहा है - मेरे कलम के कैमरे ने उन अवसरों पर उसे पकडने की कोशिश की है ।"[2] 'जयप्रकाश' में गतिशीलता है । सामान्य तिथिक्रम में लिखी जीवनी में जो मुर्दनी का अनुभव होता है वह इसमें नहीं है । चलते जीवंत चित्र ही इस अलबम में भरे पडे हैं । अपनी विशेष रचना परिपाटी द्वारा बेनीपुरी ने जयप्रकाश के बहुआयामी व्यक्तित्व को चलचित्र के समान अंकित किया है । जयप्रकाश के प्रभाव में पडकर बेनीपुरी ने 'जयप्रकाश विचारधारा की रचना भी की । इस में जयप्रकाश के विभिन्न दृष्टिकोण का परिपक्व विश्लेषण लेखक ने किया है ।

---

1. बेनीपुरी - जयप्रकाश (दो शब्द)
2. वही।

साहित्य यात्रा में बेनीपुरी ने शायद ही किसी विधा को अछूता छोडा है । उन्होंने अपने जीवन की हरघडी और हर घटना को लिपिबद्ध किया है । इनमें सबसे प्रमुख है "मुझे याद है । जो उन्होंने "नई धारा" में धारावाहिक के रूप में अप्रैल 1953 से लेकर मई 1955 तक प्रकाशित किया था । इसमें उनके माता-पिता बचपन, शिक्षार्जन, विवाह जीवन, असहयोग आंदोलन में भागीदारी, जेल जीवन, आदि के चित्र उन्होंने प्रस्तुत किये हैं । उनकी रचनाओं की यह बडी विशेषता है कि पाठक उनसे अत्यंत प्रभावित होते हैं । इसका कारण यह है कि वे घटना के अनुकूल वातावरण की सृष्टि करते हैं । पाठक के मन में गहरा प्रभाव डालने में बेनीपुरी की भाषा भी समर्थ है । उनकी "चपल खंजन-सी फुदकती भाषा" पाठक के हृदय में आंदोलन उत्पन्न करने में सर्वथा समर्थ थी ।"[1] रचना प्रक्रिया के बारे में प्रश्न करने पर बेनीपुरी ने उत्तर दिया "जब मैं एकांत में बैठकर सिगरेट पीता हूं और धुआं उडाता हूं तो उस धुएं के सहारे सरस्वती उतर पडती है और मैं लिखने लगता हूं ।"[2] यह सही भी है "विचारों और भावों के मुक्त धुम्र में अभिव्यक्ति की पवित्रता मानना बेनीपुरी जी की साहित्य-साधना का सारा रहस्य था ।"[3]

बेनीपुरी ने दो बार युरोप की यात्रा की । यात्रा करते समय वे किसी बालक के समान जिज्ञासु रहते थे । नए-नए ज्ञान क्षेत्रों में प्रविष्ठ होने केलिए भाषा या देश की सीमा ने कोई बाधा नहीं रखी । किसी जगह जाने पर वे खुले मन से वहाँ के सारे चित्र खींच लेते थे । इस प्रकार देश-विदेश की धार्मिक, सांस्कृतिक,

---

1. श्याम सुंदर घोष - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.264
2. सियारामशरण प्रसाद - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.287
3. वही, पृ.288

राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों को उन्होंने देखा है, उन्हें समुचित ढंग से लिपिबद्ध भी किया है । उनके देखे प्रायः सभी स्थानों का विस्तृत वर्णन, उनकी यात्रा-साहित्य रचनाओं में मिलता है । बेनीपुरी के प्रमुख यात्रा साहित्य रचनाएं "पैरों में पंख बाँधकर" "उड़ते चलो, उड़ते चलो," और "अत्र-तत्र" आदि हैं ।

बेनीपुरी स्वतंत्र-विचारक थे । किसी भी विषय पर वे अपना विचार प्रकट करने में समर्थ थे । उसकी विशेषता यह है कि उनके विचार में दूसरों से काफी भिन्न थी । वे हमेशा चलती धारणाओं के विरुद्ध खड़े थे । क्योंकि वे मूलतः क्रांतिकारी थे । इसका अर्थ यह नहीं कि सही बातों का भी वे खंडन करते थे । जो आचार-विचार, मानवता तथा व्यक्ति-विकास के विरुद्ध है उसका उन्होंने खंडन किया । इस प्रकार के विचार प्रधान निबंधों में बेनीपुरी के "मशाल", हवापर, वंदेवाणी विनायकौ, नई नारी" आदि आते हैं । बेनीपुरी ने टीका साहित्य में सफल भागीदारी की है । उन्होंने विद्यापति और बिहारी के पदों और सतसईयों की सुंदर टीका प्रस्तुत की । ये दोनों बिहार प्रांत के ही महान कवि हैं । जन भाषा में उनकी टीका प्रस्तुत करके उन्होंने इन दोनों बिहार-सपूत्रों को जनप्रिय बनाने में अपना योग दिया है । इसके साथ विद्यापति और बिहारी का संक्षिप्त जीवन परिचय भी उन्होंने दिया है । ये ग्रंथ हैं - "विद्यापति की पदावली" और बिहारी सतसई की टीका" ।

बेनीपुरी के अन्य रचनाओं में " चिता के फूल" (कहानी और निबंध), "रोजा लुक्जेंबुर्ग", "कार्ल मार्क्स" (दोनों जीवनी), "हमारे महान क्रांतिकारी (संपादित), लालचीन आदि उल्लेखनीय हैं ।

बेनीपुरी ने अनेक नाटकों और एकांकियों की रचना की । "अंबपाली", "तथागत", "नेत्रदान", "सीता की मां", "संघमित्रा और सिंहल विजय", "अमर ज्योति", "नया समाज", "रामराज्य", "शकुंतला", और "गांव के देवता" उनकी अन्य रचनाएं हैं । बेनीपुरी ने अपने नाटकों में अधिकांश की रचना ऐतिहासिक कथाओं के आधार पर की है । इतिहास का पुन:आविष्कार ही उनका लक्ष्य नहीं है । तत्कालीन परिवेश के अनुकूल वातावरण की सृष्टि करके उन्होंने नाटक लिखा है ।

"अम्बपाली" बेनीपुरी का प्रथम नाटक है । अंबपाली वैशाली की राजनर्तकी थी । इस नाटक की रचना में बेनीपुरी ने अंबपाली का यथार्थ रूप प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है । इसलिए उन्हें "अंबपाली" पर पूर्व-रचित नाटकों से भिन्न रहना पडा है । बेनीपुरी कहते हैं कि "किसी के पदचिह्न मात्र पर चलना मैं कलाकार की मौत मानता हूं ।"[1]

"नेत्र-दान", मानव-जीवन पर युद्ध के प्रभाव का संदेश देता है । भूमिका में बेनीपुरी लिखते हैं - "युद्ध मानवता का सदा अभिशाप रहा है । कल वह अभिशाप था, आज भी अभिशाप है और आगामी कल में भी वह मानवता केलिए अभिशाप ही रहेगा । जो युद्ध करते हैं या कराते हैं, उन्हें प्रायश्चित्त देना होगा, चाहे आज दे या कल देने को बाध्य हो ।"[2] इस एकांकी की मूलधारा अनादि काल से लेकर मनुष्य में स्थित स्वार्थ परता ही है ।

---

1. बेनीपुरी - अम्बपाली (मेरी अम्बपाली), 1972 संस्करण, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ ।
2. बेनीपुरी - भूमिका, नेत्रदान - संशोधित संस्करण 1969, अनुपम प्रकाशन, पटना ।

"संघमित्रा" और "सिंहल विजय" बेनीपुरी के दो प्रमुख नाटक है । इसमें "संघमित्रा" नारी रूप को प्रतिफलित करती है, "सिंहल विजय" पुरुष रूप की व्यंजना है । नारी प्रेम की भूखी है और पुरुष विजय का भूखा है । प्रेम और विजय दोनों भावनाओं का उन्नयन ही इन नाटकों का लक्ष्य है । फलत: ये नाटक विश्वकल्याण का लक्ष्य रखनेवाले हैं ।"[1]

बालसाहित्य की रचना में बेनीपुरी अद्वितीय थे । उन्होंने विभिन्न प्रकार की रचनाएं की । बाल मनोविज्ञान से वे परिचित थे । बालसाहित्य से उनका लक्ष्य बालकों का चरित्र निर्माण था । पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथाओं के पुन: कथन से बालकों के व्यक्ति विकास की अनेक सामग्री उन्होंने दी है । उनके बालसाहित्य काव्य संग्रह भी आता है "कविता कुसुम" । "बगुला भगत", "सियार पांडे", "बिलाई मौसी", "हिरामन तोता", "शिवाजी", "गुरु गोविंद सिंह", "झोंपडी से महल" "साहस के पुतले", "रंग-बिरंग", "बहादुरी की बातें", "सतरंगा धनुष", "फलों का गुच्छा", "पद चिह्न", "अपना देश", "अमर कथाएं", 4 भाग, "हम इनकी संतान हैं", (दो भाग), "पृथ्वी पर विजय" (दो भाग), "प्रकृति पर विजय" (दो भाग), "बेटे हो तो ऐसे", "बेटियां हो तो ऐसी", "अनोखा संसार", "हवा पर", "अमृत की वर्षा", "बच्चों के बापू", "जीव-जंतु", "धरती की धडकने" आदि बेनीपुरी की बाल-साहित्य के अंतर्गत आते हैं । इनमें पौराणिक एवं ऐतिहासिक घटनाओं के अलावा देश विदेश के साहसी पुरुषों की जीवनी, सामान्य विज्ञान, आदि बच्चों के चरित्र-निर्माण के सहायक अनेक विषय उन्होंने अपनाए हैं ।

---

1. बेनीपुरी भूमिका, संघमित्रा और सिंहल विजय", संशोधित संस्करण, 1967, बेनीपुरी प्रकाशन, मुजफ्फापुर ।

"अमर कथाएं" के प्रथम और दूसरे भाग में मनु से लेकर गांधीजी तक के महान भारतीयों के जीवन पर आधृत रचनाएं हैं। इसके तीसरे और चौथे भाग में विदेशी महद् व्यक्तियों पर केंद्रित हैं। "प्रकृति पर विजय" की रचना बेनीपुरी ने इस दृष्टि से की है कि दैनंदिन जीवन में काम आनेवाली बिजली, तार, टेलिफोन आदि वस्तुओं का सामान्य ज्ञान बच्चों को मिल जाएं। इस प्रकार बच्चों में साहस, आत्म विश्वास, मानवता, साहस, सहानुभूति, मातृ-पितृ-भ्रातृ प्रेम आदि जगाने तथा बढ़ाने का प्रयास बेनीपुरी ने किया है। भारत की परंपरा, संस्कृति तथा सभ्यता का ज्ञान बेनीपुरी के बाल साहित्य में उपलब्ध है।

बेनीपुरी भाषा प्रेमी थे। वे हिन्दीकरण के पक्षपाती थे। हर जगह अंग्रेज़ी का जो प्रबल प्रभाव था उसे उन्होंने मिटाने की कोशिश की। 1958 में वे विधान सभा के सदस्य थे। विधान सभा और विधान परिषद को लोग "एसेम्बली" तथा "कौंसिल" कहा करते थे। बेनीपुरी ने इसका विरोध किया। उन्होंने कहा - "हिन्दीकरण सरकारी और गैर सरकारी सभी क्षेत्रों में हों।"[1] 1957 में उन्होंने आह्वान किया कि अंग्रेज़ी बोर्डों की होली जला दें। बाद में यह बडा आंदोलन बन गया। यह उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश की ओर भी फैल गयी। लाठियां और गोलियां चली।"[2] परिणाम अच्छा ही हुआ। बिहार में साहित्यिक जागरण का प्रमुख नेता बेनीपुरी थे। उन्हीं के इशारे पर सब कुछ चलते थे।"[3]

---

1. केसरी कुमार - नईधारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.73
2. वही।
3. राधाकृष्ण - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.178

बेनीपुरी का साहित्य उनके अपने अनुभवों का रूपांतर है । इसलिए वे आत्मविश्वास के साथ अपनी बात खुलकर कह सकते थे । जबलपुर में एक सभा हो रही थी । प्रभुदयाल अग्निहोत्री अध्यक्ष थे । बेनीपुरी प्रमुख वक्ता थे । किसी विवादास्पद विषय पर अग्निहोत्री रुक-रुककर बोल रहे थे । मजाक में बेनीपुरी ने कहा कि मेरे विरुद्ध बोलना मामूली काम नहीं । तब अग्निहोत्री ने कहा "मेरे और भाई बेनीपुरी के बीच एक बडा अंतर है । मेरी जीभ पर मेरे मस्तिष्क का बडा बोझ है । इसलिए वह दब-दबकर चलती है किंतु बेनीपुरी जी की जिह्वा पर कोई दबाव नहीं । इसलिए वह आज़ादी के साथ मनमाने ढंग से चल सकती है ।"[1]

बेनीपुरी जी बिहार राष्ट्र-भाषा-परिषद के संचालक मंडल के प्रारंभ से ही सदस्य थे ।"[2] 1941 में लहेरिया सराय में तुलसी जयंती के अवसर पर उन्होंने सुंदर भाषण दिया । 1950 में बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन आरा अधिवेशन के वे अध्यक्ष थे । उन दिन आयोजित कवि सम्मेलन में महादेवी वर्मा, हरिवंशराय "बच्चन" आदि ने भाग लिया । 1963 में रामदयालु सिंह कालेज, मुज़फ्फरपुर की हिन्दी साहित्य परिषद द्वारा आयोजित भारतेन्दु साहित्य मंडल का उद्घाटन उन्होंने किया । वे प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन के जन्मदाताओं में एक थे । उसके बाद वे मंत्री बने और आखिर सभापति बन गए । वे अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन का प्रचार मंत्री थे । सम्मानों तथा उपाधियों से बेनीपुरी की विरक्ति के बावजूद 1967 में अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा बेनीपुरी को "साहित्य वाचस्पति" घोषित किया । 1968 में राष्ट्रभाषा परिषद ने उन्हें वयोवृद्ध साहित्यिक पुरस्कार

---

1. प्रभुदयाल अग्निहोत्री - नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.137
2. उदयराज सिंह - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.10

एवं सम्मान दिया । इस बीच में वे (1958) बिहार विश्व विद्यालय सिंडिकेट के सदस्य नियुक्त हुए ।

जीवन के अंतिम दिन

गांधी भूमि तथा बागमती कालेज के निर्माण का संकल्प बेनीपुरी ने किया था । इसके लिए किसानों ने उन्हें 23 एकड ज़मीन सौंप दी । गांधी भूमि के लिए सात बीघे ज़मीन भी मिल गयी ।[1] फिर भारी खर्च की चिंता थी । बेनीपुरी अपने बुढापे को आत्मबल से ढकेल कर गाँव-गाँव घूमने लगे । दिसंबर की ठिठुरती रात में भी वे इसी वजह से गाँव-गाँव जाते थे ।[2] एक दिन दौरा समाप्त करके अगले दिन जाने के विचार से वे घर गए । उस रात वे पक्षाघात के शिकार हो गए । याद-दाश्त खोकर कई साल उसी अवस्था में वे पडे रहे । पटना, बंबई और दिल्ली में उनकी चिकित्सा हुई । लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ ।

31 अगस्त 1968 को सुबह नाश्ता के बाद पुत्र देवेंद्र को पास बुलाकर बेनीपुरी ने कहा, "बउआ ! कहीं हमार ..... कुछ हो जाएते .... त (मौसिरी के पेड की ओर इशारा करते हुए) यहीं रखीहा .... दाह संस्कार यहीं करीहा .... मूर्ति रखिहा ।[3] 7 सितंबर 1968 को उनका स्वर्गवास हो गया । उनकी इच्छा के अनुसार ही उनका अंतिम संस्कार भी किया गया ।

---

1. सुरेंद्रनाथ दीक्षित - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.290
2. वही, पृ.292
3. देवेंद्रकुमार बेनीपुरी - नई धारा बेनीपुरी स्मृति अंक, पृ.412

श्री॰ रामवृक्ष बेनीपुरी एक व्यक्ति नहीं, एक सार्वजनिक संस्था थे। जन मंगल केलिए उन्होंने सब कुछ बाँट दिया। उनका सारा समय साहित्य, समाज और देश की सेवा में व्यतीत हुआ। बेनीपुरी के साहित्य तथा जीवन का मूल स्वर मानवता है। उनकेलिए साधन तथा साध्य वही है। मानवता के मार्ग से होकर संपूर्ण मानव बनने का अथक तथा सफल परिश्रम उन्होंने किया है। संघर्ष, विद्रोह और क्रांति उनके साथी थे। वे सत्य ही मानते थे। इसलिए किसी अत्याचारी के दमन चक्र से वे दमित नहीं हुए।

अध्याय - चार

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के सामाजिक समस्या-केंद्रित रेखाचित्रकारों का अध्ययन

अध्याय - चार

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के सामाजिक समस्याकेंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष.बेनीपुरी अपने समय के सर्वप्रमुख सचेत रचनाकार रहे हैं । साहित्यिक सृजन के अलावा सामाजिक क्रिया कलापों में भी उनका सक्रिया योगदान रहा है । इसलिए उनके साहित्य में सामाजिक स्थितियाँ स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त है । दोनों रचनाकारों के रेखाचित्रों में सामाजिक समस्याओं केलिए पर्याप्त प्रदेमण मिला है । इनके अधिकतर रेखाचित्र समाज के सामान्य लोगों से संबंधित होने के कारण सामाजिक समस्याओं की प्रस्तुति केलिए उन्हें सुविधा भी मिली है । उन्होंने सिर्फ प्रस्तुति ही नहीं की है बल्कि अपनी सही प्रतिक्रिया भी व्यक्त की है । कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि उनके रेखाचित्रों में अपने समय के सच की स्मरणिका है ।

रेखाचित्रों में व्यक्तिकेंद्रीकरण और सामाजिक समस्याओं की व्यापकता

रेखाचित्र तत्वत: व्यक्ति केंद्रित हैं । उसमें रेखाचित्रकार किसी व्यक्ति का चित्र प्रस्तुत करता है । इस प्रकार व्यक्ति को केंद्र बनाने के कई कारण हैं । रचनाकार का उस व्यक्ति के साथ आत्मीय संबंध होता है जिसका वह रेखाचित्र प्रस्तुत करता है और उसकी किसी खास विशेषता के लेखक का आकर्षण होता है । ये दोनों कारण रेखाचित्र की पृष्ठभूमि मात्र है । इस विधा की अपनी विशेषताओं में एक है व्यक्तव्यंकन । परंतु रेखाचित्र व्यक्ति के अंकन तक सीमित नहीं होता । वह व्यक्ति जिस समाज में जीता है, रेखाचित्रकार उस समाज को भी विषय बना लेता है । व्यक्ति का व्यक्ति सापेक्ष स्थिति में अंकन रेखाचित्र में संभव नहीं है । रेखाचित्र की पृष्ठभूमि होती है । वह पृष्ठभूमि समाज है । इस प्रकार व्यक्ति के चित्रांकन के साथ साथ समाज का चित्र भी आनुषंगिक रूप से उभर आता है ।

समाज के साथ के संबंध के बिना व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित नहीं होता । समाज की खूबियों तथा अभावों का वह समान रूप से भागीदार है । समाज की समस्या व्यक्ति की भी समस्या है । किसी का उससे अलग रहना, अपने विकास को रोकना है । इस प्रकार रेखाचित्रकार किसी एक व्यक्ति का ही चित्र प्रस्तुत करता है । उसके व्यक्तित्व को स्पष्टत: चित्रित करने केलिए समाज को भी प्रस्तुत करना पड़ता है । यही कारण है कि रेखाचित्रों में सामाजिक समस्याओं का भी उभार होता है ।

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों में चित्रित

समस्याएं

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों का मुख्य विषय समाज की विभिन्न समस्याएं हैं । सामान्यत: इन समस्याओं का व्यापक स्तर उच्च वर्ग की अपेक्षा निम्न वर्ग के लोगों में अधिक दर्शनीय है । निम्न वर्ग के व्यक्तियों के साथ उन दोनों के निकट संबंध के कारण ये शब्द चित्र अधिक मार्मिक बन गए हैं । हमारे समाज की सबसे ज्वलंत समस्या नारी समस्या है । इसलिए महादेवी के समस्या केंदित रेखाचित्रों में सर्वाधिक इस समस्या को महत्व मिला है । "अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएं" महादेवी के समस्या प्रधान रेखाचित्रों के संकलन हैं । बेनीपुरी ने अभावग्रस्तता और आर्थिक समस्या को प्रधानता दी है । उनके ऐसे रेखाचित्र "लालतारा" और "माटी की मूरतें" में संकलित हैं ।

1. नारी समस्या

भारत में नारी जीवन समस्या पूरित है । हमारे देश की सबसे विकराल समस्याओं में इसका प्रमुख स्थान है । नारी समस्या को इस प्रकार विभाजित कर सकते हैं- बालविवाह, विधवा की समस्याएं, नारी के अधिकार एवं प्रतिष्ठा की समस्या, नारी के प्रति पुरुष का अत्याचार, नारी समस्या में नारी की पृष्ठभूमि, बेमेल विवाह से उत्पन्न समस्या, वेश्यावृत्ति की समस्या ।

क· बालविवाह

स्त्रियों को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है उनमें सर्वप्रमुख बालविवाह है । सदियों से हमारा देश इस दुराचार का साक्षी है । जीवन में कदम रखते ही नारी व्याह के बंधन में पड जाती है । उसकी सारी हँसी-खुशी छीन ली जाती है । बचपन पार करने के पूर्व ही वह किसी के पत्नी के बहाने गुलाम बन जाती है । महादेवी के रेखाचित्रों में बालविवाह संबंधी अनेक समस्याएँ विश्लेषित हैं । अपनी सेविका भक्तिनके संबंध में महादेवी लिखती हैं -

> "पाँच वर्ष की वय में उसे हँडिया ग्राम के एक संपन्न गोपालक की सबसे छोटी पुत्रवधू बनाकर पिता ने शास्त्र से दो पग आगे रहने की ख्याति कमाई और नौ वर्षीया युक्ती का गौना देकर विमाता ने, बिना माँगे पराया धन लौटाने वाले महाजन का पुण्य लूटा ।"[1]

भक्तिन का विवाह पाँच वर्ष की आयु में करके, उसके माँ-बाप को जो तृप्ति मिली, वह इस चित्र में स्पष्ट झलकती है । "शास्त्र से दो पग आगे रखने की ख्याति कमाई" तथा "बिना माँगे पराया धन लौटानेवाले महाजन का पुण्य लूटा" आदि में व्यांग्यात्मक ढंग से इस बात की अभिव्यक्ति दी है ।

महादेवी ने "अतीत के चलचित्र" में एक वृद्ध की पोती का

1· महादेवी - स्मृति की रेखाएँ (चौदहवाँ संस्करण - 1978)
पृ·4

मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है -

> "वृद्ध ने नितांत हताश मुद्रा में स्वीकृतिसूचक मस्तक हिलाकर कुछ बिखरे-से शब्दों में यह स्पष्ट कर दिया कि उनके एक पोती है, जो आठ की अवस्था में मातृ-पितृहीन और ग्यारहवें वर्ष में विधवा हो गई थी ।"[1]

इस प्रकार बालक मन में जो सुनहले स्वप्न होते हैं उनके खिलने के पूर्व ही भारतीय नारी को जीवन के कठोर यथार्थ का सामना करना पड़ता है । बाल्यावस्था में विवाह हो जाने के कारण अपनी इस स्थिति को पहचानने में भी उसे काफी देर लगती है । बिट्टो की यही स्थिति है -

> "वह तीन भाईयों की अकेली बहिन होने के कारण विशेष दुलार में पल कर बडी हुई । विवाह उसके अबोधपन में ही हो गया और वैधव्य भी अनजाने आ पडा । न पहली स्थिति ने उसे उल्लास में बहाया था, न दूसरी स्थिति उसे निराशा में डुबा पायी ।[2]

भोली-भाली बिट्टो की करुण स्थिति महादेवी के इस शब्द चित्र में अभिव्यंजित है । दांपत्य, वैधव्य आदि की स्थिति में जब बिट्टो कदम रखती है तब इन दोनों का कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़ता है । क्योंकि इन अवस्थाओं से जो मतलब होता है उसे समझने का बौद्धिक विकास नहीं हुआ है ।

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र (बारहवाँ संस्करण-1972) पृ.57
2. वही, पृ.5।

रामवृक्ष बेनीपुरी ने "लाल-तारा" में बाल-विवाह की एक घटना का चित्रण किया है । "जीवन-तरु" में हाकिम मामा का चित्र है । मामा अपनी बेटी इंजोरिया का विवाह उसी साल करना चाहते थे जिस साल लीची पर फल होता । लेकिन -

> "..... इंजोरिया बढने में लीची को कहीं पीछे छोड दिया और दूसरे मामा जोर देने लगें कि जल्द-से-जल्द इंजोरिया की शादी हो जाय ! ज़िंदगी का क्या ठिकाना शुभ कर्म जल्दी ही कर लेना चाहिए । फिर पुरोहितजी का अष्टवर्षा भवेद् गौरी, दशवर्षा तु रोहिणीवाला श्लोक था ही । हाकिम मामा इंजोरिया की शादी की धुन में लगे .... इंजोरिया की शादी - यह कल्पना उनकेलिए भी क्या कम मधुर थी ?"[1]

रूढमूल मानसिकता का संकेत इस चित्र में उपलब्ध होता है । रूढमानसिकता के शिकंजे में ग्रस्त मन किसी भी प्रकार के गलत काम केलिए तैयार होता है । बाल विवाह संबंधी मान्यताओं में रूढिवादिता का ही प्रतिफलन है और स्त्री को भोग्य समझने की असांस्कारिक दृष्टि भी । सभी धर्मों एवं जातियों में यही बात थी अर्थात् यह अपराध हमारी सामाजिक प्रतिक्रिया का अस्पृहणीय पक्ष था ।

ख· विधवा की समस्या

भारतीय विधवा उपेक्षिता है । विधवा का पद स्वीकार करते ही उसकी स्थिति में अवाच्य अंतर आ जाता है ।

1· बेनीपुरी - लालतारा (दूसरा संस्करण 1949) पृ·22

महादेवी ने अपने रेखाचित्रों द्वारा विधवाओं की समस्याओं पर प्रकाश डाला है । उन्होंने इन समस्याओं का अच्छा विश्लेषण भी किया है ।

महादेवी ने मारवाडिन किशोरी विधवा के माध्यम से भारतीय विधवा की कटु-तिक्त अवस्था चित्रित की है.-

> "उसी दिन से वह घर, जिसमें न एक भी झरोखा था न रोशनदान न एक भी नौकर दिखाई देता था, न अतिथि और न एक भी पशु रहता था, न पक्षी, मेरे लिए एक आकर्षण बनने लगा । उस समाधि - जैसे घर में लोहे के प्राचीर से घिरे फूल के समान वह किशोरी बालिका बिना किसी संगी-साथी, बिना किसी प्रकार के आमोद-प्रमोद के मानो निरंतर वृद्धा होने की साधना में लीन थी ।"[1]

एकरस जीवन बिताने वाली किशोरी विधवा का मार्मिक चित्रण यहाँ हुआ है । "समाधि जैसे घर में यह व्यंजित है कि वह घर बाहरी दुनिया से पूर्णत: अलग है । लोहे के प्राचीर से घिरे फूल में विधवा की स्थिति स्पष्ट है । अर्थात् विधवा बंधनों में रहती है जिनको तोडना सामान्यत: असंभव है । विधवा दिन में एक ही बार भोजन कर सकती है -

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.27

"वृद्ध एक ही समय भोजन करते थे और वह तो विधवा ठहरी । दूसरे समय भोजन करना ही यह प्रमाणित कर देने केलिए पर्याप्त था कि उसका मन विधवा के संयम-प्रधान जीवन से ऊबकर किसी विपरीत दिशा में जा रहा है ।"[1]

विधवा केलिए मानवी सहज पदु न घर में प्राप्त था न समाज में । वैधव्य अपराध समझा जाता था । अपराधी केलिए कठिन दंड ही मिलता है । कठिन परिश्रम में उसे लगाना एक प्रकार से दंड विधान ही है । प्राय: निराहार और निरंतर मिताहार से दुर्बल देह से वह कितना परिश्रम करती थी, यह मेरी बालक-बुद्धि से भी छिपा न रहता था । जिस प्रकार उसका खंडहर - जैसे घर और लंबे-चौडे आँगन को बैठबैठकर बुहारना, आँगन के कुएँ से अपने और ससुर के स्नान केलिए ठहर-ठहर कर पानी खींचना और धोबी के अभाव में, मैले कपडों को काठ की मोगरी से पीटते हुए रुक-रुक कर साफ करना, मेरी हँसी का साधन बनता था, उसी प्रकार केवल जलती लकडियों से प्रकाशित, दिन में भी अँधेरी कोठरी के घुटते हुए धुएँ में से रह-रह कर आता हुआ खाँसी का स्वर, कुछ गीली और कुछ सूखी राख से चाँदी सोनेके समान चमकाकर तथा कपडे से पोंछकर {मारवाड में काम में लाने के समय बर्तन पानी से धोये जाते हैं} रखते समय शिथिल उँगलियों से छूटते हुए बर्तनों की झनझनाहट मेरे मन में एक नया विषाद भर देती थी ।"[2]

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.27
2. वही ।

दुर्विधान का दूसरा तरीका है कि उसके दिमाग में यह चिपका देना कि वही एकमात्र दोषी है । सहजता के साथ दोषी ठहराने का कार्य होता था ।

> "जब पहले-पहले भाभियों ने पति की मृत्यु का दोषी उसे ठहराया और पडोसिनों ने उसके किसी अज्ञात अभाव को लक्ष्य कर व्यंग्य-वर्षा की, तब उसका हृदय पीडा की अनुभूति के साथ वैसे ही चौंक पडा, जैसे सोता हुआ व्यक्ति अंगारे के स्पर्श से जाग जाता है ।"[1]

वैधव्य की अज्ञात गंभीरता का एहसास बिट्टो को जब हुआ तब उसकी चेतना में बोधोदय होता है जैसे सोता हुआ व्यक्ति अंगारे के स्पर्श से जाग जाता है ।" अपनी स्थिति की असलीयत समझकर बिट्टो जाग उठती है । इस जागरण का परिणाम यह हुआ कि बिट्टो की भाभियों ने उसे मारना-पीटना शुरू किया । किसी प्रकार उसे घर से निकाल देने का उनका प्रयास जारी रहा -

> "धीरे-धीरे वैसे विषाक्त वातावरण में उसका शरीर शिथिल हो चला और मन टूट गया । ज्वर रहने लगा, बेहोशी के दौर आने लगे । किसी ने कहा क्षय का पूर्व लक्षण है, किसी ने बताया मृगी रोग है । रोग तो दोनो संक्रामक थे, अत: बेचारी भाभियाँ अपने कुटुंब की कल्याण-कामना से आकुल होने लगीं । परामर्श करके छोटे भाई के द्वारा देवर को पत्र लिखवाया गया, परंतु

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.52

वहाँ से उत्तर आया कि वे लोग उसे पहचानते ही नहीं जान पड़ता है किसी अनाचार के कारण वे उसे उन निर्दोषों के गले मढना चाहते हैं; यदि वे ऐसा करेंगे तो न्यायालय तो कहीं भाग नहीं गए हैं ।"[1]

भारतीय विधवा की उपेक्षितावस्था की तीव्र अभिव्यक्ति इस रेखाचित्र में हुई है । वह अपने घर में तथा ससुराल में भी उपेक्षिता हो जाती है । घर से बाहर करने केलिए भाभियाँ उसपर किसी संक्रामक रोग का भी आरोप करती हैं । "कुटुंब की कल्याण-कामना" के व्यंग्य प्रयोग में भाभियों की स्वार्थरता छिपी है ।

अपने अज्ञात अभाव के ज्ञात होने के बाद बिट्टो का जीवन कठिन हो जाता है -

"फिर तब से लेकर उसके लिए नित्य जीवन नवीन मानसिक और शारीरिक यातनाओं का आविष्कार होने लगा । घर के नौकर - चाकर कम किए गए, पहले संकेत में, फिर स्पष्ट रूप से और अंत में आज्ञा के स्वर में उससे सब काम संभालने केलिए कहा जाने लगा । अभ्यास से उत्पन्न भूलों केलिए भाभियों के द्वारा कुछ विशेष पूजा भी मिलने लगी । उस पर किसी दिन उसका मन हाथों पर लिए रहनेवाली भाभियाँ कहती थीं कि उसके भाई सतयुग के हैं, नहीं तो कौन एक निठल्ले व्यक्ति को बैठे-बैठे खिला सकता है । यह स्वर तो उसकेलिए एकदम नया था ।"[2]

---

1. महादेवी वर्मा - अतीत के चलचित्र,
2. वही, पृ.52

विधवा-जीवन की विकराल जीवन की गहराइयाँ जानने केलिए यह एक रेखाचित्र पर्याप्त है जिसमें महादेवी वर्मा ने हमारी सामाजिक प्रतिक्रियाओं में निहित अनगिनत अमानवीय और अस्पृहणीय पक्षों का ब्यौरा दिया है ।

डॉ॰ आशागुप्त का कहना है - "स्त्री पुरुष के संबंधों को लेकर महादेवी का वक्तव्य किसी किताबी ज्ञान पर आधारित नहीं है अपितु वे इस चिरंतन सत्य तक मौलिक जीवन के तथ्यों के सहारे पहुँची हैं । यही कारण है कि उनके संस्मरण अधिकांशत: नारी की अभिशप्तावस्था और परवशता का चित्र उपस्थित करते हैं । और विधवा परित्यक्ता नारी का जीवन चित्रों की यह तलखी प्राकारांतर से उनकी आत्मा का विद्रोही स्वर प्रतिध्वनित करती है ।"[1] डॉ॰वीरेंद्रकुमार बडसूवाला ने भी यही विचार प्रकट किया है - समाज की रूढियों, दु:ख दैन्य, और स्वार्थ की कुटिलताओं को देखकर उनकी आत्मा विद्रोह कर उठी है । समाज के शिकंजों में फँसी नारी की अंतर्वेदना आपने प्रकट की है ।"[2]

विधवा की स्थिति में हो जाना स्त्री का अपना कोई दोष नहीं है । लेकिन समाज पति की मृत्यु का दोषी स्त्री को ठहराता है । लेकिन महादेवी इसके विरुद्ध आवाज उठा रही है । उनका यह सामाजिक ज्ञान नई चेतना की लहर का प्रमाण है ।

ग॰ नारी के अधिकार एवं प्रतिष्ठा संबंधी समस्या

पुरुष प्रधान समाज होने के कारण भारतीय समाज में

1॰ डॉ॰ आशा गुप्त - महादेवीवर्मा अभिनंदन ग्रंथ, पृ॰56

2॰ वीरेंद्र कुमार बडसूवाला - महादेवी अभिनंदन ग्रंथ, पृ॰247

स्त्री के प्रति पुरुष के अधिकारों की कोई सीमा नहीं है । अपने समाज में अधिकारों से वंचित है । महादेवी और बेनीपुरी इस हालत से दुखी हैं और उसे बदलना चाहते हैं ।

> "भारतीय नारी आज कैसी उपेक्षित, अपमानित, प्रताड़ित, अधिकारहीन, व्यक्तित्वहीन प्राणी है, इसका प्रमाण खोजने जाने की ज़रूरत नहीं । जिस किसी ने भी अपनी दोनों आँखें फोड़ नहीं डाली हैं, उसकेलिए स्वयं सिद्ध बात है । हमें चारों ओर नारी की दासता के प्रमाण मिलते हैं। वास्तविक बात तो यह है कि भारतीय नारी से अधिक दयनीय प्राणी संसार में कठिनाई से मिलेगा । उसे न पुत्री के रूप में अधिकार है, न माता के रूप में, न पत्नी के रूप में, न बहन के रूप में ।"[1]

पुरुष के समान स्त्री भी व्यक्ति है और पुरुष के अधिकार स्त्री को भी प्राप्य होने चाहिए । बिट्टो की करुण कथा कहकर महादेवी कहती हैं कि उसे समझना किसी पुरुष केलिए कठिन है । यहाँ बिट्टो नारी समाज की प्रतिनिधि है । अर्थात् स्त्री को अच्छी तरह समझना पुरुष के वश की बात नहीं है । महादेवी कहती हैं - "पुरुष बेचारे की उग्र तपस्या और अखंड साधना स्त्री के द्वारा प्राय: भंग होती रही है, इसी से उसने इस मायाविनी जाति के स्वभाव की व्याख्या करने केलिए पोथे रच डाले हैं ।"[2] संकल्पिता नारी के सामने पुरुष कभी कोई बाधा नहीं डाल सकता है । "स्त्री जब किसी साधना को अपना स्वभाव और किसी सत्य को अपनी आत्मा बना लेती है, तब पुरुष उसकेलिए न

---

1. शचीरानी गुर्टू (संपादिका) महादेवी (अमृतराय का लेख), पृ.113
2. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.54

महत्व का विषय रह जाता है, न भय का कारण, इस सत्य को सत्य मान लेना पुरुष केलिए कभी संभव नहीं हो सका । अपनी पराजय को बलात् जय का नाम देने केलिए ही संभवत: वह उनके विषम परिस्थितियों और संकीर्ण सामाजिक धार्मिक बंधनों में उसे बांधने का प्रयास करता रहता है ।"[1] यही महादेवी का दृष्टिकोण है । धार्मिक - पौराणिक सूक्तियों के सहारे पुरुष अपने अत्याचारों को सुकर्म बना देता है । समाज में स्त्री की प्रतिष्ठा के संबंध में महादेवी का यह कथन सत्य ही है - "साधारण रूप से वैभव के साधन ही नहीं, मुट्ठी भर अन्न भी स्त्री के संपूर्ण जीवन से भारी ठहरता है ।"[2]

सामान्यत: पति की मृत्यु, पत्नी को उसकी संपत्ति की स्वामिनी बना देती है । लेकिन अबला बिट्टो उससे वंचित हो जाती है । बूढे पति का सहारा बनकर उसके बुढापे को मधुमय बनाने के उपरांत भी उसे अपने पति की संपत्ति से हाथ धोना पडता है -

> "....वृद्ध विषम ज्वर से पीडित होकर अंतिम घडियाँ गिन रहे हैं । बहुएँ तो नहीं, पर दोनों पुत्रों ने आकर मकान, रुपया आदि अपनी धरोहर संभालने का पुण्य अनुष्ठान आरंभ कर दिया है ।"[3]

अपने पिता को बुढापे में सहारा न देनेवाले पुत्रों की, अपनी धरोहर संभालने की उत्सुकता को महादेवी ने यहाँ व्यंजित किया है । बिट्टो की हालत वही पुरानी हालत हो जाती है ।

---

1. महादेवी वर्मा - अतीत के चलचित्र, पृ.54
2. वही ।
3. वही ।

उसकी उपेक्षावस्था अधिक कठोर हो जाती है ।

महादेवी की लछमा को अपनी जान बचाने केलिए ढेर सारी संपत्ति से हाथ धोना पड़ता है -

> "उसकी ससुराल में बहुत ज़मीन थी, बहुत खेती होती थी, बहुत गाय, भैंस, बैल पले थे - साराँश यह कि सभी कुछ बहुत था, पर कठोर भाग्य ने अपना व्यंग्य छिपाने केलिए एक स्थान निकाल ही लिया । उसका पति पागल तो नहीं कहा जा सकता, पर उसका मानसिक विकास एक बालक के विकास से अधिक नहीं हो सका । पागल लड़के की बुद्धिमती और परिश्रमी बहू को सास-ससुर चाह सकते हैं, पर देवर-जेठों केलिए तो वह एक समस्या ही हो सकती है, क्योंकि उसकी उपस्थिति में भाई की संपत्ति का प्रबंध करना भी आवश्यक हो जाता है और उसे आत्मसात् करने की इच्छा रोकना भी अनिवार्य हो उठता है ।"[1]

कठोर भाग्य ने अपना व्यंग्य छिपाने केलिए एक स्थान निकाल ही लिया" में लछमा की भारी संपत्ति के बीच छिपी दुर्गति का सुंदर चित्र महादेवी ने उतारा है । देवर-जेठों का यह विचार था कि अपने मंदबुद्धि भाई की संपत्ति भी छीन ले । लेकिन बुद्धिमति लछमा के सामने कोई उपाय नहीं चलता है । आखिर मार-पीट कर लछमा को वे घर से बाहर कर देते हैं ।

बिबिया का पति रमई शराबी और जुआरी है ।

"शराबी होश में आने पर मनुष्य बन जाता है, पर जुआरी कभी होश में आता ही नहीं, अत: उसके संबंध में मनुष्य बनने का प्रश्न उठता ही नहीं।"[1] इस प्रकार के मनुष्य के सामने स्त्री का कोई मूल्य नहीं होता। वह स्त्री का मूल्य रुपये-पैसे के हिसाब से अवश्य लगा सकता है -

> "एक बार रमई के जुये के साथी मियाँ करीम ने गुलाबी आँखें तरेरकर कहा "अरे दोस्त तुम तो अच्छी छोकरी हथिया लाए हो। उसी को दाव पर क्यों नहीं रखते ? किस्मतवर होंगे तो तुम्हारे सामने रुपये पैसे का ढेर लग जाएगा, ढेर ! इस प्रस्ताव का सब ने मुक्तकंठ से समर्थन किया। रमई बिबिया को रखने केलिए प्रस्तुत भी हो गया ..... ।"[2]

पुरुष, स्त्री को व्यक्ति नहीं समझता। उसकी दृष्टि में वह मात्र एक वस्तु है - अपने घर को सजाने की वस्तु। पुरुष उसे अपने सुख-भोग की वस्तु या मुफ्त की सेविका मानता है। समाज अथवा पुरुष इसी दृष्टि से स्त्री को देखता है। रमई के आचरण में, भले ही वह निम्न वर्ग का व्यक्ति हो, समाज के अत्याचार का ही प्रतिफलन मिलता है।

श्री. अमृतराय कहते हैं - "महादेवी ने नारी की परवशता की समस्या पर केवल कवि की करुणा विगलित दृष्टि डाली हो, सो बात नहीं है। उन्होंने एक गंभीर समाजशास्त्री के

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.111
2. वही।

रूप में इस समस्या पर चिंतन किया है । इसीलिए नारी की इस परवशता का मूल कारण क्या है यह पता लगाने में भी उन्हें ज्यादा देर लगी । उनका यह निश्चित मत है कि स्त्रियों की इस परवशता के मूल में उनकी आर्थिक परवशता है और इसीलिए उनकी परवशता का उच्छेद तब तक असंभव है जब तक स्त्री आर्थिक रूप से स्वावलंबी नहीं हो जाती ।"[1]

महादेवी सामाजिक समस्याओं के प्रति हमेशा जागरूक रहती हैं । इसलिए समस्याओं को विभिन्न आयामों से वे देख सकी हैं । नारी के अधिकार एवं प्रतिष्ठा की समस्या को भी उन्होंने इसी ढंग से देखा है । इसलिए विभिन्न परिस्थिति और परिवेश के साथ उन्होंने इस समस्या का चित्रात्मक ढंग से विश्लेषण किया है । कम ही सही, बेनीपुरी ने भी तटस्थता के साथ इस समस्या को चित्रित किया है ।

रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों में भी नारी के अधिकार की समस्या का चित्रण हुआ है । विधवा को अपनी संपत्ति की रक्षा करना कठिन होता है । बेनीपुरी के "बलदेव सिंह" के रेखाचित्र में पति की मृत्यु के बाद उसके भाई सारी संपत्ति छीन लेने की घटना चित्रित है । इसी समस्या को लेकर वह विधवा बलदेव सिंह के यहाँ आती है -

> "उस बेचारी के साथ एक छोटा बच्चा था, उसी का बच्चा । उस विधवा के अबलापन से और उस क्षत्रिय कुमार के बचपन से फायदा उठाकर उसके पट्टीदारों ने उसका धन हड़प लिया था । विधवा के कानों में

---

1. शचीरानी गुर्टू (संपादिका) - महादेवी (अमृतराय का लेख)
पृ.120

बलदेव सिंह की यशोगाथा पडी ।"[1] इसलिए वह अपनी रक्षा केलिए बलदेवसिंह की सहायता मांगने आयी है ।

पति के मृत्युपरांत पत्नी की स्थिति यही होती है । वह घरवालों के लिए उपेक्षित होती है । सारा कष्ठ उसे अकेले झेलना पडता है । उसके प्रति सहानुभूति दिखाने केलिए भी कोई नहीं होता है ।

घ· नारी के प्रति पुरुष के अत्याचार की समस्या

स्त्री का अबलापन पुरुष की शक्ति होती है । हमारे समाज में स्त्री अबला मानी जाती है । पुरुष को स्त्री का शास्क भी माना जाता है । इस स्थिति में स्त्री शास्ति भी है । शास्क का शास्ति के प्रति अत्याचार सहज है । यही लोक मान्यता है । महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी ने इस दुनिदारी के प्रति अपना अपना स्पष्ट तथा स्वच्छ दृष्टिकोण अपने रेखाचित्रों के माध्यम से प्रकट किया है । अबला के प्रति बलवान के अत्याचार को वे मर्दानी का घातक तत्व मानते हैं ।

अपने अबोध पति की संपत्ति की रक्षा में लगी लछमा को अपने अत्याचारों की शिकार बननी पडती है -

"अनेक अत्याचार सहकर भी लछमा ने अपना अधिकार छोडने की इच्छा नहीं प्रकट की, तब एक बार वह इतनी

।· रामवृक्ष बेनीपुरी - माटी की मूरतें (।976 संस्करण)पृ·36

> अधिक पीटी गई कि बेहोश हो गयी और मृत समझकर खड्ड में छिपा दी गयी । कैसे वह होश में आई और किस असह्य कष्ट से घसीट-घसीट कर खड्ड से पार दूसरे गाँव तक पहुँच सकी, यह बताना कठिन होगा । अपने संबंधियों के अत्याचार के संबंध में उसने एक शब्द भी मुँह से न निकलने दिया, क्योंकि इससे उसके विचार में "घर की मर्जाद चली जाती ।" इसके अतिरिक्त अपने मारे-पीटे जाने की बात अभिमानिनी लछमा कैसे बताती । अचानक बहुत ऊँची शिला से गिरकर चोट खा गई है, इस कल्पित कथा के असत्य में जिस साहस का परिचय मिलता था वह पिटे जाने की क्रूर कहानी के सत्य में दुर्लभ हो जाता ।"[1]

अपने ऊपर इतना बडा अत्याचार होने के उपरांत भी लछमा अपने परिवार की मर्यादा को ध्यान में रखकर चुपी भरती है । इस प्रकार चुपी भरना पुरुष को प्रोत्साहन देना है । "नारी जीवन के प्रति पुरुष वर्ग का जो पाशविक अत्याचार युग-युग से निरंतर होता आ रहा है उसके प्रति वे (महादेवी) असहिष्णु हो उठी हैं ।"[2] उपर्युक्त उद्धरण में असहिष्णुता का कोई गुंजाइश नहीं है । लेकिन लछमा जैसी मूक नारियों की वेदना को शब्द-बद्ध करना ही उनके असहिष्णु होने का प्रमाण है ।

भारतीय नारी अपनी इज्जत को सर्वाधिक मूल्यवान समझती है । इसलिए उनसे प्रतिशोध आसान है । उसके चरित्र पर कलंक लग जाने के आरोप मात्र से उसकी ज़िन्दगी बर्बाद की जा

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.106
2. डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित - महादेवी वर्मा अभिनंदन ग्रंथ, पृ.239

सकती है । स्त्री की यह दुर्बलता पुरुष के प्रतिशोध का सबसे सफल औजार है । बिबिया के रेखाचित्र में महादेवी ने इस प्रकार की एक घटना चित्रित की है । बिबिया के दूसरे पति की तीसरी शादी थी । पति का एक जवान बेटा भी था । वह अपने अपराधों का कारण विमाता की प्रेरणा बताकर बच निकलता है -

> "पुत्र दूसरों के सामने विमाता की चर्चा चलते ही एक विचित्र लज्जा और मुग्धता का अभिनय करने लगा और उसके साथी उन दोनों के संबंध में दंतकथाएं फैलाने लगे । .... पुत्र ने सारा दोष विमाता पर डालकर अपनी विवशता का रोना रोया और अपने दुष्कृत्य पर लज्जित होने का स्वांग रचा । इस प्रकार भीखन का प्रतिशोध अनुष्ठान पूरा हुआ । ..... उस रात बिबिया पीटी गयी । लात, घूंसा, थप्पड, लाठी आदि का सुविधानुसार प्रयोग किया गया, पर अपराधिनी ने न दोष स्वीकार किया, न क्षमता मांगी और न रोई चिल्लाई । इच्छा होने पर बिबिया लात-घूंसे का उत्तर बेलन-चिमटे से देने का सामर्थ्य रखती थी, पर वह झनकू का इतना आदर करने लगी थी कि उसका हाथ न उठ सका ।"[1]

पुरुष जब स्त्री के इच्छापूर्ति का साधन न कर पाता है तब उसके विरुद्ध प्रतिशोध करने लगता है । भीखन (झनकू का पुत्र) बिबिया के साथ यही करता है । बिबिया के साथ जो अकारण अत्याचार होता है उसका मार्मिक संकेत इस चित्र में हुआ है ।

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएं, पृ.120-121

महादेवी यह भी दिखाना चाहती है कि पुरुष-प्रधान समाज में स्त्री के साथ पुरुष अपनी मन-मानी करता है ।

झूठे प्रेम की शिकार बनी, धोखा खानेवाली लडकियाँ काफी मिलती हैं । रामवृक्ष बेनीपुरी की "सुकिया" के साथ यही हुआ है । मोहन प्यार के बहाने सुकिया की इज्जत लूट लेता है । उसके बाद मोहन भाग जाता है । सुकिया को घास बिकने का काम छोड्कर वेश्या बनना पड्ता है, फिर वह चने बिकने लगती है । एक दिन मोहन के साथ उसकी मुलाकात होती है -

> "उस दिन एक अपूर्व खरीददार आया । कोट-पैंट पहने, एक पैसे का चना माँग रहा था । जब तौलकर देने को उसने सिर ऊपर किया, तो बिजली के प्रकाश में उसका चेहरा देखकर वह चिल्ला पडा - "सुकिया !"
> "मोहन" ! वह बोली ! .....
> ..... उधर मोहन, इधर सुकिया मन-ही-मन उस संध्या की याद कर रहे थे जब उन्होंने शुक्रतारा को देखकर रात कितनी बीती, इसका अनुमान किया था ।
>
> गरीबों का प्रेम ऐसा ही होता है - तालाब में एक ढेला गिरा, कुछ तरंगे उठीं, फिर पानी शांत ! समुद्र के ज्वार-भाटे तो महलों में उठते हैं !"

मोहन, सुकिया को मात्र एक साधन मानता है । उससे प्रेम करने का दंड सुकिया को एक बच्चे के रूप में मिल जाता है ।

---

1. बेनीपुरी - लालतारा, पृ.6

मोहन की इस हरकत के कारण सुकिया वेश्या बन जाती है । बेनीपुरी के आखिरी वक्तव्य में एक कठोर व्यंग्य छिपा हुआ है । आज की दुनिया में हार्दिक संबंध संपत्ति के आधार पर ही टिका हुआ है । "गरीबों का प्रेम" तालाब की तरंगों के समान नैमित्तिक है । "समुद्र के ज्वार-भाटे तो महलों में उठते हैं । प्रेम-संबंध की सधनता संपत्ति के बिना नष्ट हो जाती है । बेनीपुरी यहाँ विशेष ज़ोर देकर कहते हैं कि प्यार का ढोंग अधिकतर अभावग्रस्त नारियों पर ही चलता है ।

"लालतारा" में बेनीपुरी का एकांकीनुमा एक रेखाचित्र है जिसका शीर्षक है "झाड़ुगी" । बूढे (सुक्कन भात) की अकेली बेटी है सोना । तीन सौ रुपये का कर्ज वसूल करने केलिए ज़मींदार तहसीलदार की कचहरी में केस चलाते हैं । तहसीलदार बूढे का बुलवाकर कहते हैं कि रुपये के बदले बेटी देदी जाय । सुक्कन इससे असहमत ज़रूर हो जाता है । खैनी हथियाने आनेवाले तहसीलदार को सुक्कन की मार खानी पड़ती है । सुक्कन का वहीं अंत हो जाता है । फिर -

> "सोना - (धाड मार कर रोती हुई) बाबूजी, बाबूजी ! (उसी समय तहसीलदार हँसता हुआ पहुँचता है - इसके सिर पर अब भी खून का धब्बा है । उसे देखकर सोना पागल-सी चिल्लाती है) राक्षस .... कसाई ! (वह उसपर लपकती है, वह भागता है - सोना बाप के निकट आकर उसकी लाश से लिपट जाती है) बाबूजी ! बाबूजी ।"[1]

---

1. बेनीपुरी - लालतारा, पृ.58

सोना को अधीन में करने केलिए तहसीलदार अत्याचार करते हैं । सही यह भी है कि तहसीलदार का अत्याचार सोना पर नहीं होता है । लेकिन सोना को ही उसका कुफल भोगना पड़ता है ।

बेनीपुरी की "बुधिया" के जीवन का अंतिम चरण इस प्रकार है -

> "मैं ने देखा, उसके तन के खडा होते ही, देखा, उसका पेट बाहर निकला है, पैर उठ नहीं रहे हैं । ओह - यह गर्भवती है । तू ठहर, मैं बोझ उठाए देता हूं । मैं ने कहा ।
> ना बाबू, आपसे बोझ उठाने को नहीं कहूंगी । आप नाराज हो जाते हैं । उसके आगे के दो दांत, अजीब करुणा बरस्ते, चम्क पडे ।
> मुझे धक्क से लगा । पुरानी बात याद आ गई । वह संध्या, वह घास का गठ्ठर, बुधिया का निवेदन, जगदीश का व्यंग्य, मेरी बौखलाहट, उसका पागलपन ! उसी समय उसका छोटा बच्चा से उठा । वह उसकी ओर लपकती और मैं सीधे उसके "आदमी के पास पहुंचा । बोझा उठा दिया । वह हट्टा-कट्टा जवान, बोझा लेता, झूमता चलता बना । इधर बच्चे के मुंह सूखा स्तन देती, पुचकारती, दुलारती, हलराती, बुधिया बोली -
> बापू आपके बच्चे हैं ? ये बडे दुष्ट होते हैं बाबू ! देश बरबाद करके भी इन्हें चैन नहीं, ये तंग कर मारते हैं ।"[1]

---

1. बेनीपुरी - माटी की मूरतें, पृ.124

बेनीपुरी ने इस चित्र में बुधिया की करुण अवस्था का चित्र प्रस्तुत किया है । पति हट्टा-कट्टा जवान है । बुधिया सूखी सूखी है । वह हट्टा-कट्टा जवान रूखी सूखी बुधिया को "तंग कर मारता" है । यह भी नहीं, उन दोनों के अब भी कई बच्चे हैं, बुधिया फिर से गर्भिणी है । पत्नी की हालत का परवाह किए बिना बार-बार बच्चा पैदा करना कठोर अत्याचार ही माना जा सकता है ।

ङ • नारी समस्या में नारी की पृष्ठभूमि

नारी उत्पीडन के पीछे मात्र पुरुष ही नहीं है । स्त्री का उत्पीडन स्त्री से भी होता है । धन पर आधारित कई बातें इसके पीछे हैं । इसलिए बहुओं या बेटियों पर अत्याचार करनेवाली सास या विमाताएं होती हैं । स्त्री पर अत्याचार चलता है । स्त्री के द्वारा स्त्री उत्पीड़ित होती है ।

बिंदा को विमाता इस प्रकार सताती है -

"और एक दिन याद आता है । चूल्हे पर चढ़ाया दूध उफना जा रहा था । बिन्दा ने नन्हें-नन्हें हाथों से दूध की पतीली उतारी अवश्य, पर वह उसकी उँगलियों से छूट कर गिर पड़ी । खौलते दूध से जले पैरों के साथ दरवाजे पर खड़ी बिन्दा का रोना देख मैं तो हतबुद्धि-सी हो रही । पँडिताइन चाची से कह कर वह दवा क्यों नहीं लगवा लेती, यह समझना मेरे लिए कठिन था । उस पर जब बिन्दा मेरा हाथ अपने ज़ोर में धड़कते हुए हृदय से लगाकर कहीं छिपा देने की आवश्यकता बताने लगी, तब तो मेरे लिए सब कुछ रहस्यमय हो उठा ।

उसे मैं अपने घर में खींच लाई अवश्य, पर न ऊपर के खण्ड में माँ के पास ले जा सकी और न छिपाने का स्थान खोज सकी । इतने में दीवारें लाँघ कर आने वाले, पण्डिताइन चाची के उग्र स्वर ने भय से हमारी दिशाएं रूँध दीं, इसी से हड़बड़ाहट में हम दोनों उस कोठरी में जा घुसीं, जिसमें गाय के लिए घास भरी जाती थी । मुझे तो घास की पत्तियाँ भी चुभ रही थीं, कोठरी का अंधकार भी कष्ट दे रहा था, पर बिन्दा अपने जले पैरों को घास में छिपाये और दोनों ठंडे हाथों से मेरा हाथ दबाये ऐसे बैठी थी, मानो घास का चुभता हुआ ढेर रेशमी बिछौना बन गया हो ।

मैं तो शायद सो गई थी : क्योंकि जब घास निकालने केलिए आया हुआ गोपी इस अभूतपूर्व दृश्य की घोषणा करने केलिए कोलाहल मचाने लगा, तब मैं ने आँखें मलते हुए पूछा - "क्या सबेरा हो गया ?"

माँ ने बिन्दा के पैरों पर तिल का तेल और चूने का पानी लगाकर जब अपने विशेष सन्देशवाहक के साथ उसे घर भिजवा दिया, तब उसकी क्या दशा हुई, यह बताना कठिन है, पर इतना तो मैं जानती हूँ कि पण्डिताइन चाची के न्यायविधान में न क्षमा का स्थान था, न अपील का अधिकार ।[1]

"स्मृति की रेखाएं" संकलन के चीनी भाई की विमाता उसकी बहन को वेश्यावृत्ति में ढकेल देती है -

---

1. महादेवी-अतीत के चलचित्र, पृ.37

"कई बार पडोसियों के यहाँ रिकाबियाँ धोकर और काम के बदले भात माँग कर बहिन ने भाई को खिलाया था । व्यथा की कौन सी अन्तिम मात्रा ने बहिन के नन्हें हृदय का बाँध तोड डाला इसे अबोध बालक क्या जाने । पर एक रात उसने बिछौने पर लेट कर बहिन की प्रतीक्षा करते करते आधी आंख खोली और विमाता को कुशल बाजीगर की तरह, मैली कुचैली बहिन का कायापलट करते देखा । उसके सूखे ओठों पर विमाता की मोटी उँगली ने दौड दौड कर लाली फेरी, उसके फीके गालों पर चौडी हथेली ने घूम घूम कर सफेद गुलाबी रंग भरा, उसके रूखे बालों को कठोर हाथों ने घेर घेर कर सँवारा और तब नये रंगीन वस्त्रों में सजी हुई उस मूर्ति को एक प्रकार से ठेलती हुई विमाता रात के अन्धकार में बाहर अन्तर्हित हो गई । बहिन का सन्ध्या होते ही कायापलट, फिर उसका आधी रात बीत जाने पर भारी पैरा से लौटना, विशाल शरीरवाली विमाता का जंगली बिल्ली की तरह हल्के पैरों से बिछौने से उछल कर उतर आना, बहिन के शिथिल हाथों से बटुये का छिन जाना और उसका भाई के मस्तक पर मुख रखकर स्तब्ध भाव से पड रहना आदि कम ज्यों के त्यों चलते रहे ।

उस लड्की को सजाने का दृश्य अवतरित करके महादेवी यह सकेत देती हैं कि वह वेश्या वृत्ति केलिए सजाई जाती है जिसमें एक विमाता का स्वार्थ भरा दृष्टिकोण ही झलकता है ।

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.24, 25

इन चित्रों में उत्पीड़क स्त्री ही है । पर उत्पीड़न में कोई फरक नहीं पड रहा है और अधीनस्थ व्यक्ति स्त्री है जो निर्बल और बेसहारा है । स्त्री की शक्तिहीनता का लाभ हमेशा समाज ने उठाया है । उसे भोग्य समझने के पीछे भी यही दृष्टि है। महादेवी वर्मा के इन चित्रों में नारी सताए हुए रूप का नंगा रूप हमें प्राप्त होता है ।

च· बेमेल विवाह की समस्या

पुरुष-प्रधान भारतीय समाज में नारी के विचारों तथा इच्छाओं का कोई महत्त्व नहीं है । इसलिए उसे अपनी अनिच्छा के बावजूद अनेक कार्य करने पड़ते हैं । यहाँ तक कि विवाह के संदर्भ में भी उसकी इच्छा को कोई मानता नहीं है । विवाह उसके भविष्य जीवन की आधार शिला है । उस जीवन के अपने साथी को चुनने का अधिकार उसको प्राप्त नहीं होता । इस प्रकार उसका जीवन अंधेरे में डूब जाता है । बेनीपुरी के रेखाचित्रों में "छब्बीस साल बाद" इस समस्या पर केंद्रित है -

> "पति को शरीर दिया, दिल न दे सकी । कैसे देती - वह पहले ही किसी को दिल दे चुका था, जो उसके सामने बंदरी थी । किंतु बंदर को तो बंदरी ही भावे ? तो भी किस संयम से उसने जवानी काट दी है, यह उसके चेहरे की सौम्यता कह रही थी ।"[1]

कभी - कभी ऐसे ब्याह की वजह इज्जत भी हुआ करती है -

1· बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब (1967 प्रकाशन), पृ·100

"मुझे उस समय क्या-क्या नहीं याद आ रहा था । हम दोनों का साथ-साथ उठना-बैठना, जब मैं सख्त बीमार पडा, उसका रात-रात-भर जागना, जब मैं घर जाने को तैयार होता, उसका उदास विषण्ण चेहरा लेकर खडा हो जाना, उसकी माँ का कहना - लेते जाओ इसे भी ! मैं तिलक-दहेज से भी बच जाऊँगी । फिर, उसका विषादमय विवाह - जब दुल्हे को देखा, माँ रो उठी, माँ की गर्दन पकड यह चिल्ला उठी । किंतु पिताजी की इज्जत का प्रश्न ! शादी होकर रही !"[1]

इस प्रकार माँ-बाप के झूठे गौरव के उलझन में पड्कर अनेक जीवन बर्बाद हो जाते हैं ।

पुरुष हमेशा कम उम्र की वधु चाहता है । थोडा सा अंतर तो लोकमान्य है । लेकिन बिट्टो के साथ जो हुआ उसको महादेवी ने यों चित्रित किया है -

"जिस समाज में 64 वर्ष का व्यक्ति 14 वर्ष की पत्नी चाहता है, वहाँ 32 वर्ष की बिट्टो के पुनर्विवाह की समस्या सुलझा लेना टेढ़ी खीर थी । उसके भाग्य से ही 150 वर्ष की पूर्णायु वाला कोई पुरुष न मिला और और उसके जन्म जन्मान्तर के अखण्ड पुण्य-फल से हमारे 54 वर्ष के बाबा ने उसके उद्धार का बीड़ा उठाया ।[2]

महादेवी की विश्लेषण तथा अभिव्यक्ति की क्षमता का परिचय इन शब्दों से मिलता है । कम उम्र की वधू ढूँढनेवाले बूढों पर

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.100
2. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.53

उन्होंने तीखा व्यंग्य भी मारा है । पर इन शब्दों में उनकी व्यंग्यात्मकता ही झलकती नहीं बल्कि हमारे समाज हीन अवस्था का संकेत भी मिलता है ।

छ· वेश्यावृत्ति की समस्या

वेश्यावृत्ति के संदर्भ में यह कथन सर्वथा सही है कि स्त्री पुरुष के सुख भोग की साधन मानी जाती है । "वेश्याओं को हेय समझनेवालों का समुदाय विस्तृत है, लेकिन उनको उस हेय स्थिति तक पहुँचाने में और उन्हें वहीं रखने में स्वयं उनका हाथ भी है, इसे समझनेवाले विरले ही मिलेंगे ।"[1] बेनीपुरी के घास वाली, तितलियाँ आदि चित्र इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं । घासवाली को मोहन वेश्या बना देता है । प्यार के बदले बच्चे के बोझ का दंड देकर मोहन भाग जाता है । इस प्रकार वह समाज से तिरस्कृत हो जाती है । उसे अपनी आजीविका तथा बच्चे के भरण-पोषण केलिए वेश्या बननी पड़ती है ।

हेय समझी जानेवाली वेश्या की ओर समाज क्यों इतना आकर्षित होता है -

"समूचा पार्क मुखरित हो गया !
दो तितलियाँ आईं और सारा पार्क रंगीन, रसमय,
उछ्वसित और मुखरित हो उठा !

1· अमृतराय - महादेवी वर्मा (तीसरा संस्करण 1963), पृ·115

तितलियाँ दूब पर दौड़ीं, फूलों को चूमा, बेंच पर बैठी, कुछ गुनगुनाई, फुसफुसाईं, इधर-उधर नजरें दौड़ाई सारी आँखें उनकी तरफ !"[1]

और वे किसी दूसरे के सम्मुख वेश्याओं की गिरी अवस्था की आलोचना करते हैं । इस नैतिक गिरावट का असली कारण पुरुष ही है । पुरुष अपनी वासना की तृप्ति केलिए स्त्री का उपयोग करके फेंक देता है । उसे फिर वही पुरुष हेय कहता है । उससे हुए बच्चे को अवैध कहलाता है । एक अवैध संतान को महादेवी इस प्रकार चित्रित करती हैं -

उग्रता की प्रतिमूर्ति-सी नारी की उपेक्षा-भरी गोद और मलिनतम आवरण इस कोमल मुख पर एक अलक्षित करुणा की छाप लगा रहे थे । चिकने काले और छोटे-छोटे बाल पसीने से उसके ललाट पर चिपक कर काले अक्षरों जैसे जान पड़ते थे और मूँदी पलकें गालों पर दो अर्धवृत्त बना रही थीं । छोटी लाल कली जैसा मुँह नींद में कुछ खुल गया था, और उस पर एक विचित्र-सी मुस्कुराहट थी, मानो कोई सुन्दर स्वप्न देख रहा हो । इसके आने से कितने मरे हृदय सूख गये, कितनी सूखी आँखों में बाढ आ गई और कितनों को जीवन की घडियाँ मरना दूभर हो गया, इसका इसे कोई ज्ञान नहीं । यह अनाहूत, सेवाच्छित अतिथि अपने सम्बन्ध में भी क्या जानता है ? इसके आगमन ने इसकी माता को किसी की दृष्टि में आदरणीय नहीं बनाया, इसके स्वागत में

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.16

मेवे नहीं बँटे, बधाई नहीं गाई गई, दादा-नाना ने अनेक नाम नहीं सोचे, चाची ताई ने अपने-अपने नेग के लिए वाद-विवाद नहीं किया और पिता ने इसमें अपनी आत्मा का प्रतिरूप नहीं देखा ।"[1]

महादेवी के इस भावप्रवण चित्र में उस बच्चे तथा माँ की उपेक्षित अवस्था तथा समाज का क्रूर दृष्टिकोण व्यंजित है । श्री अमृतराय इस संदर्भ में लिखते हैं - "कितने सजीव चित्रमय रूप में इस "अवांछित अतिथि" के प्रति समाज का तिरस्कार उन्होंने व्यक्त किया है । समाज के इस बर्बर निर्माण का वे कितना मूल्य आंकती है, वह तो इसी से स्पष्ट है कि उन्होंने एक प्रकार से समाज को चुनौती देकर इन अभागे माँ बेटे को अपनी ममतामयी क्रोड में आश्रय दिया, और जैसे घोषणा की - ओ धर्मध्वजियों, तुम्हारे प्रमाण-पत्रों को मैं कूडा-करकट समझती हूँ ।"[2]

महादेवी और बेनीपुरी की दृष्टि में वेश्याओं को नहीं उन्हें वेश्यावृत्ति में ढकेल देनेवाले पुरुषों में ही मूल्यविघटन हुआ है । यह विचार महादेवी की "श्रृंखला की कडियाँ" में स्पष्ट किया गया है - "रूप का व्यवसाय गर्हित है, व्यवसायी नहीं, क्योंकि किन्हीं परिस्थितियों से विवश होकर ही उसे यह व्यवसाय करना पडा होगा, इसलिए दोष परिस्थितियों का है, परिस्थितियों का निर्माण करनेवालों का है । जो परिस्थितियों के वैभव में पडकर बह गया, वह तो हमारी दया का पात्र ही हो सकता है । उसके प्रति तो हम केवल रचनात्मक दृष्टिकोण रख सकते हैं जिसमें हम पुन: उन परिस्थितियों का निर्माण कर सकें जिनमें पहले का

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.59
2. अमृतराय - महादेवी, पृ.57

रूप - व्यवसायी फिर से हमारे समाज का आदृत सदस्य बन सके ।"[1]

महादेवी वर्मा और बेनीपुरी ने पुरुष प्रधान भारतीय समाज की नैतिक मूल्य दृष्टि की गिरावट का मुद्दा गंभीरतापूर्वक अपने रेखाचित्र का विषय बनाया है ।

2. आर्थिक समस्या

पूँजीवादी समाज में आर्थिक स्तर पर आधारित ऊँच-नीच स्थितियाँ मिलती है । संपत्ति कुछ सीमित व्यक्तियों के हाथ में रहती है । शेष सभी व्यक्ति किसी भी प्रकार ज़िन्दगी का ठेला आगे बढाते हैं । निम्न स्तर का व्यक्ति हमेशा आर्थिक समस्याओं का सामना करता हैं । महादेवी तथा बेनीपुरी ने अपने रेखाचित्रों में इस समस्या का विस्तृत चित्रण किया है । आर्थिक अवस्था की ओर संकेत किए बिना कोई की समाज समस्या संबंधी विश्लेषण पूर्ण नहीं होता ।

क. भूख और अभाव की समस्या

निम्न वर्ग के लोगों में भूखऔर अभाव की समस्या काफी व्यापक है । क्योंकि समाज का बडा भाग इस समस्या के दायरे के अंतर्गत आता है । भूख निम्न वर्गीय जीवन की विकराल समस्या है । यह समस्या अन्य अनेक समस्याओं को जन्म देती भी है ।

---

1. महादेवी - शृंखला की कडियाँ, पृ.42

अपने तथा परिवारवालों के पेट भरने की समस्या हल करने केलिए सबिया छात्रावास में काम करती है -

"सबेरे ही नीम तले कंकरीली धरती पर एक फटा मैला कपडा डालकर वह बच्चे को लिटा देती और कुछ निगरानी करने और कुछ मक्खियाँ उडाने केलिए बच्चिया को बैठा, आप एक तार-तार पिछौरी से कमर कसकर झाडू संभालती ।"[1]

अपने बच्चों की देखभाल तथा कामकाज भी सबिया को साथ-साथ करना पडता है । आजीविका चलाने केलिए उसे जो कठोर परिश्रम करना पडता है उसका सजीव चित्र महादेवी ने दिया है ।

"उसकी सारी कर्तव्य परायणता के दुर्ग को भेद कर जब भूख भीतर पहुँच जाती, तब वह उसी मैले कपडे के एक छोर में बँधा रोटी का टुकडा खोलकर उस छिपे शत्रु से समझौता आरंभ करती । परंतु यह तो मानना ही होगा कि उतने दर्शकों की उपस्थिति में यह कार्य दुष्कर हो उठता था । एक बार ज्यों ही उसने मुर्गे के स्वर में कुछ उपालंभ देने का उपक्रम किया, त्यों ही विद्रोही कौआ उसका भूख से लडने का एकमात्र अस्त्र छीन भागा ।"[2]

भूख की तपी हुई अवस्था में मनुष्य की हालत इतनी दर्दनाक और करुणिक होती हैकि उसकी छटपटाहट में मानवीय नियति का पक्ष भी झलकता है । महादेवी ने सबिया के संघर्ष का भीषण चित्र ही इस में दिया है ।

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.42
2. वही, पृ.43

मुन्नू के अभाव का चित्र महादेवी ने यों दिया है ।

"कभी सब कुछ मिल जाने पर घर में नमक नहीं निकला । बस वह मुन्नू की द्वार पर बैठाकर गाँव के बनिये के यहाँ दौड गई । कभी कंडों के धुएँ से दम घुटने लगा और वह आधी सेंकी हुई रोटी को जलने के भय से चूल्हे के एक ओर टिकाकर पास के खेत से सूखा रेंड या करवी ले आई । कभी गसुर खाते खाते मिर्च माग बैठा और वह टूटीफूटी पर कम से रखी हुई मटकियों से भरे कोने में जा पहुँची । साराँश यह कि कब, क्या, कैसे आदि प्रश्नों पर वह कभी विचार नहीं करती, पर किसी प्रकार की भी आकस्मिकता के लिए प्रस्तुत रहना उसका स्वभाव है ।"[1]

अभावग्रस्तता का भीषण रूप बदलू कुम्हार की पत्नी रधिया के चित्र में हम देख सकते हैं -

"पीडा के मारे उठा ही नहीं जाता था - लेटे लेटे दराती से नाल काटना पडा, इसी से ठीक से नहीं कट सका, पर चिंता की बात नहीं है, क्योंकि तेल लगा देने से दो चार दिन में सूख जाएगा । मैं ने आश्चर्य से उस विचित्र माता के मलिन मुख की प्रशांत और सौम्य मुद्रा को देखा ।"[2]

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.55
2. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.99

पहाडी कुलियों की अभावग्रस्तता का चित्र महादेवी ने इस प्रकार उतारा है ।

"कोई टाट का सिला विचित्र पैजामा और फटे हुए काले खुरदरे कम्बल का गिलाब जैसा कुरता गले में लटकाए भालू के समान घूम रहा है । कोई कोपीन धारी तार-तार फटा सूती कोट पहने, कमर से बोझ बाँधने की मोटी रस्सी लपेटे और रूखे खडे बालों को खुजलाता हुआ से ही जैसा काटेदार जंतु जान पडता है । किसी के कठिन एडी और ऐंठी पेंची उँगलियोंवाले पैर सडक कूटने के दुर्मुठ से स्पर्धा करते हैं और किसी के, स्वरक्षित, मूँज की खुरदरी चट्टी में सिकुड बँधकर पंजे की भ्रांति उत्पन्न करते हैं । ..... ये भी मनुष्य है इसे हम अभ्यासवश ही समझते हैं - इन में मनुष्य का रूप पाकर नहीं ।"[1]

पहाडी कुलियों की अभावग्रस्तता के साथ उनकी असुविधाग्रस्त जीवन का भी वर्णन महादेवी ने किया है । कठिन परिश्रम करते करते इनके रूप रंग इतने बिगड जाते हैं कि उन्हें मनुष्य करना मुश्किल हो जाता है । इस सन्दर्भ को करीब देखें तो उनकी भूख और कठिनाई की नंगई हमारे लिए स्पष्ट होती है ।

अभावग्रस्त गरभू का चित्र बेनीपुरी ने अपने लालतारा रेखाचित्र में इस प्रकार दिया है -

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.32

"साल भर दिन-रात एक की । माघ का जाडा छूटनों में सिर छुपाकर काटा । जेठ की दुपहरिया कुदाल की छाया में गंवाई । भादो की रिमझिम कीचड में खडा खडा हँस-हँस गुजार दी । किंतु जब फल खाने का वक्त हुआ, ये गिद्ध, ... उफ मेरा बच्चा - कितनी तपस्या के बाद मिला बच्चा । दिन-दिन सूखता जा रहा है । वह हँसता-खेलता बच्चा, क्या-से-क्या हो गया । दिन-रात बुखार, खाँसी । पहले कफ थूकता था, अब खून उगलता है ।"[1]

बेनीपुरी ने हलवाहा का जो चित्र अंकित किया है वह बडा ही मार्मिक है -

"मेरे शरीर से पसीना टपक रहा है - तेरे मुँह से सुफेद झाग चू रहा है । उफ ! यह धूप है या अग्नि-बान ? वही तो है ।
मँडुए की एक रोटी, टिकोरे की थोडी चटनी, एक पूरा सूखा मिर्चा, थोडा - सा नमक, बस !
एक टुकडा तू भी खा ले, ओ मेरा जीवन संगी ! अपने को तो सदा अधपेट रहना ही है ।"[2]

बेनीपुरी ने हलवाहे के चित्र के द्वारा यह कहना चाहते हैं कि भारतीय मजदूर दिन भी काम करने पर भी उसे भर पेट भोजन का भी इन्तज़ाम नहीं होता । हलवाहे के भोजन के साधन एक रोटी, थोडी चटनी, एक मिर्चा और नमक हैं । उसका एक अंश वह बैल को भी देता है । गरीब किसानों की अभावग्रस्तता का जीवंत चित्रण यहाँ प्रस्तुत है ।

---

1. बेनीपुरी - लालतारा, पृ.5
2. वही, पृ.10

पनिहारिन का चित्र भी बडा मार्मिक है -

"और आगामी कल तो आने को है, जबकि बुढापा मेरी कमर तोड देगा, किंतु मुझे सिर पर घडा ढोना ही पडेगा । क्योंकि इस घडे ने मेरे सिर से ही नहीं, मेरे पेट से अटूट नाता जोड रखा है । सिर पर जिस दिन गागर न हो, उस दिन इस पापी खड्ड में ईंट-पत्थर कहाँ से पडेंगे ।

..... उस दिन मेरी सूनी गोद में "गोपाल" किलके थे । किंतु यह "गो" तो इस गोपाल केलिए नहीं है ! जो मेरा पानी पीता रहा है, उसका बच्चा ही मेरे अमृत-कलश का सुधा-रस पीयेगा !

मेरे गोपाल तडपते हैं, किंतु मैं क्या करूँ ? इस अमृत कलश का संबंध भी तो मेरी उदर-दरी से है, जिसे भरने केलिए रोज एक मुट्टी अन्न चाहिए ।"[1]

एक दिन घडा न ढोने पर उस "पापी खड्ड" में "ईंट-पत्थर" नहीं पडेगा । इसलिए सिरके घडे का पेट से "अटूट नाता" है । भूख मिटाने केलिए पनिहारिन को अपना दूध भी बेच देना पडता है । वह अपने बच्चे को दूध नहीं दे पाती है । बेनीपुरी के चित्रात्मक प्रयोग से पनिहारिन की अभावग्रस्तता का चित्र स्पष्ट उभर आया है ।

---

1. बेनीपुरी - लाल तारा, पृ.12,13

महाजनी सभ्यता के शिकार

गाँव के किसान और मज़दूर ज़रूरत पड़ने पर देहाती महाजनों से रुपए कर्ज लेते हैं । महाजन कर्ज देने में जितना उदार होते उतना कर्ज तथा सूद वसूल करने में कठोर होते हैं । इसलिए ऋणी कभी महाजन के चक्कर से मुक्त नहीं होता । अपनी संपूर्ण जायदाद उनके नाम लिख देने पर भी कर्ज चुकता नहीं होता । हाकिम मामा को भी इस प्रकार का अनुभव हुआ -

> "नालिश करनेवाला महाजन उनके गाँव का ही था । हाकिम मामा को अच्छी तरह याद है, यह आदमी अपनी ज़िंदगी के प्रारंभिक काल में, उनके खेतों में मज़दूरी करता फिरता था । मामा यह भी नहीं भूले थे कि उसकी मेहनत-पसंदी देखकर वह खुश रहते थे और मज़दूरी देने में या अँटिया -मुठिया देने में उसके प्रति उदार भाव दिखाते थे । इस आदमी ने मेहनत के साथ कंजूसी को अपनाया था और उसके बाद सूद को । ताक-ताककर ज़रूरतमंदों को कडे-से-कडे सूद में देता और सख्ती-से-सख्ती करके उनसे वसूल करता । सूद की भी क्या महिमा है ! फिर वह सूद, जो देहातों में चलता है । कुछ ही दिनों में वह भिखारिया से भिखारी बाबू हो गया था और महाजनजी के नाम से पुकारा जाता था ।"[1]

---

1. बेनीपुरी - लालतारा, पृ.25

इस उद्धरण में बेनीपुरी ने सुंदर ढंग से गरीब भिखारिया का महाजन जी के रूप में काया पलट का चित्र है । साधारण व्यक्ति की आर्थिक समस्या में महाजनों के अत्याचार का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है । बेनीपुरी ने गाँवों के किसानों एवं मज़दूरों को प्रेमचन्द के समान निकट देखा और उनसे उनका संबंध भी था । इस परिचय को प्रेमचन्द के अपने कल्पित पात्रों के सहारे प्रस्तुत किया है । बेनीपुरी ने कुछ जीवन्त ग्रामीण व्यक्तियों के सहारे महाजनी कुसंस्कृति का चित्र खींचा है । यह भी एक प्रकार का उत्पीडन है जिसमें गरीब लोग इतने त्रस्त होते हैं और कभी कभी उनका पूरा परिवार त्रस्त होता है । बेनीपुरी के ऐसे रेखाचित्र हमारे इतिहास के गवाह कहे जा सकते हैं ।

सामाजिक समस्याओं के सशक्त चितेरे

सामाजिक समस्याओं के प्रति प्रत्येक साहित्यकार की अपनी प्रतिक्रिया होती है । कभी वह विद्रोह का स्वर बुलन्द करता है - कभी आक्रोश का और व्यंग्यात्मक स्वर । हताशा का स्वर भी कहीं कहीं मिलता है । यह प्रतिक्रिया उसके नागरिक और रचनाकार होने को लेकर । रचनाकार को हर सामाजिक समस्या के प्रति ईमान्दारी से प्रतिक्रियान्वित होना पडता है क्योंकि उसकी लिखित सामग्री उसकी ही सामग्री नहीं अपितु सामाजिक सामग्री भी है । इसलिए सामाजिक समस्याओं पर केन्द्रित किसी भी विधा की मूल चिन्तनाओं को निकट से देखना ज़रूरी है । महादेवी वर्मा ने अपने रेखाचित्रों में विशेषकर नारी समस्या को केन्द्र में रखा । इसका यह मतलब नहीं कि महादेवी का दृष्टिकोण एकायामी है, अर्थात् उन्होंने समाज की एक ही समस्या को देखा और परखा है । महादेवी के नारी समस्या को विभिन्न

दृष्टियों से देखा है । यह सही है कि उनके रेखाचित्रों में शोषित एवं अधीनस्त व्यक्ति के प्रतीक के रूप में स्त्री ही विद्यमान है । लेकिन विचारणीय मुद्दा यह है कि महादेवी के स्त्री को किन-किन सन्दर्भों में व्यक्त किया है । उनके रेखाचित्रों की विशेषता यह है कि उन्होंने किसी भी समस्या चाहे वह बाल विवाह संबन्धी हो, या वैधव्य संबंधी,को निकट देखा है । उनकी करीबी दृष्टि की यही विशेषता है कि एक समस्या अपनी दारुण चित्रात्मकता के साथ खत्म नहीं होती । वैधव्य संबन्धी समस्या में हमारे पारिवारिक मूल्यों एवं हमारी सामाजिक प्रतिक्रियाओं की विघटनात्मक स्थिति का लेखा-जोखा भी मिलता है । हमारी आस्थाओं में निहित खोट का उन्होंने पर्दाफाश किया है । हमारी रूढियों पर उन्होंने प्रहार किया है । हमारी पूँजीवादी सामाजिक संस्कार पर आघात भी किया है । इसका मतलब यही है कि उनके रेखाचित्रों में एक समस्या अपनी एकायामिता की संकीर्ण अवस्था में नहीं है । यही महादेवी वर्मा की खूबी है । समस्याओं का स्वरूप रेखाचित्रों में चित्रात्मक और दृश्यात्मक स्थितियों में विद्यमान है यद्यपि तथ्यात्मक स्वरूप भी कहीं कहीं उपस्थित हुआ है । "श्रृंखला की कडियाँ" में नारी समस्या तथ्यात्मक ढंग से उन्होंने प्रस्तुत की है । जब हमारी मिट्टी में नारीयुक्तिवाद का बीज तक अंकुरित नहीं हुआ था उसी दौर में महादेवी ने नारी समस्या को केन्द्रीय विषय बनाया और हम इस बात से परिचित है कि नारी समस्या किसी भी हालत में नारियों तक सीमित समस्या नहीं है । वह हमारी एक सामाजिक समस्या है और प्रत्येक सामाजिक समस्या की असंख्य पृष्ठभूमियाँ होती है और उनके प्रति साहित्य की सजगता की आवश्यकता है । महादेवी में इसके पर्याप्त संकेत मिलते हैं ।

रामवृक्ष बेनीपुरी नारी समस्या को लेकर कम ही रेखाचित्र लिखे। बेनीपुरी गरीबों की समस्या के प्रभावित रचनाकार है। उनके जीवन में अकसर अभाव ही रहता है। इसलिए अन्न केलिए तरसते हैं। भूख की समस्या को उन्होंने अपने रेखाचित्रों केलिए एक मुख्य समस्या मानी है। पर उनकी विशेषता यह है कि भूख किसी व्यक्ति या किसी सीमित समाज की पेट की समस्या मात्र नहीं है। जब हम इस समस्या की गहराई में जाते हैं तो हमें यह मालूम होता है भूख की समस्या जन्मी कैसी है, उसका स्रोतस्थल कौन सा है, उसके जन्मदाता कौन है और वह किस वातावरण में पलती-बढती है। ये सब हमारे ऐतिहासिक वृत्तान्त के पक्ष है। अत: बेनीपुरी द्वारा दुहाई गई यह समस्या हमारे देश की पूंजीवादी संस्कृति की देन है। उसके साथ धार्मिक रूढियों का सम्मिलित होना या जातिवाद का जुड जाना उसे और भी विकराल कर देते हैं। इन सभी पक्षों की ओर सन्दर्भवश बेनीपुरी ने प्रकाश डाला है। वे भूख से त्रस्त गरीब मज़दूरों का चित्र भी प्रस्तुत करते हैं। साथ ही उनपर होनेवाली लूटकी तरफ भी इशारा करते हैं। समस्या के सही विश्लेषण केलिए यह पर्याप्त है।

गरीब समाज की समस्या को सूझ-बूझ के साथ प्रस्तुत करने केलिए बेनीपुरी ने महाजनी संस्कृति, जिसने हमारे गरीब समाज ग्रस्त लिया है, के पाशवीय चेहरे भी सामने कर दिये हैं। इस प्रकार अभावग्रस्तता एक संकेत न होकर, एक दर्दनाक पेशकश न होकर प्रखर सामाजिक दृष्टि की केन्द्रीय स्थिति के रूप में विश्लेषित हुई। यही बेनीपुरी की विशेषता है।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

अध्याय - पाँच

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के व्यक्तिकेंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

अध्याय - पाँच

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के व्यक्तिकेंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

सामाजिक समस्या प्रधान रेखाचित्रों में व्यक्ति चित्रण

व्यक्ति केन्द्रीकरण रेखाचित्र की मौलिक विशेषता है । रेखाचित्र के माध्यम से लेखक व्यक्ति का चित्र ही खींचता है । व्यक्ति समाज का अंग होने के कारण व्यक्ति चित्रो के साथ समाज का चित्र भी अंकित हो जाता है । व्यक्ति के चित्र को सार्थकता प्रदान करने केलिए यह समन्वयात्मक चित्रांकन आवश्यक है ।

सामाजिक कहे जाने योग्य रेखाचित्रों में जो व्यक्ति चित्र अंकित हैं उनमें, संबद्ध सामाजिक समस्याएँ अवश्य ही संकेतित होती हैं । इस प्रकार के रेखाचित्रों का अध्ययन सामाजिक समस्या केंद्रित रेखाचित्रों के अंतर्गत ही संभव है । ऐसे रेखाचित्रों में सामाजिक समस्याएं एवं व्यक्तिकेंद्रीकरण की प्रवृत्ति संतुलित अवस्था में रहती है । इतने पर भी व्यक्तिकेंद्रीकरण को ही अधिक प्रमुखता मिली है । एकाध उदाहरणों से यह तथ्य स्पष्ट हो सकता है ।

महादेवी अंधे आलोपी के व्यक्ति पक्ष के एक प्रमुख पक्ष का यों उदघाटन करती हैं -

"एक बार की घटना अपनी क्षुद्रता में भी मेरे लिए बहुत गुरु है । मैं ज्वर से पीड़ित थी । .... दूसरे दिन संदेश मिला कि आलोपी मुझे देखने की आज्ञा चाहता है । उतने कष्ट के समय भी मुझे हँसी आए बिना न रह सकी । अंधा आलोपी असंख्य बार आज्ञा पाकर भी मुझे देखने में समर्थ कैसे हो सकता है । पर आलोपी भीतर आया और नमस्कार कर टटोलता - टटोलता देहली के पास बैठ गया । फिर अपनी धँधली, शून्य आँखों की आर्द्रता बाँह से पोंछकर पिछौरी के एक छोर में लगी गाँठ खोलते हुए उसने अपराधी की मुद्रा से बताया कि वह स्वयं जाकर आलोपी देवी की विभूति लाया है । वह चुटकी जीभ पर रख ली जाय और एक माथे पर लगा ली जाय, तो सब रोग-दोष दूर हो जाएगा । कहने की इच्छा हुई - जब देवी तुम्हारा ही पूरा न कर सकी, तब मेरा क्या करेंगी, पर उनके वरदान की गंभीरता ने मुख से कुछ न निकलने दिया । आलोपी देवी की दिव्यता प्रमाणित करने केलिए आलोपी दीन का कर्तव्य में वज्र और ममता में मोम के समान हृदय ही पर्याप्त होना चाहिए । उसके निकट जिसका परिचय स्वर समूह के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता, उस व्यक्ति के प्रति इतनी सहानुभूति भूलने की वस्तु नहीं ।"[1]

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.89-90

"स्मृति की रेखाएं" में महादेवी भक्तिन के व्यक्तित्व का परिचय देती हैं -

> "परिवार और परिस्थितियों के कारण उसके स्वभाव में जो विषमताएं उत्पन्न हो गई हैं उनके भीतर से एक स्नेह और सहानुभूति की आभा फूटती रहती है, इसी से उसके संपर्क में आनेवाले व्यक्ति उसमें जीवन की सहज मार्मिकता ही पाते हैं ।"[1]

महादेवी भक्तिन के व्यक्तित्व से कितना प्रभावित थी, यह भक्तिन के रेखाचित्र के अंतिम वाक्य से स्पष्ट हो जाता है -

> "भक्तिन की कहानी अधूरी है - पर उसे खोकर मैं इसे पूरी नहीं करना चाहती ।"[2]

इस प्रकार रेखाचित्रकारों ने निम्न वर्ग के व्यक्तियों के व्यक्तित्व को प्रभावोत्पादक ढंग से प्रस्तुत किया है । रेखाचित्रकार की रचना की विशिष्टता के कारण नहीं बल्कि चित्रित व्यक्ति के जीवन से संबंधित विभिन्न घटनाओं के चित्रण के दौरान उनका असली व्यक्तित्व उभर आने के कारण ही यह प्रभावोत्पादकता आ गयी है ।

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएं, पृ.16
2. वही, पृ.18

विशिष्ट व्यक्तियों पर केंद्रित रेखाचित्रों में रचनाकारों ने इन व्यक्तियों के कुछ ऐसे पक्ष को उभारने का प्रयास किया है जो उनकी असली श्रेष्ठता का कारण बन गया है । इस प्रकार रेखाचित्रकारों ने उनमें निहित साधारण व्यक्ति को ढूँढ निकाला है । सामान्य लोगों से उनका संबंध, रचनाकार्य में उनके पथदर्शक, सिद्धांत, आदि अनेक मुद्दों का विश्लेषण रेखाचित्रकार इस उद्देश्य से करते हैं ।

विशिष्ट व्यक्तियों पर केंद्रित महादेवी वर्मा के रेखाचित्रों का संग्रह है "पथ के साथी" । इस संग्रह में महादेवी ने अपने साहित्य पथ के साथियों को चित्रित किया है । उन व्यक्तियों की महानता का मूल्यांकन महादेवी ने रचनाकार्य में उनकी सफलता के आधार पर नहीं किया है । उनमें जो सामान्य व्यक्ति निहित है उस को बाहर लाने का प्रयास महादेवी ने किया है ।

रामवृक्ष बेनीपुरी के "मील के पत्थर में देश-विदेश के विशिष्ट व्यक्तियों के रेखाचित्र उपलब्ध हैं । इस संग्रह में बेनीपुरी ने रेखाचित्र के अलावा संस्मरण, ललित निबंध, आत्मकथा, जीवनी आदि विधाओं का सहारा लिया है । अर्थात् इसे पूर्णत: रेखाचित्र कहना उचित नहीं है ।

ये दोनों संकलन व्यक्तियों के व्यक्तित्व को निकट से देखने का उपक्रम है । यह प्रवृत्ति अन्य रेखाचित्रों में भी उपलब्ध है जिनमें समाज के निचले तबके के लोगों के चित्र हैं । पर यहाँ व्यक्तित्व की खोज भी प्रवृत्ति ही केन्द्रीय विषय है । इसलिए व्यक्तिकेन्द्रीकरण के आधार पर उन्हें पुन: परखने का प्रयास किया गया है ।

कृतिकार पक्ष की मौलिकता की खोज

किसी कृतिकार की महानता उसकी मौलिकता पर निर्भर करती है । मौलिकता के कारण ही वे साहित्य जगत में बने रहते हैं । मौलिकता सिर्फ उनकी सृजनात्मकता में ही प्रकट नहीं होती है । वह इनके जीवन में, आचरण में तथा जीवन दर्शन में प्रकट होती है । मौलिकता उनके व्यक्तित्व का एक अभिन्न अंग है । अपने रेखाचित्रों में विभिन्न साहित्यकारों के संबंध में अपना चित्र प्रस्तुत करते समय महादेवी वर्मा और बेनीपुरी ने इस मौलिक पक्ष पर ध्यान दिया है ।

"पथ के साथी" का प्रारंभिक चित्र महान कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर केन्द्रित है । महादेवी वर्मा ने उन के व्यक्तित्व के कुछ अनूठे पक्षों को प्रस्तुत किया है । "अमृत को अमृत और विष को विष रूप में ग्रहण करके तो सभी दे सकते हैं । परंतु विष में रासायनिक परिवर्तन कर और तत्वगत अमृत को प्रत्यक्ष करके देना किसी विदग्ध वैद्य का ही कार्य रहेगा ।"[1]

कवि की महानता से बढकर महादेवी वर्मा रवीन्द्रनाथ में निहित मौलिक मनुष्य का प्रतिपादन कर रही है । किसी में उन्होंने क्षुद्रता नहीं देखी । क्षुद्र, अशिव और विरूप को उन्होंने विशाल, शिव और सुन्दर में परिवर्तित कर दिया ।[2] रवीन्द्र नाथ ठाकुर की सरलता यहाँ दर्शनीय है । क्षुद्र में भी महान व्यक्ति को वे इसलिए देख सकते हैं कि वे अपनी महानता पर

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.14
2. वही, पृ.14

दर्प करनेवाले नहीं है । उन्होंने मनुष्य की स्वभावगत महानता की खोज की है और उसे स्वीकार किया भी है । यही कारण है कि वे इस प्रकार घोषणा करते हैं -

"मुझे जन तो बहुत मिले पर साधारण कोई नहीं मिला ।"[1]

"मील के पत्थर" में बेनीपुरी ने "प्रेमचंद की मौलिकता पर प्रकाश डाला । प्रेमचंद ने अपने साहित्य द्वारा एक "नए वर्ग" की अगवानी "की सूचना दी है । हमारे देश में अनेक साहित्यिकों का उत्थान-पतन हुआ है । लेकिन वे सब एक ही वर्ग के हाथ में थे । "प्रेमचंद की रचनायें एक बिल्कुल नए वर्ग के नेतृत्व का आभास देती है ।"[2] यह शोषित वर्ग है । वे शोषकों के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाते थे । इस दृष्टि से वे क्रान्तिकारी थे । उनकी कृति बहुमुखी थी । समाज, सरकार, और पूँजीवाद के विरुद्ध उन्होंने लिखा है ।

"उसके हाथ में कलम थी तो क्या हुआ, वह योद्धा था । जब उसने देखा, समाज उसके प्रेम - संबन्ध में बाधक हो रहा है, उसने उसे जमकर ठोकर लगाई । जब देखा, सरकार अनीति की राह पर बेधड़क बढती जा रही है, उसने उससे संबंध-विच्छेद कर लिया । जब देखा, शुद्ध साहित्य के क्षेत्र में भी पूँजीवाद अपना विषैला प्रभाव जमाए जा रहा है, उसने उसके खिलाफ युद्ध किया ।"[3]

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.17
2. महादेवी - पथ के साथी, पृ.16
3. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.35

प्रेमचंद को बेनीपुरी ने वेदव्यास कहा है । जैसे व्यास ने महाभारत में भारतीय समाज को उभारा वैसे प्रेमचंद ने आधुनिक समाज को चित्रित किया है । उनकी महानता है कि उन्होंने किसान-मज़दूरों को पात्र बनाया । इसलिए वे साहित्यिक अग्रदूत है । निम्न-स्तर के व्यक्तियों को ही उन्होंने चित्रित किया । साधारण से साधारण लोगों का चित्रण करके वे असाधारण हो गए ।

> "जिन्हें हम गूँगा -मूक समझते थे, उन्हें उसने ज़ुबान दी, जिन्हें हम अन्धा - सूर समझते थे, उनकी आँखों को उसने नूर दिया । झोंपडियों की कौन बात, खेत की मेंड पर बनी मड़ैयों तक को उसने बोलना, हँसना, प्यार करना, रोना सिखलाया । हमारे विविधतापूर्ण समाज की इस निचली तह में भी विविधता की कमी नहीं, प्रेमचंद की कला ने स्पष्ट कर दिया ।"[1]
> यही प्रेमचंद की मौलिकता है ।

बेनीपुरी ने बर्नार्डशॉ के व्यक्तित्व की मौलिकता पर बल दिया है । आत्मनिर्भरता और उनके मौलिक विचार इस दौरान चर्चा में आए हैं । बर्नार्ड शॉ की आत्मनिर्भरता का प्रभाव उनकी रचनाओं पर पडा है। घर पर किसी चीज़ की कमी नहीं थी । फिर भी प्यार का अभाव था । माँ को वे बहुत चाहते थे । लेकिन बहुत कम मिल सकते थे । इसी कारण आत्म-निर्भरता की प्रवृत्ति उनमें बढी । स्कूल को वे जेल समझते थे -

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.24

"वह जेल से भी बुरा है । जेल में वार्डन या जेलर की लिखी हुई पुस्तकें तो नहीं पढाई जाती और उनके याद न करने पर कोडे तो नहीं लगाए जाते । जेल में जबर्दस्ती बैठाकर उन बेवकूफों की बातें तो नहीं सुनाने को मज़बूर किया जाता, जो उन बातों को स्वयं न समझते हैं, न समझने की कोशिश करते हैं, फलत: जिसमें समझाने की न योग्यता होती है, न इच्छा ! जेल में सिर्फ देह पर अत्याचार किया जाता है, दिमाग पर नहीं, साथ ही बदमाश कैदियों से रखा भी की जाती है । स्कूल में ऐसी कोई सुविधा नहीं ।"[1]

शॉ के इन शब्दों में ही उनकी आत्मनिर्भरता और मौलिकता दर्शनीय है । हर रविवार को गिरजाघर जाना, वहाँ चुपचाप बैठे रहना आदि शॉ की दृष्टि में मूर्खता है । इस विचार में भी उनकी आत्मनिर्भरता का स्थाई प्रभाव विद्यमान है । वे कहते हैं -

"बढिया से कपडा पहनकर उस अँधेरे, गंदी हवा से भरे घर में मूर्ति की तरह बैठे रहो, जब बाहर इतनी सुन्दर भोर हो ..... ऐसा बच्चा यह निर्णय कर लेकिन बडा होने पर मैं इस घर में झाकूँगा नहीं, तो आश्चर्य क्या ?"[2]

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.35
2. वही, पृ.33

बेनीपुरी ने शॉ के व्यक्तित्व में निहित कुछ मौलिक पक्षों पर ही प्रकाश डाला है । कटघरे में बन्द जीवन को शॉ ने नपसंद किया जो उनकी जीवन दृष्टि का एक महत्वपूर्ण अंश है । उसमें उनका स्वतंत्र दर्शन द्रष्टव्य है ।

मैथिलीशरण गुप्त को "दद्दा" कहकर महादेवी ने उनके साथ के अपने संबन्ध को दर्शाया ज़रूर है । लेकिन उनकी मौलिकता की ओर इशारा करना उनका मुख्य उद्देश्य रहा है । नामहीन पात्रों को नाम देने का महान कार्य श्री॰मैथिलीशरण गुप्त ने किया है । "रामायण" और "महाभारत" में कुछ ऐसे पात्र हैं जिन्हें कोई महत्व नहीं दिया गया है ।

"वे रामायण को नहीं भूलते, पर रामायणकार जिन्हें भूल गया उन चरित्रों को अपने ढंग से स्मरण करते हैं । वे महाभारत के स्थान में कोई अन्य कथा नहीं खोजेंगे, पर महाभारत के भीतर खोये किसी साधारण पात्र को खोज लेंगे । ये कथाएं अनेक युगों की लंबी यात्राओं का आँधी पानी, धूप - छाया सहते सहते धूमिल हो गयी हैं, पर जिन्हें ये वहन करके लाई हैं वे पात्र गुप्त जी के आँसुओं में धुल-धुलकर नये रंगों में उद्भासित आज के प्राणी बन चुके हैं । उनके साहित्य में जो नया है उसका मेरुदंड पुराना है और जो पुराना है उस पर रंग नया है।"[1]

महादेवी गुप्तजी में निहित रचनाकार का मर्म उभारना चाहती हैं । रामायण को भूलकर नहीं, बल्कि उसी के संदर्भ में

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ॰26

उपेक्षित स्त्री पात्रों को अस्मिता प्रदान करने का जो मौलिक कार्य गुप्त जी ने किया उसे मार्मिकता के साथ महादेवी ने यहाँ चित्रित किया है ।

महादेवी वर्मा ने सुभद्राकुमारी चौहान का चित्र एक स्वतंत्र आत्मा के रूप में खींचा है । वे मानती है -

> "मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है । चाहे वह स्त्री-शरीर के अंदर निवास करती हो चाहे पुरुष - शरीर के अंदर । इसी से पुरुष और स्त्री का अपना - अपना व्यक्तित्व अलग रहता है ।"[1]

लेकिन स्त्री को परिवार और समाज बंधन में बाँधते है । इसका बदलना अवश्यक है । उसके बिना व्यक्तित्व-विकास असंभव है । ये सुभद्रा कुमारी चौहान का क्रांतिकारी विचार हैं । वे कहती हैं कि व्यक्ति विकास केलिए परंपरा को तोडना पडता है । लेकिन यह अधर्म माना जाता है । मनुष्य को होश में लाने केलिए श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान की मौलिकता इन शब्दों में स्पष्ट है । महादेवी ने सुभद्राकुमारी चौहान को क्रान्तिकारी के रूप में देखा है । उनकी रचनाएं अनुभवों की भूमि पर खडी हैं । क्योंकि वे स्कूली शिक्षा बहुत कम पा सकी थी ।"[2]

> "विकास-पथ की बाधाओं का ज्ञान ही महान विद्रोहियों को कर्म की प्रेरणा देता है ।"[3]

---

1. महादेवी - पथ के साथ, पृ.4।
2. वही, पृ.42
3. वही, पृ.55

पारिवारिक और सामाजिक बाधाएँ ही इनकी भी प्रेरणा रही ।

निराला जी के संदर्भ में भी यह सच है । वे भी क्रांतिकारी और क्रान्तदर्शी थे ।

> "वे उस झंझा के समान हैं जो हल्की वस्तुओं के साथ भारी वस्तुओं को भी उडा ले जाती है । उस मंद समीर जैसे नहीं जो सुगंध न मिले तो दुर्गन्ध का भार ही ढोतीफिरता है । जिसे वे उपयोगी नहीं मानते उनके प्रति उनका किंचित मात्र भी मोह नहीं, चाहे तोडने योग्य वस्तुओं के साथ रक्षा के योग्य वस्तुएं भी नष्ट हो जावें ।"[1]

महादेवी निराला जी को सत्य-द्रष्टा मानती हैं । सत्य का मार्ग सरल है । उस तक तर्क और संदेह के मार्ग से पहुंच नहीं सकते । "बालकों जैसा सरल विश्वासी" ही वहाँ पहुंच पाता है । निराला इस कोटि का व्यक्ति है । वे सत्य के पथ पर सत्य की खोज कर रहे थे ।

रामवृक्ष बेनीपुरी के "मील के पत्थर" में हरनाथसिंह सिलोने को सत्य के पथ पर अग्रसर व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया है । एक उपन्यास में उन्होंने कहा है -

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.56

"जो न्याय और सत्य केलिए जीता है, वह नास्तिक नहीं है, वह भगवान में है और भगवान उसमें है ।"[1]

निराला का विश्वास भी इस विचार से मिलता जुलता है । सिलोने का विचार बेनीपुरी जी ने इस प्रकार दिया है - वास्तविकता जीवन में ही नैतिकता जीवित रहती और विकसित होती है । इसके बिना हमारा प्रेम, बलिदान, त्याग सब झूठे हैं । हमारे चारों ओर फैली अव्यवस्था के विरुद्ध हमारी नैतिक भावना को उन्मुख करना चाहिए । तब हम स्वर्ग की कल्पना में व्यर्थ नहीं बहेंगे । लेकिन उन शक्तियों से लडेंगे जो मनुष्य को मनुष्य के विरुद्ध खडा करती है । मनुष्य के धार्मिक अनुष्ठानों में फंसाना नहीं चाहिए । बल्कि, "सामाजिक जीवन को उन्नत बनाने के कार्य में उत्सर्ग कर देना चाहिए ।"[2] वही क्रान्ति है । हग्नात्सियो का विचार है कि मनुष्य की आत्मा की विजय धार्मिक बंधनों के बाहर ही संभव है । धार्मिक बंधनों में पडे रहकर आत्मा का विकास नहीं होता ।

"उसी की आत्मा पतन से बच सकती है जिसने व्यक्तिगत अहंकार, पारिवारिक अहंकार और वंशगत अहंकार पर विजय प्राप्त कर ली हो, जिसने अपने चारों ओर कल्पना का घेरा न बना लिया हो जिसने अपने को हवाई किले में बंद नहीं कर लिया हो । आत्मा उसी की मुक्त है, जिसने अपने को वर्तमान सामाजिक अवस्था से छुडाकर भाग खडे होने की भावना को मार भगाया हो ।

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.104
2. वही, पृ.106

> नैतिक जीवन का अर्थ ही है उत्सर्ग और बलिदान का जीवन । आज के समाज में क्रांतिकारी जीवन ही यथार्थ में नैतिक जीवन है ।"[1]

हरेक व्यक्ति ने धर्मांधता के विरुद्ध मनुष्यता को जगाने की कोशिश की है। महादेवी ने रवीन्द्रनाथ ठाकुर में यही देखा है ।

> "कवीन्द्र में ऐसी क्षमता थी और उनकी इस सृजन-शक्ति की प्रखर विद्युत को आस्था की सजलता संभाले रहती थी । यह बादल-भरी बिजली जब धर्म की सीमा छू गयी तब हमारी दृष्टि के सामने फैले रूढियों के रंध्रहीन कुहरे में विराट मानव धर्म की रेखा उद्भासित हो उठी ।"[2]

इस कारण से महादेवी वर्मा ने यह लिखा कि उनके व्यक्तित्व और साहित्य में अद्भुत साम्य है ।"[2]

महादेवी की दृष्टि में प्रसाद भारतेन्दु के बाद के ऐसे साहित्यकार हैं जिन्होंने उनके क्षेत्रों का एक साथ स्पर्श किया है । करुण मधुर गीत, अत्युक्ति रचनाएँ, मुक्त छंद, खंड काव्य आदि से उन्होंने अपनी प्रतिभा दिखाई । कहानी, उपन्यास, निबंध, प्रतीक रूपक, एकांकी, गीत नाट्य, ऐतिहासिक नाटक आदि भी उन्होंने लिखे हैं । उन्होंने अपनी रचना में समन्वयात्मक जीवन-दर्शन को अपनाया है । उनके सृजन की प्रेरणा सामंजस्य की पुकार है ।

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.14
2. वही, पृ.8

महादेवी लिखती हैं -

> "प्रसाद जी का जीवन, बौद्ध विचार-धारा की ओर उनका झुकाव, चरम त्याग, बलिदानवाले तरुण कोमल पात्रों की सृष्टि, उनके साहित्य में बार-बार अनुगुंजित करुणा का स्वर, आदि प्रमाणित करेंगे कि उनके जीवन के तार इतने सधे और खिंचे हुए थे कि हल्की-सी कम्पन भी उनमें अपनी प्रतिध्वनि पा लेती थी ।"[1]

बेनीपुरी के "मील के पत्थर" में टॉलस्टाय का चित्र उल्लेखनीय है । पच्चास वर्ष की आयु तक टॉलस्टाय मौज मनाते रहे । लेकिन उसके बाद उनमें परिवर्तन लक्षित होने लगे । वे एक नये धर्म, एक नए जीवन का मसीहा बन गये । बुराई से लड़ने का एक नया तरीका उन्होंने अपनाया "पैसिव रेजिस्टेंस" । बेनीपुरी कहते हैं इसी का भारतीय रूप "सत्याग्रह" है ।"[2] उन्होंने धन को पाप माना ।

> "इसके बाद ही उनमें और उनके परिवार में एक अजीब द्वन्द्व मचता है । टॉलस्टाय धन को पाप मानकर उसका त्याग करने पर तुले हैं, किन्तु उनकी पत्नी बेचारी क्या करे, घर कैसे चलाये ! चेरत्कोव नाम्क उनके एक प्रशंसक ने इस आग में घी का काम किया - उसके चलते घरेलू बातें बिगड़ती ही गई । अन्त में, उन्हें घर छोड़कर चल देना पड़ा ।"[3]

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ॰70
2. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ॰86
3. वही, पृ॰87

सुकुमार कलेवर के साथ सुमित्रानंदन पंत को महादेवी ने हमारे सामने प्रस्तुत किया है । उनकी सुकुमारता उनकी शब्द और वाणी में भी झलकती थी । वे प्रकृति के सुंदर आँगन में जन्मे और पले उस प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य में वे लीन हो गए और उस तल्लीनता की अभिव्यक्ति उनकी रचनाओं में हुई है -

> "आश्चर्य नहीं कि किशोर कवि प्रकृति के साथ ही दुकेला रहा । उसे झरनों - नदियों में लास दिखाई दिया, पक्षि - भ्रमरों में संगीत सुनाई दिया, फलों कलियों में हँसी की अनुभूति हुई, प्रभात का सोना मिला, रात में रजतराशि प्राप्त हुई, पर कदाचित हँसने - रोनेवाला हृदय इस भूलभूलैया भरी चित्रशाला में खोया रहा । आँसू के खारे पानी में डुबाये बिना सौन्दर्य के चित्र रंग पक्के नहीं हो सकते, पर प्रकृति के पास सौन्दर्य है, आँसू नहीं ।"[1]

बेनीपुरी ने माखनलाल चतुर्वेदी के व्यक्तित्व के एक विशिष्ट पक्ष को प्रस्तुत किया है । वे अगर "एक भारतीय आत्मा" के नाम से प्रसिद्ध हैं तो वह सही है क्यों कि भारत के हर कोनों को, संस्कृति के हर कण को उन्होंने समानदृष्टि से देखा है ।

माखनलाल चतुर्वेदी ने मनुष्य की प्रकृति को देखा । उनमें राष्ट्रप्रेम भरकर मनुष्य बनाने की चेष्टा उन्होंने की । उनकी अधिकांश रचनाएं उन्हीं के जीवन से संबंध रखती हैं । भारतीय एकता केलिए उन्होंने प्रयास किया । वे कहते हैं -

---

1. महादेवी - पथ के साथ, पृ.76

"आप लोगों की गंगा की वह समतल लंबी चादर-सी
एकरस फैली हुई भूमि भी क्या रहने की चीज़ है ।
उफ, वह कितनी गद्यात्मक है । देखिए,' हमारा प्रदेश !
नर्मदा और बेतवा जैसी धमा - चौकडी मचानेवाली
नदियाँ, विंध्या और सतपुडा की वे नीची उँची
तलहटियाँ, पथरीली, जंगली जमीन - जीवन और
कवित्व मानो यहाँ क्रीडा करते हैं ।"[1]

पंत के समान ये भी अपने जन्म स्थान के प्रकृति सौंदर्य से काफी प्रभावित हैं ।

जितने चित्र यहाँ प्रस्तुत हैं वे अलग अलग है । अलग अलग विशिष्टताओं का उल्लेख ही दोनों रेखाचित्रकारों ने किया है । पर इन विशिष्टताओं के कुछ अंश उनकी रचनाओं में है । साथ ही उनके व्यक्तित्व के कुछ अहं पक्ष इनमें से हमें प्राप्त होते हैं ।

व्यक्तिकेंद्रीकरण के माध्यम से व्यक्तित्व केंद्रीकरण की ओर इन रेखाचित्रों में भी उन्मुखता है । अपने इष्ट व्यक्तियों के व्यक्तित्व को प्रस्तुत करना ही उनका उद्देश्य नहीं है । इन मौलिक पक्षों को जीवनदायी, प्रेरणादायी पक्षों के संदर्भ में भी देखने का कार्य दोनों रेखाचित्रकारों ने किया है ।

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.126

मानवीयता के अंश

व्यक्ति तभी महान बनता है जब उसमें मानवीयता का गुण हो । मानवीयता के बिना मनुष्य पशु-समान है । "पथ के साथी" और "मील के पत्थर" में जिन महान व्यक्तियों को चित्रित किया गया है उनमें रेखाचित्रकारों ने यह गुण प्रचुर मात्रा में देखा है । मात्र उनके कार्य-कलाप उन्हें महान नहीं बनाते । अपने सहजीवों के प्रति उन्होंने जो स्नेह और सहानुभूति प्रकट की, वे ही उन्हें महान बना रहे हैं ।

मानवीय होने का मतलब है कि अपने स्वार्थ से मुक्त होना । यह आसान लग सकता है लेकिन उसका कार्यान्वयन कठिन है । अपने स्वार्थ को छोड पाना मनुष्य केलिए मुश्किल है । जो कोई इसमें विजयी सिद्ध होता है उसी में मानवीयता का अनुभव कर सकते हैं । "पथ के साथी" में निराला के अंतरंग व्यक्तित्व की विभिन्न झाँकियाँ इन्हीं गुणों से युक्त हैं । आत्मीयतापूर्ण शब्दों में महादेवी वर्मा ने निराला के एक अनुपम व्यक्तित्व को हमारे सामने प्रस्तुत किया है ।

महादेवी ने निराला जी के अस्त-व्यस्त जीवन को व्यवस्थित करना चाहा । एक दिन निराला ने तीन सौ रुपये सौंप दिए । महीना भर के खर्च का हिसाब भी निश्चित किया गया । लेकिन दूसरे ही दिन उन्होंने पचास रुपया माँगे । किसी विद्यार्थी को परीक्षा-शुल्क जमा करना था । सन्ध्या को किसी साहित्यिक मित्र को साठ रुपये दिए । अगले दिन किसी ताँगेवाले की माँ को चालीस रुपये देने पडे । किसी दिवंगत

मित्र की पुत्री के विवाह केलिए सौ रूपए दिये । और तीसरे दिन ही तीन सौ रूपए समाप्त हुए । किसी व्यक्ति को अभाव में देखकर उसे निराला खाली हाथ भेज नहीं सकते थे । जबकि वे स्वयं अभावग्रस्त थे । इतने अभावग्रस्त थे कि घर में किसी अतिथि के आने पर महादेवी के यहाँ उन्हें खिलाना पड़ता था । इसी व्यवहार ने उन्हें "असाधारण मानव" बना दिया है । एक बार निराला" को इक्कीस सौ रूपये पुरस्कार मिले । उससे उन्होंने स्वर्गीय मुंशी नवजादिक लाल की विधवा को पचास प्रतिमास के हिसाब से भेजने का प्रबंध किया । वे स्वयं भूखे थे । लेकिन उसकी परवाह किए बिना वे दूसरों की भूख मिटाने का प्रयास करते हैं । यही मनुष्यता है । इस विषय पर महादेवी का पश्न और निराला की प्रतिक्रिया देखिए -

"उक्त धन का कुछ अंश भी क्या वे अपने उपयोग में नहीं ला सकते" के उत्तर में उन्होंने उसी सरल विश्वास के साथ कहा, "वह तो संकल्पित अर्थ है । अपने लिए उसका उपयोग करना अनुचित होगा ।"[1]

निराला का स्वतंत्र व्यक्तित्व जो दाग और मैल से मुक्त है उनके इन शब्दों में व्यंजित है जिसे महादेवी अपने शब्दों से महिमा मंडित किया है ।

टाइफाइट से पीड़ित होकर सुमित्रानंदन पंत पडे थे । वे दिल्ली में थे । उस समय किसी समाचार पत्र में यह झूठी खबर आयी कि पंत का देहांत हो गया है । खबर पाकर निराला जी की हालत कैसी हो गयी, यह महादेवी जी कहती है -

---

1. महादेवी-पथ के साथी, पृ.52

"समाचार के सत्य में मुझे विश्वास नहीं था, पर निराला जी तो ऐसे अवसर पर तर्क की शक्ति ही खो बैठते हैं। वे लडखडाकर सोफे पर बैठे गए और किसी अव्यक्त वेदना की तरंग के स्पर्श से मानो पाषाण में परिवर्तित होने लगे। उनकी झुकी हुई पलकों से घुटनों पर चुनेवाली आंसु की बूंदें बीच बीच में ऐसे चमक जाती थीं मानों प्रतिमा से झडे जूही के फूल हो।"[1]

आजकल बडे-बडे नेता दूसरों के श्रम का फल खाते हैं। लेकिन गांधीजी उनसे एकदम भिन्न हैं। वे भी काम करते थे। उन्होंने हर तरह का काम किया। एक पल भी वे व्यर्थ नहीं करते थे। सामने बैठा हुआ व्यक्ति कितना भी महान हो, वे काम करने से हिचकते नहीं थे। देश विदेश के बडे - बडे व्यक्तियों से बातें करते हुए भी वे चरखा के चक्र घुमाते थे। समय बर्बाद करने के बारे में गांधीजी ने इस प्रकार चेतावनी दी है। उनकी बातें भी उनके कर्म के चक्र को रोक नहीं सकती थी।"[2]

रवीन्द्र के मानवीय व्यवहार के बारे में महादेवी की प्रतिक्रिया इस प्रकार है -

"आदि ने कवि-कथा की जो संकेत लिपि प्रस्तुत की, उसमें आसपास रहनेवाले ग्रामीणों ने अपनी स्मृति से मानवी रंग भर दिया। किसी वृद्ध ने सजल आंखों के साथ कहा कि उस महान् पडोसी के बिना उसके बीमार पुत्र की चिकित्सा असंभव थी। किसी वृद्ध ग्वालिन ने

---

1. महादेवी - पथ के साथ, पृ.5।
2. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.9

> अपनी बूढ़ी गाय पर हाथ फेरते हुए तरल स्वर में बताया कि उनकी दवा के अभाव में उसकी गाय का जीवन कठिन था । किसी अछूत शिल्पकार ने कृतज्ञता से गद्गद कंठ से स्वीकार किया कि उनकी सहायता के बिना उनकी जली हुई झोंपडी का फिर बन जाना कल्पना की बात थी ।"[1]

रवींद्रनाथ ठाकुर "नोबेल पुरस्कार" प्राप्त करनेवाले अकेले साहित्यकार हैं । फिर भी समाज की दृष्टि में क्षुद्र दीखनेवाले लोगों की सेवा वे करते हैं । जिस उत्तुंगता पर अपनी रचनाओं के कारण रवींद्र जी खडे हैं, उनका निजी व्यक्तित्व भी उसी ऊँचायी पर स्थित है । महादेवी इस उच्चता को यहाँ अभिव्यक्त करना चाहती हैं ।

इस प्रकार के क्षुद्र जीवों को प्रेमचंद साहित्य में आवाज़ मिली है । बेनीपुरी जी लिखते हैं -

> "और जब आप यह देखेंगे कि इस वर्ग के इस प्रथम कलाकार ने ही अपनी कला को कितना मोहक, आकर्षक और रंगीन बना पाया, तब तो आपको और भी ताज्जुब होगा । जिन्हें हम गूँगा-मूक समझते थे, उन्हें उसने जुबान दी, जिन्हें हम अन्धा-सूर समझते थे, उनकी आँखों को उसने नूर दिया । झोंपडियों की क्या बात, खेत की मेंड पर बनी मडैयों तक को उसने बोलना, प्यार करना, रोना, सिखलाया ।"[2]

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.11,12
2. बेनीपुरी - गेहूँ के पत्थर, पृ.24

मनुष्य की दुस्थिति की अभिव्यक्ति बर्नार्ड शॉ ने इस प्रकार दी है -

> "हरिनों को पालने केलिए तो जंगल रखाए जाते हैं, किन्तु बच्चों केलिए बगीचे भी नहीं । शायद इसीलिए कि हरिनों का शिकार किया जाता है । लेकिन कौन कहता है कि आप बच्चों का शिकार नहीं करते - हाँ उन्हें गोली से नहीं मारते और न उनपर शिकारी कुत्ते छोड़ते हैं । यही आपकी मेहरबानी है ।"[1]

अभावग्रस्तता के बावजूद आत्मदान की घटनाएं प्रसाद जी के जीवन में महादेवी ने देखी हैं । प्रसाद जी क्षय रोग से पीड़ित थे । रोग से मुक्ति केलिए भारी खर्च हो जाएगी । कभी-कभी मृत्यु भी संभव थी । "उनके सामने अकेला किशोर पुत्र था और अपने किशोर जीवन के संघर्षों की स्मृति थी । यह निष्कर्ष स्वाभाविक है कि वे अपने किशोर पुत्र के भविष्य पर किसी दुर्वह भार की काली छाया डालकर अपने इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं करना चाहते थे । तब दूसरा विकल्प यही हो सकता था कि वे पतवार फेंक कर तरी समुद्र में इस प्रकार छोड दें कि वह दिशाहीन बहती हुई जीवन - मरण के किसी भी तट पर लग सके । उन्होंने इसी को स्वीकार किया और अपने अदम्य साहस और आस्था से मृत्यु की उत्तरोत्तर निकट आनेवाली पद चाप सुनकर भी विचलित नहीं हुए ।"[2] यह आत्म-बलिदान है । इससे बढ़कर कोई दान संभव नहीं है । प्रसाद जी ने वही किया ।

---

1. बेनीपुरी -मील के पत्थर, पृ.36
2. महादेवी - पथ के साथी, पृ.67

"मथिलीशरण गुप्त में भी महादेवी ने यह गुण पाया है । कठोर अर्थ संकट से उनका जीवन गुजरा था । ऋण से मुक्ति उनकेलिए "दुर्गम घाटी" ही थी । उन दिनों की याद मात्र से उनकी आँखें भर जाती थी । उनसे मुक्त हो जाने का स्वाभिमान भी उनमें है । अर्थसंकट में भी वे साधन हीन के प्रतिविनीत" थे ।"[1]

"किसी परिचित के साधारण द्वार पर उपस्थित होकर वे अकुंठित भाव से कह सकते हैं - महाराज ! हम तो हाजिरी देने आये हैं । पर संपन्नता के संकेत-पट जैसे द्वार पर यह हाजिरी कितनी महँगी पड सकती है इसे न वे बता सकते हैं न उनके परिचित ।"[2]

महादेवी और बेनीपुरी ने जिन महान व्यक्तियों के चित्र खींचे हैं वे ज़रूर महामानव थे । मानवीयता की दृष्टि से वे श्रेष्ठ व्यक्ति हैं । इन दोनों के दृष्टिकोण में काफी अंतर हैं । महादेवी ने अपनी रचनाओं में बडी आत्मीयता दिखाई है । लेकिन बेनीपुरी ने लगता है, कि महानता का विवरण दिया है । बेनीपुरी ने बस, कुछ घटनाएँ वर्णित की हैं । उन्होंने विश्लेषण व्याख्या बहुत कम की है । लेकिन महादेवी ने प्रत्येक घटना के साथ विश्लेषण और व्याख्या भी उपस्थित की है । चित्रित व्यक्तियों के साथ महादेवी का निकट संबंध उनके चित्रों को अधिक जीवंत बनाने में सहायक रहा है । लेकिन बेनीपुरी ने जिन व्यक्तियों को चित्रित किया है उनमें से बहुत कम व्यक्तियों के साथ उनका निकट संबंध रहा है । शेष सब उनका पुस्तकीय ज्ञान है । ऐसे संदर्भ में आत्मीयता का खो जाना स्वाभाविक है ।

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.27
2. वही ।

महानता के बीच की अति साधारणता

महानता को निर्दिष्ट करनेवाला घटक महान कार्य मात्र नहीं है । महानता कभी-कभी साधारण आचरण के साधारणत्व के जरिए भी प्रकट हो सकती है । अगर वे मनुष्य सापेक्ष या आदर्श चिंतन का प्रतिफलन हो तो वे महान ही कहे जाएँगे । अक्सर महान या विशिष्ट व्यक्तियों में साधारण आचरण की निजता का एहसास मिलता है । ऐसे संदर्भ में वे एकदम निजी लग सकते हैं । पर उनमें महानता का दर्शन हम कर सकेंगे । अर्थात् महानता को निर्दिष्ट करनेवाले कई घटक हो सकते हैं । कोई भी कार्य, चाहे गौण हो या प्रमुख, मुख्य ही है ।

आचार्य विनोबा भावे भूदान यज्ञ के दौरान किसी खादि केंद्र में गए । चर्खा चलानेवाली कुछ स्त्रियों ने मिल के कपडे पहने थे । उन्होंने कहा -

> "तुम स्वयं खादी नहीं पहनती हो तो दूसरे लोग तुम्हारी खादी क्यों पहनेंगे ? अपने सौदे का आप अपमान करती हो ?"[1]

विनोभा भावे स्वयं इसका पालन ज़रूर करते थे । कथनी और करनी में सामंजस्य की आवश्यकता पर जो जोर उन्होंने दिया वह अपने आप में एक मूल्य है जिसे उन्होंने जीवन भी निभाया ।

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.77

अपनी वेश-भूषा के बारे में बर्नार्ड शॉ स्वयं कहते हैं -

"फटे जूते, छेदवाला पाजामा, समय के थपेडों के कारण काले से हरा बन गया लंबा कोट, कैंची से काटकर सर किया गया कालर, और पुराना टोप, जिसे मैं उलटकर इसलिए पहनता कि कहीं उतारने के समय वह एक से दो न हो जाय ।"[1]

अपने पहनावे के बारे में वे कभी चिंतित नहीं थे -

"लेखक को पाठक देखते नहीं, इसलिए उसकेलिए भले मानस की पोशाक की ज़रूरत नहीं । व्यापारी डॉक्टर या फाटकेबाज बनने केलिए मुझे साफ-सुथरे कपडे पहनने पडते और अपने घुटनों एवं कुहनियों से काम लेना छोड देना पडता साहित्य ही एक ऐसा पेशा है, जिसकी अपनी कोई पोशाक नहीं - इसलिए मैं ने इसी पेशे को चुना ।"[2]

यहाँ भी यह स्पष्ट है कि उनकी यह सादगी मजबूरी से उत्पन्न नहीं है । उसे उन्होंने अपने जीवन का अंग माना । इस प्रकार स्वयं स्वीकृत छोटेपन में उनका बडप्पन नज़र आया है ।

महान कवि होने के बावजूद मैथिलीशरण गुप्त सुविधा संपन्न कवि नहीं थे । असुविधाओं के बीच में रहकर भी उन्होंने महान कार्य किया है । इस संबंध में महादेवी ने लिखा है -

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.37
2. वही, पृ.37

"छोटे झरोखे और बडे आकारवाली हवेली के समीप ही अयोध्या के निकट साकेत के समान उनका नीम की टेढी -मेढी बल्लियों पर खपरैल से छाया हुआ शयन कक्ष है । उसके बाहर तुलसी चौरा और गेंदे के पौधे तथा भीतर पत्थर के चबूतरे पर कविता लिखने केलिए रखी हुई दो-तीन स्लेटें और एक छोटा डेस्क देखकर गाँव की प्राथमिक पाठशाला की भ्रांति हो जाना स्वाभाविक है । उनकी काव्य-साधना केलिए वह कच्चाघर उपयुक्त हो, पर स्लेट पेन्सिल देखकर भ्रम होता है कि वे असमय स्कूल छोडने का स्मरण कर रहे हैं ।"[1]

मैथिली शरण गुप्त अर्थहीन के प्रति विनीत थे और अर्थदंभी के प्रति असहिष्णु । महादेवी का कथन है -

"वे नम्र हैं, पर यह विनय उनकी वैष्णवता का ऐसा पानी है जो बडे-बडे जहाज़ों को संभाल सकता है, किंतु छोटे - से पत्थर का भी भार सहन नहीं कर सकता । इस प्रशांत सतहवाले सागर के तल में किसी अव्यक्त ज्वालामुखी की चोटियाँ भी हैं जो ठेस से विस्फोट बन सकती है।"[2]

यहाँ दो बातें बताई गयी हैं । गुप्त जी अत्यंत विनीत थे, विनम्र भी । यह विनम्रता, अर्थहीनों और साधनहीनों तक ही सीमित है । "अर्थदंभी" के सामने गुप्त जी की "नम्रता के तल में

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.3।
2. वही, पृ.27

छिपे ज्वालामुखी में विस्फोट" होने की संभावना है । व्यक्ति की आर्थिक स्थिति उसकी उच्चता का मापदंड नहीं है । गुप्त जी का यह विचार उनका जीवन-दर्शन है । अपने उपयोग की सभी वस्तुओं में गांधीजी की सादगी का स्पर्श मिलता है । रद्दी कागज़ डालने केलिए पत्तों का एक टोकरा, पीने का पानी रखने केलिए एक बोतल, एक थूक दान, एक कलमदान, एक स्टैंड पर एक पेंसिल, एक "यरवादा - चक्र, पूनी, तांत, और तीन खानों एक छोटा-सा सेल्फ - यही गांधीजी की सुविधाएँ थीं । कुछ और चीज़ें भी थीं · कुछ पत्थर के टुकडे ही गांधीजी ने पेपर - वेट के रूप में उपयोग किया । लिखने केलिए छोटा सा डेस्क था । विशिष्ट अतिथियों को बैठने केलिए तकिया भी थीं । वही दुनिया भर के नेताओं का सिंहासन रहा ।"[1]

महात्मा गांधी अपने थूकदान की सफाई आप करते थे ।[2] आश्रम की सफाई में उनका बडा ध्यान रहता था । अपने आप करने से भी वे चूकते नहीं थे ।

निराला की एक और विशिष्टता, जो उनके आतिथ्य सत्कार से संबंधित है, के बारे में महादेवी कहती है -

> "भोजन बनाने से लेकर जूठे बर्तन माँजने तक का काम वे अपने अतिथि देवता केलिए सहर्ष करते हैं ।"[2]

1· बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ·9

2· महादेवी - पथ के साथी, पृ·5।

"मील के पत्थर" में बेनीपुरी आचार्य नरेंद्र देव के व्यक्तित्व के तीन रूप प्रस्तुत करते हैं -

> "ज्ञानी कर्मयोगी, साधक इन तीनों आचार्य नरेन्द्र देव के अतिरिक्त एक और आचार्य नरेन्द्र देव के अतिरिक्त एक और आचार्य नरेन्द्रदेव थे, वह थे मानव नरेन्द्र देव । और यह मानव नरेन्द्रदेव इन तीन आचार्य नरेन्द्र देव से ऊपर थे, यह कहने की धृष्टता मैं इसलिए करता हूँ कि उनके निकट सम्पर्क में आनेवाले मेरे - जैसे छोटे व्यक्तियों को उसी नरेन्द्र देव ने सबसे अधिक प्रभावित किया था । उनका दरबार सबके लिए खुला था । ..... सबकी अपनी-अपनी समस्या, सबकी अपनी-अपनी बात । और सबके लिए एक-सा सरल, सादा, निष्कपट, निश्छल निबटारा ।"[1]

नरेन्द्र देव ने सभी प्रकार के व्यक्तियों से समान व्यवहार किया । आचरण की यह स्वच्छ वृत्ति उन्हें शिखर स्थिति प्रदान करती है ।

महान व्यक्ति कभी आदर, सम्मान या श्रद्धा पाने के उद्देश्य से कोई कार्य करता नहीं है । आचार्य नरेन्द्र देव को बेनीपुरी इसी प्रकार के व्यक्ति मानते हैं । वे समाजवादी थे । कोई पद स्वीकार न करना समाजवादियों का नियम था । मुख्यमंत्री का ऊँचा पद हाथ आने पर भी उन्होंने नियम का उल्लंघन नहीं किया ।

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.66

समाजवादी दल छोड़कर भी वे उस पद को ग्रहण कर सकते थे। लेकिन पद-लालसा उन्हें प्रलोभित नहीं किया।

> "बड़े-से-बड़े आदमी की सबसे बड़ी कमज़ोर होती है कीर्ति लालसा। कीर्ति केलिए, यश केलिए, प्रसिद्धि केलिए वे लोग भी चूक जाते हैं, जो संसार के सारे ऐश्वर्यों को ठुकराने से नहीं झिझकते। कीर्ति-लालसा पर अंकुश रखना संसार की सबसे बड़ी साधना है। इस साधना है। इस साधना की कसौटी पर भी आचार्यजी को कई बार कसा गया और सदा खरे निकले।"[1]

महादेवी ने प्रसाद की सादगी की तरफ संकेत करते हुए उनकी महानता का परिचय दिया है।

> "उनकी बैठक में ऐसा कुछ भी नहीं दिखाई दिया जिसे सजावट के अंतर्गत रखा जा सके। कमरे में एक साधारण तख्त और दो-तीन सादी कुर्सियाँ, दीवाल पर दो-तीन चित्र, अलमारी में कुछ पुस्तकें। यदि इतने महान कवि के रहने के स्थान में मैं ने कुछ असाधारण पाने की कल्पना की होगी तो मेरे हाथ निराशा ही आ गयी।"[2]

महादेवी ने स्पष्ट कर दिया है कि मनुष्य का महत्व उसके कर्म में निहित है, न कि जीवन की सुविधाओं में जेल की

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.65
2. महादेवी - पथ के साथी, पृ.64

कोठरी में पडे रहकर भी राजेन्द्र बाबू कर्मरत थे । जेल जीवन ने उन्हें कुंठित नहीं किया बल्कि उनके व्यक्तित्व को विकसित किया है ।

> "जेल में नियमित रूप से चरखा कातना, पढना-लिखना आदि के साथ उनका एक काम यह भी होता कि अपने सहकर्मियों और अनुयायियों के बैरकों में जाते, उनसे मिलते, उनसे हालचाल पूछते और जिन्हें ज़रूरत होती, उनकी सहायता का प्रबन्ध इस तरह करा देते कि वह जान भी न पाता कि कहाँ से क्या हो रहा है ।"[1]

इस चित्र में उनकी कर्मठता का सही परिचय मिलता है ।

कर्मठता के विपरीत अपने देश के लिए भावुक होनेवाले एक साहित्यकार को भी बेनीपुरी ने प्रस्तुत किया है ।

> "फ्रांस का पतन हुआ । जब इस पतन का समाचार मावरोई को मिला, वह कमरे के भीतर चला गया, बिछावन पर बेतहाशा गिर गया और बच्चों की तरह फफक-फफक कर रोने लगा ।"[2]

यहाँ मावरोई के महान देश-प्रेमी होने का प्रमाण मिलता है । देश के पतन होने पर भी कोई सामान्य व्यक्ति का उस पर रोना सहज नहीं है । लेकिन देश को अपना माननेवाले मावरोई से पड्ते हैं । बेनीपुरी, मावरोई के इस संदर्भ को चित्रित

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.49
2. वही, पृ.72

करने, उनमें निहित सामान्य व्यक्ति को परिचित कराते हैं ।

इस प्रकरण के अंतर्गत जो व्यक्ति अंकित एवं अन्वेषित हुए हैं उनके व्यक्तित्व की तीन प्रवृत्तियाँ मुख हैं - एक उनकी अज्ञाता, दूसरी उनकी सादगी, और, तीसरी है किसी भी हालत में अपनी विशिष्टता खो न बैठना । इन कारणों से ये महान बन गए हैं । बेनीपुरी ने वॉन गोग के जीवन का एक मार्मिक प्रसंग यों चित्रित किया है -

"...वॉन गोग कई दिनों से भूखा रहा है । वह भूख से व्याकुल बिछौने पर लेटा है । ऐसा वह प्राय: किया करता । किंतु, फिर सोचा, एक सज्जन से वह कुछ पैसे उधार क्यों न माँग ले । जहाँ दूसरे लोग उसकी चित्रकला पर नाक-भौं सिकोड़ते, उस सज्जन ने एकाध बार तारीफ कर दी थी । जब उनके यहाँ पहुँचकर उसने अपना अभिप्राय कहा तो वह चित्रकार सज्जन बोल उठे -

"नहीं बच्चे, नहीं, तुम गलत आदमी के पास आये - संसार में सबसे गलत आदमी के पास । मैं तुम्हें एक छदाम भी नहीं दे सकता ।"[1]

वॉन गोग की कला की भूख पेट की भूख से बढ़कर थी । इसलिए वे पेट की भूख की परवाह किए बिना चित्र पर चित्र रचते गये । भूख ने उनकी रचनात्मक विकास में बाधा नहीं डाली है । भोजन जो मनुष्य की मौलिक ज़रूरत है, उसके अभाव में भी वे रचनारत ही रहे ।

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.129

कला की भूख ही कालाकार की वास्तविक भूख होती है । इस वास्तविक भूख को मिटाने केलिए किसी प्रकार की परिस्थितियों का सामना वह करता है । यह संघर्ष ही उसे महान कलाकारों का पद प्रदान करता है । माईकेल ऐंगेलो ने अपनी शिखर कला का जो नमूना प्रस्तुत किया है उसके पलछे उनकी कलात्मक आसक्ति की ऐसी अनियंत्रित शक्ति छिपी हुई है जिसकी पूर्ति ही उनका जीवन - लक्ष्य रहा हो । यह भी एक प्रकार का आत्म संघर्ष है । इस महान चित्रकार के आत्म संघर्ष और कला की आदिम इच्छा का एक चित्र बेनीपुरी ने इन शब्दों में प्रस्तुत किया है -

> "सिस्टाइन के प्रार्थनागृह की छत में उसने जो तस्वीरें बनाई, वे मालूम होती है, देवताओं की बनाई हुई हैं । सृष्टि की पूरी कथा वहाँ अंकित है । आदम की आकृति तो देखते ही बनती है - मनुष्य के प्रथम पूर्वज ऐसे ही हो सकते हैं, सहस मँह से निकल पड़ता है । वर्षों तक अधर पर लटकते हुए ढठ्ठर पर अपने को चित्त लिटाकर, उसने छत पर ये तस्वीरें बनाई - तीन सौ तैंतालीस तस्वीरें, जिनमें अधिकांश दस फुट से अठारह फुट तक की हैं ।"[1]

सामान्य रूप से जो असंभव माना जाता है उसे मईकेल ऐंजेलो ने संभव बना दिया । यहाँ उनके संकल्प की दृढता द्रष्टव्य है ।

लियोनार्दो द विंची के चित्रों की प्रशंसा आज खूब हो रही है । लेकिन जीवित रहते समय अवैध संतान होने का भार और उसका तनाव वे निरन्तर झेलते रहे । इसलिए जीवन को जी लेने की सामान्य प्रक्रिया के बीच में भी उन्हें मृत्यु का आभास

---

1. बेनीपुरी - मीन के पत्थर, पृ.49

मिलता रहा । यह एक कलाकार की आहत् चेतना का अनुभव है । भले ही उस तनाव ने उनकी कलात्मकता को मदद पहुँचाई हो फिर भी यह तनाव उस कलाकार के व्यक्ति पक्ष पर पडा हुआ ऐसा एक आघात है जिसके कारण उन्होंने अंतिम दिनों में अपनी डायरी में लिखा -

"जहाँ मैं सोचता था कि जीना सीख रहा हूँ, वहाँ देखता हूँ, मैं मरना सीख रहा था ।"[1]

रेम्ब्रांड को प्रतिकूल अवस्था में भी अपराजेय निकलनेवाले व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया है -

"रेम्ब्रांड - वह कलाकार, जिसे प्रकृति और समाज ने समान रूप से सताया, चूर-चूर किया, किंतु जिसने पराजय नहीं स्वीकार की ।"[2]

वे मौलिकता के आग्रही कलाकार थे -

"सब लोग शरीर का चित्रण करते, वह आत्मा को चेहरे पर प्रतिबिंबित करने की चेष्टा करता । खरीददार कम होते गए, वह और भी धुन से अपने नए प्रयोग में लग । कर्ज ! फिर कुर्की ! एक चमार ने नीलाम में उसकी सारी जायदाद खरीद ली !

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.49
2. वही, पृ.54

तो भी उसने हार न मानी । एक छोटे से मकान में, बचे-खुचे सामान को लेकर उसने अपनी दुनिया बसाई । खाने को एकाध टुकडा मिल गया, वही बस । दरिद्रता उसके मन में कोई कटुता नहीं ला सकी । उसने जो चित्र बनाए, वे चित्रकला के अनुपम श्रृंगार समझे जाते हैं । अभाव में, कष्ट में, संकट में, संघर्ष में जो चीज़ें वह संसार को दे गया, उनके कारण अंततोगत्वा संसार को उसकी महत्ता स्वीकार करनी पडी .... ।"[1]

रेम्ब्रांड एक प्रयोगकर्मी कलाकार थे । इसलिए वे मौलिकता के नए आयाम खोजते रहे । लेकिन पारंपरिक कलास्वादक इन नए प्रयोगों को अस्वीकारते रहे क्योंकि उन्होंने पुरानी रूढियों को तोडा था । परवर्ती युग में जब कला का पुनर्मूल्यांकन होने लगा तभी रेम्ब्रांड की कला को वांछित मान्यता मिली ।

"मील के पत्थर" और "पथ के साथी" में साहित्यिक व्यक्तियों कलाकारों एवं जनसेवा के क्षेत्र के विशिष्ट व्यक्तियों के जितने चित्र हमें मिलते हैं उनमें महादेवी वर्मा और बेनीपुरी ने व्यक्ति पक्ष को संस्थित करने का कार्य किया है । उनके व्यक्ति पक्ष में निहित मूल्यवादी दृष्टि और उनके जीवन की अनेकानेक सहज स्थितियाँ इन चित्रों की रंगमयता को गाढा कर देने में सहायक हैं । इस कारण से ये व्यक्ति अपनी विशिष्टताओं के साथ हमारे निकट आते महसूस होते हैं । व्यक्ति केंद्रीकरण की प्रवृत्ति ने इन रेखाचित्रों को आत्मलीनता की भंगिमा नहीं प्रदान की है ।

---

1. बेनीपुरी = मील के पत्थर, पृ.54

महादेवी वर्मा ने हिन्दी साहित्यकारों के चित्र प्रस्तुत किए हैं - एकमात्र अपवाद कवीद्र रवीद्र का चित्र है । महादेवी के चित्रों में संबंध की आत्मीयता भरी हुई है । बेनीपुरी में यह अंश कम है । लेकिन जिन पक्षों के आधार पर उन्होंने देशी तथा विदेशी कलाकारों के चित्रों पर रंग चढाया है उनमें मनुष्य सहज स्थितियों का सन्निवेश ही अधिक उभर आया है । इस अर्थ में महादेवी और बेनीपुरी समान लगते हैं । दोनों ने मूल्यों या आदर्श की बात नहीं की है, अपने विवेच्य व्यक्तियों को मूल्यवादी ठहराया । साहित्यिक और कलाकार व्यक्तियों पर केंद्रित होते हुए हम रेखाचित्रकारों के व्यक्ति की महिमा को समष्टि सत्ता के संदर्भ में परखने का कार्य किया है । अत: रेखाचित्र का व्यक्ति-केंद्रीकरण व्यष्टि और समष्टि का द्योतक ही है ।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

अध्याय - छह

मनुष्येतर प्राणियों तथा प्रतीकात्मक संदर्भों पर केंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

अध्याय - छह

मनुष्येतर प्राणियों तथा प्रतीकात्मक संदर्भों पर केंद्रित रेखाचित्रों का अध्ययन

रेखाचित्र विधा को उत्कर्ष की ओर ले चलने की अपनी रचना-यात्रा का एक महत्वपूर्ण मोड पार करके महादेवी वर्मा और बेनीपुरी ने कुछ विशेष प्रकार के रेखाचित्र प्रस्तुत किए हैं। महादेवी वर्मा ने जन्तु जगत को विषय बनाया। उनके 'मेरा परिवार' शीर्षक संकलन में पशु-पक्षियों के स्मृतिचित्र मिलते हैं। ये उनके पालतू पशु पक्षी थे। उनके साथ महादेवी का आत्मीय संबंध था। इसलिए उन्हें अपने परिवार के सदस्यों के रूप में ही महादेवी ने प्रस्तुत किया है।

बेनीपुरी ने महादेवी वर्मा की तुलना में, एकदम भिन्न ढंग के कुछ रेखाचित्र अपने "गेहूँ और गुलाब" शीर्षक संकलन में प्रस्तुत किये हैं। वस्तुत: बेनीपुरी का विषय सामाजिक विडंबना का रहा है। लेकिन उन्होंने इस विडंबनात्मक स्थिति को जीवित व्यक्तियों के संदर्भ में प्रस्तुत नहीं किया। प्रतीकों का सहारा लेकर सामाजिक जीवन की विडंबनात्मक स्थितियों के

चित्र उकेरे हैं । "गेहूं और गुलाब" को प्रतीकवत् किया जैसे निराला की कविता "कुकुरमुत्ता" में ।

मेरा परिवार

"मेरा परिवार" में सम्मिलित सभी चित्र महादेवी के पालतू पशु-पक्षियों पर केंद्रित हैं । बचपन से लेकर उन्होंने अनेक पशु-पक्षी पाले । सभी को इसमें चित्रित नहीं किया है । नीलकंठ मोर, गिल्लू गिलहरी, सोना हरिणी, दुर्मुख खरगोश, गौरा गाय, नीलू कुत्ता, निक्की नेवला, रोज़ी कुत्तिया, और रानी घोडी के चित्र ही "मेरा परिवार" में सम्मिलित हैं । उनके साथ महादेवी का निकट संबंध था । इसलिए उन जानवरों के प्रति उनकी गहरी आत्मीयता है । "पशु-पक्षियों के साथ प्रतिदिन के साधारण क्रीडा कौतुम की ज़मीन पर कवयित्री ने अपने जादुई शिल्प के जो नमूने पाठकों के आगे उपस्थित किए हैं, उनमें स्थूल पार्थिव जीवन को सूक्ष्म आध्यात्मिक संवेदना के स्तर तक उभारकर रख दिया गया है ।"[1] महादेवी की आत्मीयता, उज्ज्वल भावातिरेक, कलात्मक सूक्ष्मता और चित्रात्मक अभिव्यक्ति ने "मेरा परिवार" को बेजोड बना दिया है ।

यह सही है कि महादेवी ने निजी घर नहीं बसाया । लेकिन उनके परिवार की कोई सीमा नहीं है । वे विश्वमानव हैं । इसलिए मनुष्य ही नहीं सभी जीव-जन्तु और वृक्ष-लतायें उनके परिवार के सदस्य हैं । मनुष्य में उच्चता-नीचता का जो भाव है

---

1. महादेवी - मेरा परिवार (उच्छ्वास - इलाचन्द जोशी)
1984, (छात्र संस्करण)

वह महादेवी में नहीं है । इसलिए उन्होंने निम्न वर्ग के व्यक्तियों के चित्र खींचे । लेकिन "मेरा परिवार" में आकर उनकी महानता व्यापक होती है । क्योंकि पशु-पक्षियों तक के प्रति वे अपनी संवेदना तथा गहरी सहानुभूति प्रकट करती हैं । महादेवी के सीमा रहित परिवार के बारे में इलाचंद जोशी लिखते हैं - "महा कवयित्री महादेवी वर्मा ने अत्यंत विनयवश ही अपनी कृति को "मेरा परिवार" नाम दिया है । वास्तविकता यह है कि इस महाप्राणशीला का परिवार बहुत विशाल है - कल्पनातीत रूप से विशाल ।"[1]

महादेवी की दृष्टि "अति संवेदनशील रडार" की तरह है ।[2] वे अपने पालतू प्राणियों को पूर्णत: ध्यान देती हैं । इसी प्रकार उनके चरित्र के विश्लेषण में भी वे जिज्ञासु हैं । इसीलिए उन्होंने उनमें मानवीय गुण देखती हैं । उनकी सौम्यता, आक्रामकता, चंचलता आदि को महादेवी ने बडी सूक्ष्मता से चित्रित किया है ।

सौम्यदृष्टि

मनुष्य का मनुष्य के प्रति सौम्यता स्वाभाविक है । लेकिन सामान्यत: किसी दूसरे जीव के प्रति वह ऐसा आचरण नहीं करता । लेकिन महादेवी ने सोना हरिणी में ऐसी सौम्यता

---

1. महादेवी - मेरा परिवार {उच्छ्वास - इलाचन्द जोशी}
2. वही । {उछ्वास}

देखी, जिसका मनुष्य में भी अभाव है । विद्यालय और छात्रावास की विद्यार्थिनियों के साथ वह खेलती थी । महादेवी के सभी पालतू जीवों के साथ उसने सख्य स्थापित किया था । महादेवी लिखती है - "मेरी बिल्ली गोधूली, कुत्ते हेमंत-वसंत, कुत्ती फ्लोरा सब इस नये अतिथि को देखकर रुष्ट हुए, परंतु सोना ने थोडे ही दिनों में सब से सख्य स्थापित कर लिया । फिर तो वह घास पर लेट जाती और कुत्ते-बिल्ली उस पर उछलते-कूदते रहते । कोई उसके कान खींचता, कोई पैर और जब वे इस खेल में तन्मय हो जाते, तब वह अचानक चौकडी भरकर भागती और वे गिरते-पडते उसके पीछे दौड लगाते ।"[1] यह भी देखिए -

> "एक दिन देखा, फ्लोरा कहीं बाहर घूमने गई है और सोना भक्तिन की कोठरी में निश्चिन्त लेटी है । पिल्ले आँख बन्द रहने के कारण चीं-चीं करते हुए सोना के उदर में दूध खोज रहे थे । तब से सोना के नित्य के कार्यक्रम में पिल्लों के बीच में लेट जाना भी सम्मिलित हो गया । आश्चर्य की बात यह थी कि फ्लोरा हेमंत, वसंत या गोधूली को तो अपने बच्चों के पास फटकते भी नहीं देती थी, परंतु सोना के संरक्षण में उन्हें छोडकर आश्वस्त भाव से इधर-उधर घूमने चली जाती थी ।"[2]

सोना जब महादेवी के घर में आयी तब जो जानवर उससे क्रुद्ध थे वे धीरे-धीरे उसके दोस्त हो गए । यहाँ सोना के चरित्र की विशिष्टता हम देख सकते हैं । कुछ समय बाद सोना

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.52
2. वही, पृ.53

उन जानवरों के बीच इतना उँचा स्थान प्राप्त कर सकी जो अन्य जानवरों के बीच इतना उँचा स्थान प्राप्त कर सकी जो अन्य जानवरों को अप्राप्य था । इसी कारण फ्लोरा अपने बच्चों को सोना के साथ छोड़कर निश्चिंत चलती-फिरती है जबकि अन्य जानवरों को वह अपने बच्चों के समीप आने नहीं देती ।

विषम परिस्थितियों में किसी का सौम्य रहना महानता का लक्षण है । इस प्रकार की विशेषता महादेवी ने नीलू कुत्ते में देखी है । नीलू का बाप भटिया कुत्ता था । उसकी माँ अल्सेशियन थी । "हिंसक और क्रोधी भटिये बाप और अत्यंत प्रिय अल्सेशियन माँ से जन्म पाकर भी उसमें हिंसा की प्रवृत्ति का कोई चिह्न नहीं था ।"[1] वह किसी भी पशु पक्षी को झपटता या मारता नहीं था । महादेवी ने अनुभव किया है कि नीलू कुत्ते में सामान्य स्वान-गुणों का अभाव है -

> "अन्य कुत्तों के समान खाने केलिए लालायित रहना, प्रसन्नता व्यक्त करने केलिए पूँछ हिलाना, कृतज्ञता ज्ञापित करने केलिए चाटना, याचक के दीन भाव से स्वामी के पीछे-पीछे घूमना, अकारण भौकना, काटना आदि प्रकृतिदत्त स्वान-गुणों का उसमें सर्वथा अभाव था ।"[2]

यह सामान्य बात नहीं है । नीलू कुत्ता बडा समझदार और स्वाभिमानी था ।

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.83
2. वही, पृ.82

सद्भावना नीलू कुत्ते के व्यवहार में देखी जा सकती है । उसकी बीमारी की बात ऊपर संकेतित है । दूसरों की रक्षा करने से ही उसे न्यूमोणिया आ गयीथी । बिल खोदते खोदते खरगोश दूसरे कम्पाउण्ड में पहुँच गये । वहाँ एक जंगली बिल्ला था जो बिल से बाहर आते ही एक एक खरगोश को क्षत विक्षत कर देता था । जो बिल के अंदर थे वे आगे जानेवालों की यह दुर्गति जान नहीं पाते थे । नीलू किसी प्रकार वहाँ पहुँच गया । बिल्ला भाग गया । शीत की कुहराच्छन्न रात में वह कुत्ता उन खरगोशों को बचाने केलिए बिल के द्वार पर रात भर पहरा करता रहा । इस प्रकार वह न्यूमोणिया का शिकार बन गया ।

नीलू से संबद्ध एक दूसरी घटना से भी उसकी इस अचंचल सौम्य प्रकृति का परिचय मिलता है । वह न्यूमोणिया से पीड़ित होता है । बचाने केलिए इंजेक्शन और दवा देनी पड़ती है । वह बड़ी सौम्यता से सब सह लेता है । मनुष्य जानता है कि दवा किसलिए खायी जाती है । फिर भी वह दवा लेना पसंद नहीं करता । इंजेक्शन से भी उसे डर है । सामान्य कुत्ते तो सुई के डर से भाग जाता है, लेकिन नीलू दवा का कटु आपन और सुई का दर्द आदि बड़ी सौम्यता से सह लेता है ।

नीलू की सौम्यता और अहिंसा के भाव को स्वयं महादेवी ने अनुभव किया है । महादेवी के कमरे में रोशनदान पर गौरय्या घोंसला बनाती थी । उनके छोटे छोटे बच्चे पंखों का अंकुर निकलते ही उड़ने के प्रयास करते थे । फलतः वे नीचे गिर जाते थे । कोई दूसरा कुत्ता होता तो उन्हें खा लिया होता ।

क्योंकि हिंसा कुत्तों की सहज प्रवृत्ति है । लेकिन ऐसे अवसरों पर नीलू उन पक्षिशावकों का पहरेदार बन जाता था । कभी-कभी उस ने ऐसा भी किया है कि उन्हें उनके घोंसले में रखने केलिए महादेवी तक उन्हें पहुँचा देता और घोंसले में रखने के समय तक वहीं खडा रहता था ।[1] इस प्रकार की दृष्टि शायद अन्य कुत्तों में उपलब्ध नहीं । मनुष्य सहज विशिष्टता जो सभी में उपलब्ध नहीं नीलू के व्यक्तित्व का अहम पक्ष रहा है ।

साधारण कुत्ते किसी अपरिचितों को घर के आंगन में देखकर भौंकने लगते हैं । लेकिन नीलू कुत्ता बडा समझदार और सौम्य है । किसी परिचित के आने पर वह महादेवी के कमरे के सामने जाकर खडा रहता था । और "मैं आ रही हूं" सुनने पर ही वापस आ जाता । वह कभी न काटता था न भौंकता । अपरिचित व्यक्ति के घर आने पर शांत भाव से ध्यान से वह उसे देखता रहता था । मुंह से कोई आवाज़ नहीं आया करती थी ।

लोग कुत्तों से कई प्रकार लाभ उठाते हैं । शिकार पर ले जाना, घर और घरवालों का पहरा करना आदि सहजता से कुत्ते करते ही हैं । कहीं-कहीं कुत्ते गाडी खींचते हैं । कुछ लोग उसे भोजन बना लेते हैं । कुछ लोग उसे अपने अहंकार का आभूषण बना लेते हैं । नीलू की मां लूसी कुत्ती को लोग सामान खरीदने भेजते थे । बर्फ से ढके पगडंडी से होकर उसे जाना पडता है । सफर कठोर होने पर भी वह बिना किसी हिचक से जाती और सामान खरीद लाती है । लेकिन मनुष्य बडा स्वार्थी होता है ।

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.84

वह दूसरों की कठिनाइयों पर ध्यान नहीं देता । इसलिए लूसी को दिन में कई बार दुकान जाना पड़ता है -

"कभी चीनी मँगवाई और चाय रह गई ।
कभी आटा याद रहा और आलू भूल गए ।
पर लूसी को मँगवानेवाले के भुलक्कड़पन से कोई शिकायत कभी नहीं रही । गले में कपड़ा बाँधते ही वह तीर की तरह दुकान की दिशा में चल देती । उसकी तत्परता के कारण मँगानेवालों में भूलने की प्रवृत्ति बढ़ती ही थी ।"[1]

महादेवी के पालतू जीवों के बीच नीलकंठ मोर सेनापति जैसा था -

"सबेरे ही वह सब खरगोश, कबूतर आदि की सेना एकत्र कर उस ओर ले जाता, जहाँ दाना दिया जाता है और घूम-घूमकर मनो सबकी रखवाली करता रहता ।"[2]

वह कभी कभी खरगोश के बच्चों के कान चोंच से पकड़कर उठा लेता और उनके कानों में छेद हो जाता था । लेकिन उसने कभी क्रोधित होने का अवसर नहीं दिया ।

"उसके दंड विधान के समान ही उन जीव-जन्तुओं के प्रति उसका प्रेम भी असाधारण था । प्राय: वह मिट्टी में

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.80
2. वही, पृ.28

पंख फैलाकर बैठ जाता और वे सब उसकी लंबी पूँछ और सघन पंखों में छुआ-छुऔअल-सा खेलते रहते थे।"

एक दिन एक खरगोश बच्चे को साँप ने पकडा। साँप को मारकर नीलकंठ ने उसे बचाया। कहा जाता है कि मनुष्येतर प्राणी अपनी सहज चेतना से संपन्न है। नीलकंठ को देखकर इस कथन की सच्चाई पर संदेह उठता है। यदि सहज चेतना पर नीलकंठ चलता तो खतरनाक अवसर को भी सहज चेतना से ही उसने समझ लिया होगा। तो उसका भाग जाना स्वाभाविक था। लेकिन खरगोश को बचाने केलिए वह अपनी जान खतरे में डालता है। यह भी नहीं, वह मज़बूरी से खतरे में नहीं पडा, बल्कि दूसरे की रक्षा केलिए। महादेवी उसके इस कार्य में उसकी महानता देखती है। किसी बाप दादा के समान वह मोर अपने परिवार वालों से प्रेम भी करता था और किसी को गलती करते देख उसे दंड भी देता था। उसकी सौम्यता ममता पूर्वक थी। मात्र आचरण में सौम्यता दिखाना आसान है। लेकिन नीलकंठ की सौम्यता उनकी सद्भावनाजन्य है।

शत्रु का आक्रमण होने पर सुरक्षा केलिए मनुष्य आक्रामक हो जाता है। पशु-पक्षियों का भी शत्रु से बचने का अपना मार्ग होता है। कुछ तो भाग जाते हैं, तो कुछ प्रतिरोध करते या छिप जाते हैं। लेकिन दूसरों को बचाने का भार अपने ऊपर उठाना किसी भलमानस का ही कार्य है। पशु-पक्षियों में इसका अभाव है। लेकिन यह भलमानसहात नीलकंठ में महादेवी ने देखी है। जब खरगोश शावक साँप की पकड में आ गया, वह ऊपर झूले में सो रहा था। खरगोश की आवाज़ में उसने दर्द पहचान लिया। तुरंत आकर उसने खरगोश को बचा लिया। साँप को नीलकंठ ने दो खंड कर दिया।

गाय का शरीर अन्य छोटे पशुओं की अपेक्षा काफी बडा हैं । इसलिए उन छोटे जीवों का गौरा गाय से सख्य स्थापित करना कठिन था । लेकिन -

> "कुछ ही दिनों में वह सबसे इतनी हिलमिल गई कि अन्य पशु-पक्षी अपनी लघुता और उसकी विशालता का अंतर भूल गए । कुत्ते बिल्ली उसके पेट के नीचे और पैरों के बीच में खेलने लगे । पक्षि - उसकी पीठ और माथे पर बैठकर उसके कान तथा आँखें खुजलाने लगे । वह भी स्थिर खडी रहकर और आँखें मूंदकर मानों उनके संपर्क सुख की अनुभूति में खो जाती थी ।"[1] गाय स्वभाव से ही सौम्य है । फिर भी गौरा गाय में विशेषता है । सामान्यत: गाय किसी दूसरे पशुओं से खेलते या उनसे सख्य स्थापित करती नहीं । लेकिन महादेवी ने गौरा में यह भी देखा है । वह दूसरे पशुओं को अपने पैरों के बीच खेलने देती है । उसकी सौम्यता मनुष्य के साथ के आचरण में अधिक है । महादेवी कहती हैं कि उसका हमसे साहचर्य जनित लगाव, मानवीय स्नेह के समान ही निकटता चाहता था ।[2]

उसके निकट जाने पर सहलाने केलिए वह गर्दन बढाती । उस पर हाथ फेरने पर वह आश्वस्त भाव से आँखें मूंद लेती थी । इस से प्रतीत होता है कि गौरा स्वयं सौम्य है और चाहती है कि दूसरे भी उससे सौम्य व्यवहार करें ।

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.7।
2. वही, पृ.7।

जानवरों की सौम्य दृष्टि पर महादेवी ने विस्तार से लिखा है । हर एक की सौम्यता को प्रशंसा की दृष्टि से वे देखती भी है । उनकी सहज दृष्टि के विपरीत के स्वभाव के कारण नहीं बल्कि परिवेश ने उन्हें सौम्य बनाया है जिसे और विकसित किया जा सकता है । जन्तुत्व के स्थान पर जानवरों में मनुष्य का अंश देखकर वे हर्ष का अनुभव करती क्योंकि मनुष्य में यह सहजवृत्ति आज अनुपलब्ध होती जा रही है ।

आक्रामक दृष्टि

मनुष्यों में कई ऐसे होते हैं जो स्वभावत: झगडालू और क्रोधी हैं । उनके स्वभाव में निराशावाद का इतना प्रभाव होता है कि वे किसी स्तर में भी कोई अच्छाई नहीं देख सकते । मनुष्य की चारित्रिक विशेषताओं का उनके गुजरे परिवेशों से अभाज्य संबंध होता है । माँ-बाप का प्यार न मिलना, बचपन में अत्याचार सहना, सही समय पर पालन-पोषण की कमी आदि इसके कारण हो सकते हैं । बचपन में कोई अच्छा कार्य करने पर भी दूसरों से या बडों से खरी-खोटी सुनने से व्यक्ति में यह विचार उत्पन्न हो जाता है कि किसी-न-किसी प्रकार मुझे दुसरों के सामने कुछ-न-कुछ बन जाना चाहिए । वह जानता हैकि भले कार्य करने पर भी खरी-खोटी सुननी पडेगी । इसलिए वह दूसरों से झगडा करके भी उनका ध्यान आकर्षित करता है । दूसरों का ध्यान आकृष्ट करने केलिए वह क्या कुछ नहीं करेगा, यह कहा नहीं जा सकता । क्योंकि दूसरों के प्रति क्रूरता दिखाने या उन्हें दोष पहुँचाने पर ही वे उसकी ओर ध्यान देते हैं । किसी भी

कुकर्मी के बारे में भी यह सच होता है कि वह किसी दुखी, दर्दनाक परिवेश से गुज़र कर आया है । दुर्मुख खरगोश के चित्र में महादेवी मानती है कि "दुर्मुख" के "जीवन के आरंभ में ही उस पर दुर्योग से मार्जारी की निष्ठुर छाया" नहीं आ पडती तो वह भी अन्य शावक शावकों के समान ही खेलता-खाता और माँ की स्नेह छाया में बडा होता । महादेवी ने "दुर्मुख" के जीवन से जुडी हुई कुछ घटनाएं यहाँ प्रस्तुत की है । अत: वे हमें उसका मनोविश्लेषण करने केलिए बाध्य कर देती हैं ।

महादेवी के पडोस के किसी घर में खरगोश पाले जाते थे । खरगोश दम्पति और बच्चे आँगन में बिल खोद कर रहते थे । सन्ध्या होते ही घरवाली बिल का द्वार बंद कर दिया करती थी । एक दिन वह भूल गयी । एक मार्जारी उसमें घुस गयी । एक शावक को छोड सभी को उसने क्षत-विक्षत का दिया । दुर्मुख ही बच निकला । जीवन के पहले परिछेद में ऐसा कटु अनुभव का सामना करना पडने से जीवन भर उसका बोझ ढोना पडा । शायद यह विवचार उसमें रूढ हो गया कि सभी का आचरण ऐसा ही होगा । इसलिए वह दुसरों के आक्रमण के पूर्व ही स्वयं आक्रमण करता है । इसमें वह कोमलता-कठोरता पहचानता नहीं था । जिस मार्जारी ने उसके माँ-बाप को छीन लिया था उसी की शक्ल वह सभी में देखता था । इसलिए बढते-बढते वह वयोधी स्वभाव का हो गया ।

खरगोशों का शांत और कोमल स्वभाव होता है । लेकिन दुर्मुख तो बडा विचित्र था अपने सजातीय के समान सौम्यता उसमें नहीं था । उसके बाह्य रूप में भी यह विशेषता दिखाई देती थी । उसका एक कान काला और दूसरा सफेद था ।

काले कान की ओर की आंख काली थी । दूसरी आंख काल थी । साधारण तौर पर सफेद खरगोश की आंखें लाल और काले की काली ही रहतीं । लेकिन दुर्मुख की आंखों के भिन्न रंग होते थे । उसका दुरंगा स्वभाव भी असहजा थी ।

दुर्मुख की आतंकवादी प्रवृत्ति महादेवी ने इस प्रकार देखी है - "दूध-भात देरी से मिलने पर वह पंजों से कटोरी उलट देता है देनेवाले के हाथ में या हाथ पहुंच से बाहर होने पर पैर में अपने नन्हें पर पैने दांत चुभा देता और कमरे-भर में दौड दौड़कर जो कुछ उसकी पहुंच में होता, उसे फेंकता-उल्टता हुआ घूमता । उसके भय से छिपकली क्या अन्य कीट-पतंग तक मेरे कमरे से दूर रहते थे ।"[1]

"भय खरगोश का "स्थायी भाव"है[2] । लेकिन बिल्ली या कुत्ते को देखकर दुर्मुख न भागता, न कहीं छिप जाता । वह उन्हें घूरते रहता था । बिल्ली पास कहीं आ बैठी तो वह अपने पिछले दोनों पैरों पर खडे होकर डराने केलिए "विचत्र क्रोध भरा स्वर" निकाला करता था ।[3]

क्रोधी स्वभाव के व्यक्ति जब विवाह कर लेता तब उसके स्वभाव में फरक आ जाता है । लेकिन कुछ व्यक्ति इससे अधिक बिगड जाते हैं । दुर्मुख इस दूसरे वर्ग का ही स्पष्ट होता है ।

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.6।
2. वही, पृ.6।
3. वही, पृ.62

इसीलिए जब "हिमानी" आ गयी, तब उसपर आक्रमण करने लगा । दुर्मुख अपने बिल में हिमानी को आने नहीं देता था । जो बिल "हिमानी" ने खोदा उस पर भी दुर्मुख ने अपना अधिकार जमाया । किसी भी जीवों का स्वजातीयों से मेल-खाना ही सहज है । लेकिन दुर्मुख का बड विचित्र स्वभाव था ।

एक बार दूसरों के खतरे को ध्यान में रखकर उसे अलग घर में रखा गया । लेकिन वह सुरंग बनाकर दूसरों पर आक्रमण करने लगा । माली ने बार-बार सुरंग बंद किया । लेकिन उसने नए-नए सुरंग खोले ।

मानव-मन की कठोरता प्राय: नन्हे-नन्हे बच्चों को देखकर पिघल जाती है । लेकिन कुछ लोग दुर्मुख जैसे भी हैं । उनका बच्चों पर दया करना तो दूर उनको हानी भी पहुँचाते हैं । "हिमान" जब अपने बच्चों सहित निकली तो दुर्मुख उन बच्चों पर भी झपट पडा । दो बच्चों को मार भी डाला ।

दुर्मुख के कटु अनुभवों का एक अच्छा परिणाम भी हुआ । किसी प्रकार की कठिनाई का सामना होने पर पीछे मुडना उसका स्वभाव नहीं था । उसके इस स्वभाव से दूसरों को कष्ट सहना पडता था । लेकिन किसी का सफलता-प्राप्ति केलिए कठोर परिश्रम करना अच्छा ही है । वह अटल था । इसी कारण उसने विषैले साँप को देखकर कोई सुरक्षा का साधन नहीं खोजा। वह उस पर झपट पडा । उसे उसने मार दिया भी । सर्पदंश से उस वीर पहलवान की मृत्यु भी हुई ।

आक्रामक व्यक्ति का दूसरों पर आक्रमण करना स्वाभाविक है । लेकिन कुछ व्यक्ति विशेष अवसरों पर विचित्र स्वभाव के बन जाते हैं । अपने अधिकार के छिनते देख ऐसा हो सकता है । नीलकंठ और राधा साथ-साथ रहते थे । "कुब्जा" का वहाँ आने तक स्थिति सामान्य थी । नीलकंठ और राधा कभी अलग नहीं होते थे । नीलकंठ पर कुब्जा का कोई अधिकार नहीं था । लेकिन वह नीलकंठ को इतना चाहती थी कि उसके पास राधा को ही नहीं किसी दूसरे जीव को भी देखना नहीं चाहती थी । इसलिए राधा को नीलकंठ के साथ देखते ही वह उसपर झपट पड़ती थी । "चोंच से मार-मार कर उसने राधा की कलगी नोच डाली, पंख नोच डाले ।"[1] लेकिन नीलकंठ कुब्जा से भाग जाता था । उसका राधा से ही लगाव था ।

कुत्ता बिलार को देखकर झपट पड़ता है । बिलार भूते के प्रति भी यही आचरण करता है । इसी प्रकार नेवला साँप को देखकर बिना मारे नहीं छोड़ता । "मेरा परिवार" के अंतिम चित्र में उन्होंने बचपन की कुछ बातें लिखी है । उनमें सबसे प्रथम एक नेवला है । "निक्की" उसका नाम है । महादेवी नहीं जानती थी, बड़े-बड़े साँप को भी मारने में निक्की सक्षम है । महादेवी को यह अपनी आँखों से देखकर विश्वास करना पड़ा । एक दिन साँप से लड़ते देख महादेवी उसे बचाने की चिंता में थी । कुछ समय बाद वह नेवला आकर खिड़की पर बैठ गया । तब तक साँप के कई टुकड़े हो गए थे ।"[2]

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.32
2. वही, पृ.95

यों आक्रामकता की प्रेरणा भिन्न-भिन्न प्रकार की हो सकती है । दूसरों की भलाई केलिए कोई आक्रामक हो सकता है । दूसरों की बुराई केलिए भी लोग कभी-कभी आक्रामक होते हैं । इस दूसरे वर्ग की स्वार्थ प्रेरित आक्रामकता दो प्रकार की होती है । एक तो अपने लिए लाभकारी होती, दूसरी बिना किसी लाभ के दूसरों को हानी पहुँचाने केलिए । सौम्यता के साथ ऐसी आक्रामकता भी इन जंतुओं में सहज है ।

चंचल दृष्टि

चंचल स्वभाव को हम सर्व प्रथम बच्चों के साथ जोड देते हैं । क्योंकि बच्चों का स्वभाव प्राय: चंचल रहता है । नारी-स्वभाव के साथ भी चंचलता जुडी हुई है । पर वह अलग प्रकार की है । अपनी सुरक्षा की दृष्टि से ही हिरण चंचल रहती है । चंचलता के मूल में भी कई कारण हो सकते हैं । कोई स्वभाव से चंचल है । कोई किसी की अनुपस्थिति में चंचल रहता है । ऐसे भी कई व्यक्ति हैं जो दूसरों का ध्यान आकर्षित करने केलिए चंचल रहते हैं ।

बच्चों के समान चंचलता से युक्त सोना का चित्र महादेवी ने प्रस्तुत किया है । सुबह कुछ खाकर वह मैदान में चौकडी भरती । वह कभी दूब चरती या मैदान पर लोटती रहती । महादेवी के भोजन के समय वह आकर उनसे सारी रहती । सोना को छोटे बच्चे अधिक प्रिय थे । क्यों कि स्कूल के किसी-न-किसी क्लास के बच्चे खेलने बाहर आते थे । वह घंटों तक उनके ऊपर छलांग भरती रहती थी । वह कभी-कभी महादेवी की साडी की छोर

और उसकी चोटी भी मुँह में डालकर चबाती रहती थी ।
महादेवी के ऊपर छलांग भरते देखकर देखनेवाले डर जाते थे ।
सोना के कार्यकलापों में भोले-भाले बच्चों-सी चंचलता दीखती है ।
वह महादेवी को इसी प्रकार अपना प्रेम दिखाती थी ।

मनोरंजन केलिए नीलकंठ मोर नाचता था । राधा उसको साथ देती थी । बादल देखकर ही वे नाचने लगते थे । यह तो मोर की सहज प्रवृत्ति है । लेकिन नीलकंठ महादेवी को देखकर नाच करता था । महादेवी के मेहमानों केलिए भी वह नाचा करता था । गिल्लू गिलहरी महादेवी के कमरे में रहता था । "फूल रखने की एक हल्की डलिया" ही उसका घर था । वह उसे स्वयं हिलाकर झुमता रहता था ।

गिल्लू महादेवी को कभी कभी चौंकाता था । कभी वह फूलदान के फूलों के बीच और कभी परदे की चुन्नट में वह छिप जाता था । महादेवी उसे ढूँढती रहती । वह जहाँ छिपा रहता वहाँ महादेवी के पहुँचते ही वह उनपर कूद पड़ता और महादेवी चौंक जाती थी ।

यह सहज मानविक प्रवृत्ति है कि किसी दंपति में एक के अभाव में दूसरे का बेचैन होता । लेकिन पशु पक्षियों में यह बहुत कम देख पाते हैं । "वसंत में जब आम के वृक्ष सुनहली मंजरियों से लद जाते थे, अशोक नए लाल पल्लवों से ढँक जाता था, तब जाली घर में वह इतना अस्थिर हो उठता था कि उसे बाहर छोड देना पड़ता । पर जब तक राधा को भी मुक्त न किया जाए, वह दवाजे के बाहर ही उपालम्भ की मुद्रा में खडा रहा ।"[1]

---

1. महादेवी-मेरा परिवार, पृ.3।

यह सही है कि बादल उमड रहा है और मोर को इस अवसर पर नाचने का शौक होता है । लेकिन किसी मनुष्य के समान ही चंचल होते दिखाई देता है क्योंकि साथ नाचने केलिए राधा नहीं है ।

सोना जब बडी हो गयी तो इसी प्रकार का एक अनुभव हुआ । उसे अकेलेपन का अनुभव हुआ । वह जंगल में नहीं रही थी । उन्होंने मनुष्य के बीच में ही सारी ज़िंदगी गुजारी है । फिर भी उसे जंगल का अभाव महसूस हुआ । उसे किसी साथी का अभाव महसूस हुआ । इस कारण से उसके कार्यकलाप मंद होते गए । उसके मनोरंजन अब कैसना हीन हो गया । लेकिन जो उमंग उसमें रह गया था वह भी महादेवी की अनुपस्थिति में गायब हो गया । वह प्राय: कुछ खोजती दिखाई देती थी । कभी-कभी वह कम्पाउण्ड से बाहर निकल जाती थी । इसलिए काली ने उसे बाँध रखा । एक दिन वह बडी ऊँचाई पर कूदी । बंधन की सीमा की बात वह भूल गयी थी । वह मुँह के बल गिरकर मर गयी । यहाँ सोना में दो तरह की चंचलताएं दिखाई देती हैं । पहले वह बाहरी दृष्टि से चंचल थी । फिर उसकी दूसरी चंचलता आंतरिक थी ।

नीलकंठ और राधा के स्वच्छ जीवन को कुब्जा ने आग लगा दी । कुब्जा से आक्रमण के भय से उन्हें अलग-अलग रखना पडा । नीलकंठ की प्रसन्नता विनष्ट हुई । कई बार वह जालीघर से भाग निकला । कभी-कभी वह कहीं छिप जाता था । राधा की विरह ने उसकी भूख और प्यास को भुला दिया । महादेवी ने बडी मार्मिकता से इस घटना का चित्रण किया है । पत्नी-वियोग से पति के मन में जो चंचलता उत्पन्न होती है, उससे क्या नीलकंठ की चंचलता कुछ कम है ?

महादेवी की अपने यहाँ पले पशु-पक्षियों के प्रति बडी आत्मीयता थी । उन्होंने अनुभव किया कि वही आत्मीयता उन्हें उन निरीह जीवों से भी मिलती रही है । यों उनकी अनुपस्थिति में वे भी आंतरिक रूप से चंचल रहते थे । मोटर दुर्घटना के बाद आजत महादेवी अस्पताल में थीं । कुछ दिन कमरे में न पाकर गिल्लू भोजन करना कम कर दिया । काजू उसका प्रिय भोजन था । अस्पताल से लौटकर जब उसके झूले को साफ किया तब उसमें काजू भरे पडे थे । तभी महादेवी गिल्लू के अनशन के बारे में जान पली । गिल्लू की मानसिक चंचलता का बहुत मार्मिक ढंग से महादेवी ने चित्रित किया है - "मेरी अस्वस्थता में वह तकिये पर सिरहाने बैठकर अपने नन्हें-नन्हें पंजों से मेरे सिर और बालों को इतने हौले-हौले सहलाता रहता कि उसका हटना एक परिचारिका के हटने के समान लगता ।"[1]

गिल्लू की चंचलता का एक अन्य उदाहरण महादेवी ने इस प्रकार दिया है -

> "जब मैं लिखने बैठती तब अपनी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करने की उसे इतनी तीव्र इच्छा होती थी कि उसने एक अच्छा उपाय खोज निकाला ।
>
> वह मेरे पैरों तक आकर सर्र से परदे पर चढ जाता और फिर उसी तेजी से उतरता । उसका यह दौडने का क्रम तब तक चलता, जब तक मैं उसे पकडने केलिए न उठती ।"[2]

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.40
2. वही, पृ.39

मोटर दुर्घटना के कारण जब महादेवी अस्पताल में थी तब नीलू कुत्ता भी चिंतित दिखाई देता था । कपडे, चादर, कंबल आदि लेकर अस्पताल जानेवालों देखकर वह कुत्ता भी जान लेता है कि कुछ अनिष्ट हुआ है । वह निश्चेष्ट-सा हो गया । तीन दिन तक वह कुछ न खाया । अंत में डाक्टर की अनुमति लेकर उसे अस्पताल ले जाया गया । तब से लेकर हर दूसरे दिन उसे अस्पताल ले जाना पडा । नहीं तो वह अनशन करने लगता था । इस प्रकार महादेवी से आत्मीयता के कारण उनके पास न होने पर वे जीव-जंतु भी चंचल हो जाते दीखते हैं ।

होती थी कि उसने एक अच्छा उपाय खोज निकाला । वह मेरे पैर तक आकर सर से परदे पर चढ जाता और फिर उसी तेज़ी से उतरता । उसका यह दौडने का क्रम तब तक चलता, जब तक मैं उसे पकडने केलिए न उठती ।"[1]

इस प्रकार महादेवी ने देखा है कि चंचलता की प्रवृत्ति मनुष्य में ही नहीं, मनुष्येतर प्राणियों में भी हैं । इस प्रवृत्ति के विभिन्न पक्ष भी उन्होंने विभिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न जंतुओं में देखे हैं ।

"मेरा परिवार" के चित्रों द्वारा महादेवी ने यह साबित किया है कि पशु-पक्षी भी मनुष्य-तुल्य ही करते हैं । पशु-पक्षी भी मानवीय गुप्तों से युक्त हैं । मनुष्य कभी-कभी पशु-समान हो जाता है । गौरा गाय सुंदर-सुडौल थी । वह बहुत दूध देती थी । इसलिए दुहने केलिए एक आदमी रखा गया ।

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.38

वही आदमी महादेवी के यहाँ दूध दिया करता था । उसके दूध की बिक्री नहीं होती थी । इसलिए एक दिन उसने गुड में लपेटकर गौरा को सुई खिला दिया । उसकी असमय मृत्यु हुई ।[1] अपने थोडे से स्वार्थ-लाभ के लिए मनुष्य इस प्रकार का नीच काम कर सकता है । लेकिन कोई पशु ऐसा कर नहीं सकता । यहाँ यह भी सिद्ध हो जाता है कि मनुष्य की अपेक्षा अधिक मानवीय गुण पशुओं में उपलब्ध हैं ।

सोना-हरिणी के चित्र प्रस्तुत करने के दौरान महादेवी ने मनुष्य की पशुता पर लंबी चर्चा की है । "मनुष्य मृत्यु को असुंदर ही नहीं, अपवित्र भी मानता है । उसके प्रियतम आत्मीय जन का शव भी उसके निकट अपवित्र, अस्पृश्य तथा भयजनक हो उठता है । जब मृत्यु इतनी अपवित्र और असुंदर है, तब उसे बाँटते घूमना क्यों अपवित्र और असुंदर कार्य नहीं है, यह मैं समझ नहीं पाती ।"[2] आगे वे कहती हैं कि उड़ते पक्षी" रंगबिरंगी फूलों की घटाओं के सम न लगता है । उसकी आवाज "वीणा वंशी, मुरज, जलतरंग आदि का वृन्दावन लगता है ।[3] लेकिन मनुष्य उन्हें अपनी बंदूक से "क्षत-विक्षत-रक्त स्नात" कर देता है । महादेवी को ऐसा लगा है कि हिरण ही सबसे निरीह पशु हैं । उसकी आँखें करुणा की चित्रलिपि हैं । उसके "गतिमय, सजीव सौंदर्य" से मनुष्य का मनोरंजन नहीं होता । "मानव को, जो जीवन का श्रेष्ठतम रूप है, जीवन के अन्य रूपों के प्रति इतनी वितृष्णा और विरक्ति और मृत्यु के प्रति इतना मोह क्यों ?"[4]

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.72-73
2. वही, पृ.46
3. वही, पृ.46
4. वही, पृ.47

सोना की माँ सद्य:प्रसूता थी । इसलिए शिकारियों से वह भाग नहीं पायी । अपनी सद्य:जात संतान को ओर में सुरक्षित रखकर उसने प्राण दिए । ऐसे मर्म-भेदी वातावरण में भी मनुष्य अपने स्वार्थ का ही विचार रखता है । अपने थोडे से सुख केलिए मनुष्य पशु सा आचरण करता है । वह भूल जाता है कि मनुष्य की महत्ता उसकी मनुष्यता पर निर्भर करता है ।

"मेरा परिवार" महादेवी वर्मा के पशु पक्षियों से संबन्धित रेखाचित्र संकलन ही नहीं बल्कि एक रचनाकार की असीम प्रकृतिप्रेम का प्रमाण है । यहाँ प्रकृति वनस्पतीय उपस्थिति मात्र नहीं । उसके अन्दर जीते जन्तु संसार भी है । निसीम प्रेम और ममता की अभिव्यक्ति इस संकलन में हुई है ।

गेहूँ और गुलाब

रामवृक्ष बेनीपुरी के प्रतीकात्मक रेखाचित्रों का संग्रह है "गेहूँ और गुलाब" । इसमें अनेक प्रकार के प्रतीक अपनाए गए हैं । फूल, पौधे, औजार व्यक्ति-संज्ञाधारी प्रतीकों का प्रयोग बेनीपुरी ने किया है । इन प्रतीकों के माध्यम से उन्होंने अपनी वैचारिक प्रतिक्रियाओं को अभिव्यक्ति दी है । इन प्रतीकात्मक रेखाचित्रों के बीच में कुछ व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का उल्लेख तो बेनीपुरी ने किया है । लेकिन वे किसी वर्ग विशेष केलिए प्रतीकवत् प्रस्तुत हैं ।

बेनीपुरी की दृष्टि में "गेहूँ और गुलाब" के रेखाचित्र एक नए आंदोलन के बीज हैं -

"..... आंदोलन - जो हमें भौतिकता की अंधगुफा से उठाकर सांस्कृतिक धरातल की ओर ले जाय । जो संघर्ष के बीच में भी हमें सौंदर्य देखने की दृष्टि दे । पैर कीचड को ठेलते बढ रहे हों, किंतु आंखें इंद्रधनुष पर जमी हों ।"[1] इस प्रयास में बेनीपुरी को बडी सफलता मिली है । इसका प्रमाण है "गेहूं बनाम गुलाब" ।

"गेहूं और गुलाब" के प्रतीकों के माध्यम से बेनीपुरी ने सामाजिक विसंगति, आर्थिक विपन्नता, शोषण अत्याचार, ग्रामीण चेतना आदि को गहन रंगों से मंडित करके प्रस्तुत किया है । बेनीपुरी ने अनुभव किया कि मनुष्य में मानवीयता कम होती जा रही है । इसलिए वे "गेहूं और गुलाब" उन हाथों में समर्पित करते हैं "जिन की हथेलियों में दिमाग और अंगुलियों में आंखें हों और जिनकी कलाइयों में किसी प्रकार की जंजीर न हो ।"[2] बेनीपुरी ने जान लिया है कि जो व्यक्ति किसी बंधन में हो तो उसे इस पुस्तक से कोई लाभ नहीं होगा । मानसिक रूप से स्वतंत्र व्यक्ति ही सही ढंग से विचार कर सकता है । मनुष्य ने अपने मन को कई प्रकार के बंधनों में उलझ रखा है । वह राजनीतिक हो सकता है या धार्मिक, या और कुछ । उनके दिमाग में इसका चढना असंभव है ।

वैज्ञानिक उपलब्धियों ने मनुष्य की सुविधाएं बढा दी हैं । बढती सुविधाएं मनुष्य को अधिक से अधिक स्वार्थी बना देती हैं । उसकी मानवीयता विनष्ट हो जाती है । ऐसी सांस्कृतिक संकट के

---

1. बेनीपुरी (पुस्तक आंदोलन), गेहूं और गुलाब (1967 संस्करण)
2. बेनीपुरी (समर्पण) गेहूं और गुलाब ।

सम्य बेनीपुरी अपना आंदोलन चलाते हैं । अत: वे कहते हैं -
"यह पुस्तक है और आंदोलन भी ।"[1]

सामाजिक समस्याओं का प्रतीकात्मक विन्यास

रामवृक्ष बेनीपुरी ने मनुष्य से संबन्धित और मानवेतर प्रतीकों के माध्यम से अनेक ज्वलंत सामाजिक समस्याओं के प्रति पाठकीय ध्यन आकर्षित किया है । गेहूं, गुलाब, तितलियां, चक्का, रोपनी, नींव की ईंट, जहाज, गेंदा आदि मनुष्येतर प्रतीक हैं । मानवीय प्रतीकों के रूप में उन्होंने पनिहारिन, पुरुष और परमेश्वर तथा मीरा को अपनाया है । यह विशेष उल्लेखनीय है कि बेनीपुरी के ये प्रतीक सामान्य जीवन से संबन्धित है ।

गेहूं और गुलाब

संकलन का प्रथम रेखाचित्र है "गेहूं बनाम गुलाब"। बेनीपुरी ने शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साधनों के प्रतीक के रूप में "गेहूं" का प्रयोग किया है । "गुलाब" मानसिक तृप्ति के साधनों का प्रतीक है ।

> "गेहूं हम खाते हैं, गुलाब सूंघते हैं" । एक से शरीर की पुष्टि होती है, दूसरे से हमारा मानस तृप्त होता है ।"[2]

बेनीपुरी प्रश्न करते हैं -

---

1. बेनीपुरी -गेहूं और गुलाब, पृ.।
2. वही, पृ.।

"जब तक मानव के जीवन में गेहूँ और गुलाब का संतुलन रहा, वह सुखी रहा, सानंद रहा ! वह कमाता हुआ गाथा था और गाता हुआ कमाता था । उसके श्रम के साथ संगीत बँधा हुआ था और संगीत के साथ श्रम ।"[1]

मनुष्य शारीरिक और मानसिक तृप्ति चाहता है । क्योंकि शरीर और मन में उसकी भूख होती है । शारीरिक भूख मिटाने मात्र से मनुष्य मनुष्य नहीं बनता -

"···· गेहूँ तक पशु और मानव में क्या अंतर ?
मानव को मानव बनाया गुलाब ने ।"[2]

किसी पशु के संदर्भ में गेहूँ और गुलाब में कोई अंतर नहीं होता । दोनों को वह भोजन बनाता है । लेकिन मनुष्य उन दोनों का अंतर जानता है । इसलिए वह गेहूँ खाता है । गुलाब के प्रति उसका आकर्षण उसकी सुरभि पर आधारित है । गेहूँ और गुलाब के माध्यम से बेनीपुरी मनुष्य-मन की वांछित सात्विक उच्चता का परिचय दिया है । लेकिन इस कायापलट पर वे दुखी हैं -

"अब गेहूँ प्रतीक बन गया हड्डी तोडनेवाले, थकानेवाले, उबानेवाले नारकीय यंत्रणाएं देनेवाले श्रम का, जो पेट की क्षुधा भी अच्छी तरह शांत न कर सके ।
और गुलाब बन गया प्रतीक विलासिता का - भ्रष्टाचार का, गंदगी और गलीज का ! वह विलासिता - जो

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.3
2. वही, पृ.2

शरीर को नष्ट करता है और मानस को भी ।"[1]

बेनीपुरी यहाँ मनुष्य की मानसिक वृत्तियों में जो गिरावट आ गयी है, उसी की ओर इशारा करते हैं । उनका दृष्टिकोण सही दिशा पर है । संस्कृति के नाम पर आजकल भ्रष्टाचार और गंदगी चलती हैं । "गुलाब" आजकल वरेण्य वर्ग को ही प्राप्य है । यह वरेण्य वर्ग भ्रष्टाचारी हैं । इसलिए गुलाब भ्रष्टाचार, विलासिता आदि अधर्म आवरणों का प्रतीक बन गया है । लेकिन बेनीपुरी शुभेच्छु हैं -

> "गेहूँ की दुनिया खत्म होने जा रही है - वह स्थूल दुनिया, जो आर्थिक और राजनीतिक रूप में हम सब पर छाई हुई है । ..... वह दुनिया आनेवाली है, जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे ।"[2]

बेनीपुरी ने ऐसी दो चीज़ों को प्रतीकवत् किया है जो किसी के हाथ आ सकती हैं । प्रकरत: ही वे अलग-अलग है । इस अन्तर को समझ पाना ही मानवीय दृष्टि है । प्रतीकों विकसित करके बेनीपुरी ने अपने विचार को भी विकसित किया है और आपके चिन्तन को सूचित किया है ।

"गुलाब" अपराजेयता का प्रतीक

"गुलाब" को अपराजेयता के प्रतीक के रूप में भी बेनीपुरी ने प्रयोग किया है । बेनीपुरी के मन यह संदेह उठता है कि

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.3
2. वही, पृ.6

क्यों गुलाब फूलों का राजा है । खूबसूरती में कमल, रंग में गुलदाउदी और गंध में जुही सबसे श्रेष्ठ फूल हैं । फिर भी गुलाब फूलों का राजा है । संदेह दूर करते हुए गुलाब कहता है -

"मेरे फूल को ही मत देखो - जैसा कि तुम्हारा मानव-जाति देखा करती है । देखो उसके नीचे । अनगिनत नुकीले, चुभीले काँटों को ।"[1]

गुलाब का जन्म भी कठोर परिस्थितियों में हुआ -

"मरुभूमि के हाहाकार में, पशु-पक्षी, वृक्ष-तृण जहाँ होश-हवास खो देते हैं, वहाँ भी अपना अस्तित्व ही नहीं, अपनी जन्मजात कोमलता, अपनी नेत्ररंजकता और उन्मुक्त दानपरता को बनाए रख सके, वह राजा के पद पर क्यों न बैठे ?"[2]

काँटों के सिर पर खिलकर भी गुलाब हँसता-विहँसता है । उसी प्रकार मनुष्य को भी विरोधी परिस्थितियों से गुजरकर भी सफलता हासिल करना है । दुख-दर्द रूपी काँटों के बीच में रहकर भी मनुष्य को "अपने स्वाभाविक गुणों" को छोडना नहीं चाहिए । मनुष्य का स्वाभाविक गुण है - मानवीयता, जो मनुष्य को हँसने और सुखी रहने की प्रेरणा देती है ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.32
2. वही, पृ.33

चक्का : यंत्रवत् मनुष्य का प्रतीक

मनुष्य हमेशा आगे बढना चाहता है । इस प्रयास में विज्ञान हमेशा उसके साथ है । फलत: मनुष्य यंत्रवत् हो गया है । इस अवस्था को बेनीपुरी ने "चक्के पर" में प्रतीकवत् किया है ।

> "..... वह बेचारा क्या जानता था कि जब आदमी चक्के पर होता है, गति में होता है, ऊपर चढने और आगे बढने की होडाहोडी में होता है, तब इधर-उधर मुंडकर देखना भी अपराध होता जाता है ।"[1]

आधुनिक मनुष्य हमेशा होडा होडी में रहता है क्योंकि वह सबसे आगे रहना चाहता है । वह बडा स्वार्थी बन गया है । स्वार्थ प्रेरित इस प्रयाण में "इधर-उधर मुंडकर देखना भी अपराध हो जाता है । आधुनिक मनुष्य के आपसी संबंध में जो शिथिलता आ गयी है उसी की ओर बेनीपुरी संकेत करते हैं ।

> ".... एक सेकेंड में ही ड्राइवर काका के अनेक स्नेह चित्र उस {बच्चे} की आंखों के सामने नाच उठे - चुमकार रहे हैं, लेमनचूस दे रहे हैं, कंधे पर ले रहे हैं..... ।"[2]

लेकिन ड्राइवर काका के पास क्षण भर रुकने केलिए वक्त नहीं है -

---

1. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.7।
2. वही, पृ.70

"ड्राइवर काका के कान ने कुछ क्षण पहले एक क्षीण स्वर का अनुभव किया था, किंतु, वह स्वर मूर्त नहीं हो पाया था कि अब तो अब मोटर की क्षिप्र गति में लीन हो चुका था ।"[1]

दुनिया यंत्रों के सहारे तेजी से दौड रही है । उसके नीचे मानव संबंध चूर-चूर हो रहा है । जिस विज्ञान के कारण दुनिया की "दूरियाँ" "निकटता" हो गयी है उसी के कारण मनुष्य मनुष्य की निकटता "दूरी" हो गयी है । प्रेम, सौहार्द, हमदर्दी आदि मानवीय मूल्य इस होडा होडी में विनष्ट हो जाते हैं ।

यांत्रिकता और आधुनिकीकरण की दूरगामी अवांछित स्थितियों की ओर इशारा करने वाला यह एक सशक्त रेखाचित्र है । इसमें बेनीपुरी के हृदय में निहित मनुष्य की चिन्ता प्रबल है । इसलिए वे यांत्रिकता में निहित अमानवीय संकेतों की तरफ इशारा करते हैं । प्रगति जब इकतरफा होगी उसमें नष्ट होनेवाला पक्ष मनुष्य का है । यंत्र बढता है तो यांत्रिक मनुष्य भी बढता है । सबकुछ यंत्रवत् हो जाता है । इस खतरे को बेनीपुरी ने बहुत पहले देख लिया है जो हमारी संस्कृति में भी खोट पैदा करता है ।

नींव की ईंट : ठोस सत्य और आत्मबलि का प्रतीक

रामवृक्ष बेनीपुरी ठोस सत्य और आत्मबलि के प्रतीक के रूप में नींव की ईंट का प्रयोग करते हैं । वे कहते हैं

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.7।

"दुनिया चकमक देखती है, ऊपर का आवरण देखती है, आवरण के नीचे जो ठोस सत्य है, उसपर कितने लोगों का ध्यान जाता है ।"[1]

किसी वस्तु की अन्दरूनी स्थिति ही उस वस्तु का "ठोस सत्य" होता है । लेकिन मनुष्य उस ठोस सत्य तक पहुँचना नहीं चाहता है । बाह्याकृति देख वह तृप्त हो जाता है ।

"सत्य कठोर होता है, कठोरता और भद्दापन साथ साथ जन्मा करते हैं, जीया करते हैं । हम कठोरता से भागते हैं ..... ।"[2]

मानव जीवन रूपी इमारत इस ठोस सत्य रूपी "नींव की ईंट पर खड़ी है । उसके हिलने से सारी इमारत का सर्वनाश हो जाएगा ।

नींव की ईंट की मंगल भावना इस प्रकार चित्रित है -

"वह ईंट जिसने अपने को सात हाथ ज़मीन के अंदर इसलिए गाड दिया कि इमारत जमीन के सौ हाथ ऊपर तक जा सके ।"[3]

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.20
2. वही, पृ.21
3. वही, पृ.21

यहाँ "नींव की ईंट" शहीदों केलिए प्रयुक्त है । शहीद अपने को मिट्टी में डुबाकर दूसरों को ऊपर उठाता है, अर्थात् दूसरों की भलाई केलिए वह आत्मोत्सर्ग करता है । बेनीपुरी कहते हैं कि यह आत्मोत्सर्ग मौन-मूक होना चाहिए । क्योंकि -

> "जिस शहादत को शुहरत मिली, जिस बलिदान को प्रसिद्धि प्राप्त हुई, वह इमारत का कँगूरा है - मंदिर का कलश है ।"[1]

महात्मा ईसा की शहादत बेनीपुरी की दृष्टि में उल्लिखित प्रकार की है । वे कहते हैं कि ईसाई धर्म का प्रचार उन लोगों के कारण हुआ, "जिन्होंने उस धर्म के प्रचार में अपने को अनाम उत्सर्ग कर दिया ।"

बेनीपुरी का कहना है -

> "इस नए समाज के निर्माण केलिए हमें नींव की ईंट चाहिए । अफसोस, कँगूरा बनने केलिए चारों ओर होडा होडी मची है, नींव की ईंट बनने की कामना लुप्त हो रही है ।"[2]

बेनीपुरी का मतलब है कि आज मनुष्य नामी बनना चाहता है । ठोस सत्य पर आधारित प्रसिद्धि उसे नहीं चाहिए । वह शहरी दृष्टि से प्रसिद्ध बनना ही चाहता है । दूसरों की भलाई केलिए सात्विक आत्मोत्सर्ग करने केलिए आज का मनुष्य तैयार नहीं है । सात्विक आत्मोत्सर्ग मात्र एक आदर्शवादी कदम नहीं है । यह हर स्तरे के समय की आवश्यकता है ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.22
2. वही, पृ.23

गेंदा : आत्मबल का प्रतीक

चुनौतियों का निडर होकर सामना करनेवालों का प्रतीक है "गेंदा"। इस रेखाचित्र को बेनीपुरी ने कहानी के ढंग से प्रस्तुत किया है। पुष्प कुल के सम्मेलन में पुष्पराज एक चुनौती दे डालते हैं -

> "···· इस निष्ठुर हेमंत में, इस दारुण शिशिर में क्या पृथ्वी पुष्प-शून्य रहेगी ? क्या ऐसा होना पुष्पकुल केलिए शोभनीय होगा ? ····· अब मैं जानना चाहता हूँ, हममें से कौन वह बडभागी है, जो इस गाढे अवसर पर पुष्पकुल की मर्यादा रखेगा ?"[1]

कमल, गुलाब, चंपा, बेला, चमेली, गुलदाउदी, गुलसब्बो आदि सभी ने सिर झुकाया। निराश होकर पुष्पराज चेतावनी देते हैं -

> "जिस वंश के लोग केवल बगीचे खोजें, रंगमहल खोजें या हरे जंगल का नग्न शृंगार खोजें, वह वंश दुनिया में टिक नहीं सकता।"[2]

मुसीबतों का सामना करना आसान कार्य नहीं है। आजकल जान बूझकर कोई मुसीबतों में पडना नहीं चाहता, चाहे किसी आदर्श के पालन केलिए ही क्यों न हो। मनुष्य चुनौतियों के सामने सिर झुकाकर निष्क्रिय हो जाते हैं। वह किसी दुख-दर्द का

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.25
2. वही, पृ.26

सामना किए बिना विलासी जीवन बिताना चाहता है । उनसे बेनीपुरी कहते हैं कि उनका दुनिया में अधिक काल टिकना असंभव है ।

पुष्पराज की चुनौती को गेंदा स्वीकार करता है -

"एक दुबला-पतला नौजवान, जिसके चेहरे पर पीलापन छाया हुआ है उठकर खड़ा है - गर्व से उसकी छाती उभड आई है । उसने कहना जारी रखा - "मैं तैयार हूं हेमंत से मुकाबला करने को, शिशिर की चुनौती स्वीकार करने लो ।"[1]

यहाँ गेंदा उन नवयुवकों के प्रतीक के रूप में चित्रित है जो देश के संकट के समय स्वार्थ सुख छोड़कर उसे बचाने केलिए निकल पड़ता है । यहाँ उसकी आत्मदानकी भावना, हम देख सकते हैं । आत्मदान की चुनौती स्वीकारने केलिए आत्मबल चाहिए । बेनीपुरी कहते हैं -

"वह अमरता {जो} कष्ट-सहन, त्याग और बलिदान से ही मिलती है ।"[2]

जहाज : दुनिया की गतिशीलता का प्रतीक

समाज अनेक खंडों में विभाजित है । निम्नवर्ग, मध्यवर्ग, और उच्चवर्ग हमारे समाज के विभिन्न अंग हैं । जहाज समाज का प्रतीक है -

---

1. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.26
2. वही, पृ.27

"निचले हिस्से में थर्ड क्लास के यात्री खचाखच भरे हैं, ऊपर डेक पर कुछ सुफेदपोश बाबू चहलकदमी कर रहे हैं। यह जहाज नहीं जानता कि वह हमारे समाज का कितना सही प्रतिनिधित्व करता है - वह तो बढा चला जा रहा है।"[1]

समाज में अनेक प्रकार की विषमताएं विद्यमान हैं। लेकिन उन्हें अनदेखा करके समाज "बढा चला जा रहा है।"

अर्थात् समाज की गतिशीलता पर उसकी विषमता का कोई प्रभाव नहीं पड रहा है। समाज अपनी प्रतिक्रिया की शक्ति खोकर बहता जा रहा है -

"यह क्या जल रही है ? चिता, चिता, चिता ? हाँ तीन चिताएं एक पंक्ति में ! लोग इतना करते हैं ? किंतु शायद आप जीवितों की गिनती भूल गए हैं। तो भी मरन कितना निष्ठुर, जीवन कितना मधुर ! और जीवन-मरण दोनों से उदासीन वीतराग-सा यह जहाज चला जा रहा है।"[2]

गंगा में कई अधजली, सडी हुई लाशें बह रही है। इस प्रकार की समस्याओं के बीच भी मनुष्य का विचार है -

"अच्छा है, जहाज तेजी से बढा जा रहा है।"[3]

---

1. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.१
2. वही, पृ.१
3. वही, पृ.१

समस्याओं से भाग जाने की मनुष्य की प्रवृत्ति यहाँ व्यंजित होती है । पलायनवादिता को मनुष्य के सहज वृत्ति के रूप में स्वीकार किया है । आज सामाजिक समस्याओं का सरलीकरण हो गया है । व्यक्ति अपने में संकुचित हो गया है । समाज अपनी एकरूपता खोकर अलग-अलग व्यक्तियों का अनमेल समूह बन गया है । व्यक्तियों के अनेक एकक अपने स्वार्थ लक्ष्य की ओर गतिशील है -

> "जहाज कहाँ जा रहा है ? हम कहाँ जा रहे हैं ?
> यह गंगा कहाँ जा रही है ? ये नावें कहाँ जा रही हैं ?
> वह लाश कहाँ गई ? जगत्यामजगत् है यह, सबमें गति है
> सबको चलना है, बढना है, जाना है । हमारा जहाज
> भी जा रहा है ।"[1]

जहाज़ को प्रतीकवत् करके हमारे समाज की विसंगति को दार्शनिक अन्दाज में बेनीपुरी ने इस रेखाचित्र में प्रस्तुत किया है ।

तितलियाँ : क्षणिकता का प्रतीक

तितली के बच्चे आकर्षित होते हैं । पुरुष वेश्याओं से आकर्षित होता है । तितली चंचल है, वह किसी एक स्थान पर टिकती नहीं है । वेश्या भी किसी एक व्यक्ति से ही संबंध नहीं रखती । वह एक के बाद एक करके पुरुषों को स्वीकारती - छोड़ती है । अत: तितली वेश्या का उत्तम प्रतीक है ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.10

"दो तितलियाँ आई और सारा पार्क रंगीन, रसमय,
उच्छ्वासित और मुखरित हो उठा ।
तितलियाँ दूब पर दौडीं, फूलों को चूमा, बेंच पर बैठीं,
कुछ गुनगुनाई, फुसफुसाई, इधर उधर नज़रें दौडायीं -
सारी आँखें उनकी तरफ ।"[1]

वेश्या रूपी तितलियों को देखकर एक क्षणिक उल्लास में पार्क में बैठे लोग डूबते हैं । उनके चले जाने पर भी -

"पार्क अब भी उच्छ्वसित है, मुखरित है ।"[2]

उन वेश्याओं के प्रति जो आकर्षण होता है वह केवल क्षणिक है । वह कोई गहरा प्रभाव डालने में असमर्थ है ।

किसी एक आदर्श या सिद्धांत पर टिके न रहनेवालों का भी प्रतीक है तितली । स्वार्थी लोग अवसरवादी होते हैं । किसी आदर्श या सिद्धांत के प्रति उनका कोई लगाव नहीं होता । अपने स्वार्थ लाभ केलिए समय समय पर अपना आदर्श बदल देते हैं । उनका कोई प्रभाव समाज पर नहीं पडता । लेकिन अपने आदर्शों पर अटल रहनेवाला अमर हो जाता है । अत: आदर्शहीन आधुनिक समाज को भी "तितलियाँ" द्वारा बेनीपुरी ने संकेत किया है ।

पहली वर्षा : परिवर्तन का प्रतीक

पहली वर्षा को बेनीपुरी ने संघर्ष के बाद की सफलता के रूप में चित्रित किया है ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.16
2. वही, पृ.17

"इस साल की यह पहली वर्षा है । पहली वर्षा के साथ क्या बाँधी का होना अनिवार्य है ।"[1]

बेनीपुरी कहना चाहते हैं कि हर परिवर्तन के साथ एक आंदोलन जुडा हुआ है, जैसे पहली वर्षा के पूर्व आँधी होती है ।

"···· जिनकी डंठलें पुष्ट हैं वे वर्षा से रसीले बन जयें, उसके पहले क्या कुछ कमज़ोर डंठलवाले आमों का गिर पडना लजिम्मी है ?

परिवर्तन की सद्भावना से पुष्ट व्यक्ति रूपी डंठलें परिवर्तन रूपी वर्षा से रसीले हो जाते हैं । इसके लिए आंदोलन ज़रूरी होता है । उस आंदोलन के दौरान पुरानी परंपरा रूपी कमज़ोर डंठलवाले आमों का गिर पडना अनिवार्य है । तभी तो नये युग का आगमन सुगम होगा ।

हरसिंगार : आत्म समर्पण का प्रतीक

आत्मसमर्पण तथा मंगल भावना के प्रतीक के रूप में बेनीपुरी ने हरसिंगार को प्रस्तुत किया है । बेनीपुरी की दृष्टि में हरसिंगार दूसरों की भलाई करने केलिए उतावला रहता है -

"अपने सौरभ में आप ही व्याकुल, मेरे आंगन की यह छोटी खिटपी, अपने हृदय के सारे बोझीले भार को,

---

1. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.102

सूर्योदय के पहले ही हल्काकर देना चाहती है, जिसमें लोक-लोचन उसके इस अछूते संसार को नज़र न लगादें ।"[1]

हरसिंगार अपने फूल देकर दुनिया की भलाई कर रहा है । मनुष्य की इच्छा है कि वह जो कुछ दूसरों केलिए करता है वह दुनिया भर देखें । लेकिन हरसिंगार सूर्योदय के पहले ही अर्थात् किसी की दृष्टि में पडने के पूर्व ही आत्मसमर्पण करना चाहता है । वह रक्तदान या बलिदान से प्रेरित है -

"समूचे थाल में उजली-उजली खीलें बिखरी हैं, जिसकी जडों में लालिमा चमक रही है । §लाली जिसकी जड में हो, वह उजलापन ! रक्तदान से ओत-प्रोत उज्ज्वल बलिदान ।§ जब दुनिया अपनी सारी लाली बाजार में बेचने को उतावली है, यह उसे छिपा रखने की चेष्टा करती है ।"[2]

बेनीपुरी कहते हैं कि लोकमंगल की भावना की जड बलिदान की लालिमा से रंगी है । वह बडा उज्ज्वल होती है । गुप्त रूप से दूसरों की भलाई करना ही सचमुच बलिदान कहलाने योग्य है ।

फुलसुंघनी : शोषक का प्रतीक

फुलसुंघनी को शोषक के रूप में बेनीपुरी ने प्रस्तुत किया है । वह गेंदे पर आ बैठती है -

---

1. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.29
2. वही, पृ.29

"अपनी चोंच से पंखुरियों की जड पकड़कर झटका देती है,
उसका रस पी लेती है, फिर गिरा देती है । देखिए
ने, आपके देखते-देखते एक पूरे फूल की पंखुडियाँ नोच
डालीं इस जोडे ने ।"[1]

उच्च वर्ग रूपी फुलसुंघनी सर्वहारा वर्ग रूपी गेंदा की न केवल रस चूस लेती है बल्कि उसका सर्वनाश भी कर डालती है ।

"मेरे गेंदे के बाग को सर्वनाश में मिलाकर,
फुलसुंघनी के जोडे, वह देखिए, उडे जा रहे हैं !"[2]

इस प्रतीक के माध्यम से शोषितों की निरीह अवस्था का उल्लेख भी किया है । विलासी शोषक केलिए दूसरों के जीवन को हानी पहुँचाना सिर्फ एक हल्का विनोद है ।

चरवाहा - अभावग्रस्त लोगों का प्रतिनिधि

अपने चारों ओर जो हरकतें हो रही है उससे अप्रभावित होकर किसी न किसी प्रकार भूख मिटाने में लगा चरवाहा अभावग्रस्त, अकृत्रिम, भोले भाले ग्रामीण गरीबों का प्रतिनिधि है । एक बुढिया घास छील रही है, खेतों में हल चलाए जा रहे हैं, पुरवी हवा बह रही है, सेठ दंपत्ति रिक्शे पर सवार हैं, सरासर भरी बस चल रही है । फिर भी वह चरवाहा -

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.15
2. वही, पृ.15

"लकडी में कण्डे पर रखी चीज़ को उलट-पुलट देता है, आग की दहक से चेहरा झुलस रहा है उसका, लेकिन उसपर उल्लास नाच उठता है रह-रह ! वह बडे प्रेम से कण्डे की आगी में कोई चीज़ भून रहा है जा ।"[1]

संग्रह की इच्छा से होडाहोडी करनेवाले तथाकथित सभ्य समाज का कोई प्रभाव ग्रामीण निरीह व्यक्तियों पर नहीं पडता । उसकी सब से बडी समस्या भूख मिटाने की होती है । भूख मिटाने के आवश्यक साधन पाकर वह तृप्त हो जाता है ।

पुरुष और परमेश्वर : शक्ति और आकांक्षा का प्रतीक

बेनीपुरी का विश्वास है कि ईश्वर मनुष्य की भावना से उत्पन्न है -

"भक्त ने कहा - भगवान ने अपने रूप में मनुष्य का निर्माण किया । दर्शन ने कहा - मनुष्य ने अपने रूप में भगवान की रचना की । जब मनुष्य ने सपनाना सीखा, ईश्वर का प्रारंभ तभी से हुआ । ज्यों-ज्यों सपनों में वृद्धि हुई, भगवान की महत्ता में भी वृद्धि होती गई ।"[2]

मनुष्य के सपने और उसकी आकांक्षाओं में एकरूपता होती है । उसकी आकांक्षाएँ ऊर्ध्वगामी होती हैं । अत: उसने एक ऐसे रूप का सपना देखा जो सर्वशक्तिमान और अपराजेय हो ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.11
2. वही, पृ.34

और उसकी आकांक्षा उसी अपराजेय ईश्वर के समान बनने की हो गयी -

"भगवान् एक सपना है
भगवान् एक आकांक्षा है, जिससे मानव-जीवन ओतप्रोत बना है ।"[1]

बेनीपुरी कहते हैं कि मानव-कल्पना-जन्य भगवान का वही मानव गुलाम बन गया है । और अपनी रक्षा केलिए वह उसी ईश्वर के सामने गिडगिडाने लगा ।

मनुष्य ईश्वर की खोज कर रहा है । इसलिए आदमी पर उसका कोई विश्वास नहीं है । लेकिन -

"जब आदमी पर विश्वास नहीं, तो भगवान पर कैसे विश्वास हो ? क्योंकि भगवान और आदमी आखिर एक ही सिक्के के दो रूप हैं न ।"[2]

बेनीपुरी का कथन है कि मनुष्य की आंखों से पर्दा हटाने से सब कुछ स्पष्ट देख सकेगा । हर वस्तु को उसकी स्वाभाविकता के साथ स्वीकारा जाय तो काल्पनिक भगवान अपने आप काफूर हो जाएगी । अंत में बेनीपुरी यह उपदेश देते हैं -

"परमात्मा की ओर बहुत देखा, अब अपने पुरुषार्थ की ओर देखें ।"[3]

---

1. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.35
2. वही, पृ.37
3. वही

पुरुष को अपनी शक्ति पहचाननी है । इसी में उसकी सफलता है ।

पनिहारिन : शोषितों का प्रतीक

उच्च वर्ग के लोग हमेशा निम्न वर्ग को अपने शोषण का शिकार बनाते हैं । इस प्रकार के शोषितों को पेनिहारिन में बेनीपुरीप्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है । जिस मालिक को पिलाने केलिए पनिहारिन पानी ढोती है उसी के बच्चे को उसके स्तन का दूध भी देना पड़ता है । तभी तो वह भूख मिटा पाती है -

> "युग-युग से मैं गागर ढो रही हूँ, युग-युग तक
> मैं गागर ढोने केलिए बाध्य की जाऊँगी !
> दुनिया में कुछ लोग बिना हाथ-पैर हिलाए, बैठे-
> बिठाए पानी पीते रहे हैं, इसकेलिए आवश्यक यह है
> कि कुछ लोग सदा गागर ढोते रहें ।"[1]

शोषक-शोषित का उत्तम प्रतीतवत् चित्रण यहाँ हुआ है । श्रमिक वर्ग हमेशा श्रम करते रहते हैं । उसका फल कुछ वरेण्य लोग भोगते हैं । समाजवादी बेनीपुरी का यथार्थवादी दृष्टिकोण इस रेखाचित्र में उभर कर आया है ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.90

मीरा : त्रस्त स्त्री कलाकार का प्रतीक

समाज में स्त्री कलाकारों को हेय समझा जाता है । इसलिए अनेक स्त्री कलाकारों को अपनी क्षमता का विकास करने का अवसर नहीं मिलता । "मीरा नाची रे" में बेनीपुरी इस सामाजिक नीति की ओर संकेत करते हैं । स्त्री हमेशा बंधन में होती है -

> "अट्टालिका का घेरा, वंश मर्यादा का घेरा, लौकिक पतिव्रत का घेरा, पारलौकिक स्वर्ग-नरक का घेरा ।"[1]

संपन्नता, वंश मर्यादा, पातिव्रत्य, धर्म आदि के चहुं-दिक्-बंधन में पड़कर नारी की सारी क्षमताएं मुरझा जाती हैं । मीरा भी इन सभी बंधनों से घिरी हुई थी । लेकिन उसने सभी को तोड डाला अपनी कला को विकास पाने दिया -

> "घर छोडा, द्वार छोडा, कुटुंब छोडा, परिवार छोडा, जीवन-धन पति छोडा, किंतु, पग घुंघरू बाँध मीरा नाचीरे !"[2]

बेनीपुरी मीरा के धीरज की सराहना करते हैं -

> "उस विद्रोहिणी मीरा की जय, जिसने हृदय की पुकार पर बौछारों और धिक्कारों की उपेक्षा की ।"[3]

---

1. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.60
2. वही, पृ.60
3. वही, पृ.61

लेकिन आज की मीरा घेरों में पडी रहती है । वह छद्म नाम से रेडियो पर गाती है । सुशिक्षित और क्रांतिकारी कहलाने वाले भी अपनी बेटी या पत्नी को रंगमंच पर उतरने नहीं देता है -

"गाती हो तो ठीक ! पिताजी हाई कोर्ट से लौटें, तो उन्हें एक भज सुना देना । पतिदेव कालेत से आयें, तो एक प्रेम-गीत गा देना !
डार्लिंग ! - हेरी, मैं तो प्रेम-दिवानी,
मेरा दरद न जाने कोई ।
बेटी - मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई ।"[1]

बेनीपुरी ने मीरा की पंक्तियाँ आधुनिक परिवेश में प्रस्तुत की हैं । उन्होंने इस हास्यास्पद अवस्था का व्यंग्यात्मक चित्रण किया है ।

बेनीपुरी हमारे देश की "असंख्य मीराओं को संस्कृति और कला के विकास पथ में साहसपूर्ण कदम रखने का आह्वान करते हैं । यदि उस युग की घृणित मीरा आज अमर हो गयी तो आज की मीराएं भी अमर रहेंगी । इस प्रकार बेनीपुरी इस रेखाचित्र के माध्यम से स्त्री को अपने अकारण बंधनों को तोडने तथा सांस्कृतिक विकास पथ को प्रशस्त करने की प्रेरणा देते हैं ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.62

ग्रामीण चेतना का प्रक्षेपण

गाँवों और शहरों के वातावरण में स्पष्ट अंतर देखा जा सकता है । शहरों की अपेक्षा गाँव सहजत: स्वच्छ और सुंदर है । कई तरह के प्रदूषणों के कारण शहर मनुष्य के रहने योग्य नहीं रह गया है ।

देहाती लोग प्राय: भोले-भाले और सीधे-सादे होते हैं। वे मिट्टी में कठोर परिश्रम करने के कारण तंदुरुस्त भी रहते हैं । उनका हर कार्य कलाप नृत्य और संगीत से जुडा हुआ है । जोतते हुए और फसल काटते हुए वे लोग गाते हैं । फसल काटने के बाद वे उत्सव मनाते हैं । लेकिन शहरी आदमी सहज ही टेढा होता है । वहाँ अनेक उलझनें होती है । शहरी लोगों में अधिकतर दफ्तरों और कारखानों में काम करते हैं ।

"नथुनिया" रेखाचित्र में बेनीपुरी देहाती निरीहता तथा अंधविश्वास का चित्रण करते हैं । भोले भाले होने के कारण ग्रामीणों में अनेक प्रकार के अंधविश्वास और दुराचार प्रचलित हैं । "नथुनिया" के नाक में प्रसूतिगृह में ही, बूढी दादी ने पीतल की एक नथुनी डाल दी थी - कहीं उसके इस पितृहीन एकलौते पोते को डायन-जोगन की नज़र न लग जाय ।[1] ग्रामीण सहज भोलापन नथुनिया में है - "इस गर्मी, जाडा, बरसात की झुलस, हड्कम्प और झकोरे का मारा उसका चेहरा सिकुडता-सा नज़र आया ।"[2] शहरी लोगों में मुस्कुराने का वक्त नहीं है । लेकिन ग्रामीण कठिनाइयों के घेरे में भी मुस्कराता है । शहरवालों की

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.18
2. वही, पृ.79

मुस्कान बनावटी है । उनके लिए उनके मुखौटे ही मुस्कराते हैं । लेकिन "नथुनिया" बाहरी रूप से मलिन होकर भी उसकी मुस्कान में हृदय की गहराई होती है ।

"रोपनी" रेखाचित्र में ग्रामीणों की उत्सव प्रियता का चित्रण हुआ है । कृषि की प्रत्येक क्रिया भारतीय गाँवों में त्योहार है । जुताई, कोडाई, पटाई, रोपनी, निकौनी, करनी सब त्योहार है । इन सबके साथ हृदय की भावनाएँ गुंथी हैं ।[1] ऐसे अवसरों में लोग नाचते और गाते हैं । मन की उमंग यहाँ प्रकट होती है । प्रत्येक अवसर पर गाने के लोक गीत भी प्रचलित हैं । ग्रामीण समाज की एकता ऐसे मौकों पर दर्शनीय है । सिहेसर, सरजू, कुलकुन, मंगर सब एकत्रित होकर गीत गाते हैं । उनकी एकता बेनीपुरी के इन शब्दों में स्पष्ट है - "रोपनी में किसानों के सामूहिक जीवन का बहुत अच्छा दिग्दर्शन होता है । प्राय: कई किसान मिल-जुलकर रोपनी करते हैं । जिनकी ताक रही, सबने उनकी मदद की । नहीं तो फिर सबकी ताक बिगड जाय ।"[2] ग्रामीण गीतों की सार्थकता की चर्चा बेनीपुरी ने "लागल करेजवा में चोट" में की है । ग्रामीणों में जो भोलेपन और सादगी वर्तमान होते हैं उनकी झलक उनकी कविताओं में मिलती है । "लागल करेजवा में चोट" एक पुराना, मशहूर देहाती गीत है । बेनीपुरी कहते हैं कि यह एक परम सत्य है हर किसी के कलेजा में चोट लगती है । इस परम सत्य को सीधे सादे ढंग से इस ग्रामीण गीत द्वारा प्रस्तुत किया गया है ।

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.77
2. वही, पृ.83

ग्रामीण लोग एक दृष्टि से संकुचित हैं । शहरी, मादक वातावरण से अलग रहने के कारण उनके पास सुविधाएँ सीमित है । शहरों में अनेक सुविधाएँ उपलब्ध है । इसलिए उन्हें बाह्य दृष्टि से संकुचित नहीं कह सकते । आंतरिक दृष्टि से देखें तो शहरी लोग ही ग्रामीणों की अपेक्षा अधिक संकुचित है । अर्थात् जहाँ सभ्यता का उस स्तर होता है वहाँ संस्कृति का ह्रास होता है । और जहाँ संस्कृति उच्च है वहाँ सभ्यता कम होगी ।

"गेहूँ और गुलाब" बेनीपुरी का एक विशिष्ट संग्रह है । उन्होंने प्रतीकों के माध्यम से समाज का विश्लेषण किया है । उन्होंने अपनी सामाजिक आकांक्षाओं को व्यक्त किया है और सामाजिक विघटन को दर्शाया है । इन प्रतीकों की एक बडी विशेषता यह है कि जिन संदर्भों से उनका सहज संबंध है उन्हीं संदर्भों में ही उनका प्रयोग हुआ है । इस कारण उनकी अभिव्यक्ति अधिक स्पष्ट है और प्रभावोत्पादक भी । बेनीपुरी ने अपने जीवन का काफी समय नगर में बीता है । लेकिन वे देहाती थे और देहात से उनका बडा लगाव था । एक राष्ट्रकर्मी होने के कारण विभिन्न सामाजिक उलझनों से वे परिचित थे । अत: उनके सभी चित्र बडे संवेदनशील हैं । उनके चित्र जीवंत हैं । छोटे हैं इसलिए पैने हैं । उनमें अनावश्यक वर्णन नहीं है । बहुत कम शब्दों का प्रयोग लेखक ने किया । व्यर्थ शब्दों का प्रयोग उन्होंने नहीं किया है । इसलिए किसी भी प्रकार की अस्पष्टता उनके चित्रों में नहीं है । सामाजिक विसंगति, आर्थिक विपन्नता आदि से लेकर अनेक सामाजिक उलझनों का उन्होंने चित्रण किया है । उसमें किसी व्यक्ति विशेष का चित्र नहीं है । किसी व्यक्ति का आभास होता तो उसका कारण चित्रों में अंकित रेखाओं की गहराई है । क्योंकि वह व्यक्ति उसी वर्ग या चरित्र के व्यक्तियों

महादेवीवर्मा और बेनीपुरी के अलग-अलग श्रेणियों में रखने योग्य दो संकलनों को एक साथ, एक ही प्रकरण में विश्लेषित करने का एकमात्र कारण इनमे अंकित रेखाचित्र उन्हीं के अन्य संकलनों से एकदम भिन्न है । इनमें समानता की एक अन्तर्धारा भी है और वह है दोनों की व्यापक मानववादी दृष्टि और व्यापक करुणा । उन दोनों के जीवन चरित को निकट से देखते समय यह उनका कोई आदर्शवादी ढोंग नही है । आत्मोसर्ग और बलिदान की भावना से भरपूर उनका उज्ज्वल जीवन इसका आधार है । वे दोनों आत्मबल के प्रतीक भी है । इसलिए ऐसे रेखाचित्र महादेवी और बेनीपुरी ही लिख सकते हैं ।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

अध्याय - सात

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों की शैल्पिक प्रवृत्तियाँ

अध्याय - सात

महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों की शैल्पिक प्रवृत्तियाँ

गद्य की नई विधा के रूप में जब से रेखाचित्र ने अपनी सत्ता का परिचय दिया है । तब में उसके स्वरूप संबंधी समस्या सामने उभर आती रही है । यह सर्वविदित बात है कि रेखाचित्र गद्य के चरम विकास के दौर में रूपायित गद्य विधा है । इसलिए सीमित समय के अंतर्गत उसके भीतर कई प्रकार के प्रयोग हुए हैं । इसलिए रेखाचित्रों में समानता का अंश कम है । फिर भी रेखाचित्र ने अपना शैल्पिक परिचय दिया है, अपने रूप संबंधी एक धारणा बनाई है ।

शब्द-रेखाओं का चित्र और चित्रशिल्प

चित्र-प्रतीति रेखाचित्र के शिल्प की सबसे प्रमुख प्रवृत्ति है । इस प्रवृत्ति की दृष्टि से महादेवी और बेनीपुरी काफी सफल निकले हैं ।

महादेवी एक सफल चित्रकार है, वे कवयित्री तो हैं ही । इसलिए उनके रेखाचित्रों में चित्रात्मकता और काव्यात्मकता का होना सहज और स्वाभाविक है । अतीत के चलचित्र का रामा को महादेवी ने सफलतापूर्वक अंकित किया है -

"रामा के संकीर्ण माथे पर की खूब घनी भौहें और छोटी-छोटी स्नेहतरल आँखें कभी-कभी स्मृति-पट पर अंकित हो जाती हैं और कभी धुंधली होते-होते एकदम खो जाती हैं । किसी थके झुंझलाए शिल्पी की अंतिम भूल जैसी अनगढ मोटी नाक, साँस के प्रवाह से फैले हुए-से-नथुने, मुक्त हँसी से भरकर फूले हुए-से-ओठ तथा काले पत्थर की प्याली में दही की याद दिलानेवाली सघन और सफेद दंत-पंक्ति के संबंध में भी यही सत्य है ।

रामा के बालों को तो आध इंच से अधिक बढने का अधिकार ही नहीं था, इसी से उसकी लंबी शिखा को साम्य की दीक्षा देने केलिए हम कैंची लिए घूमते रहते थे ।"[1]

एक सफल मूर्तिकार के समान महादेवी मानो अपनी कूची से कुरेदकर रामा की छोटी-छोटी स्नेह तरल आँखों के ऊपर खूब घनी भौहें स्पष्ट उभारकर रखी हैं । उसके नथुने, ओठ और नाक का इस प्रकार चित्रण हुआ है जैसे चित्रकार अपने चित्र में कहीं कहीं कुछ रंग चढाकर उसे कहीं कहीं गहरा और कहीं कहीं हल्का होने का आभास देता है । चित्र के अन्त में स्मृति खंडों का प्रकरण भी जोडा गया है ।

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.10

"स्मृति की रेखाएँ" में जंगबहादुर नाम्क पर्वतीय कुली को महादेवी ने यों अंकित किया है -

> "घनी भौंहों के नीचे मुख चौडा और नाक कुछ गोल हो गई थी । हंसी से निरंतर खुले हुए ओठों के कोने कान तक फैलकर गाल और कान के अंतर को छिपा देते थे । छोटी और विरल मूंछों के काली डोरी जैसे छोर मुँह के दोनों ओर झूलकर, छोटे-छोटे दांतों से प्रकट होनेवाले बचपन का विरोध कर रहे थे एक ओर संकीर्ण माथे और दूसरी ओर छोटी गोल ठुड्डी से सीमित चौडे मुख को, रोकर पोछी हुई सी छोटी आँखें वही सजल झलक देती थीं जो रेगिस्तान के जलाशय में संभव है । गेहुआँ रंग निरंतर धूम में रहने के कारण कहीं पुराने तांबे जैसा और कहीं झाईदार हो गया है । बोझ बाँधने की गाँठ गँठीली पुरानी रस्सी का एक छोर गले की माला बनता हुआ कन्धे से लटक रहा था, दूसरा कमरबंद बनकर कोट के झबरेपन में कहीं छिपा कहीं प्रकट था ।"[1]

उसके रसहीन चेहरे पर सजल आँखें रेगिस्तान में जलाशय के समान है । इस चित्र में प्रयुक्त शब्दों से व्यक्ति की एक-एक रेखा हमारे मन-पट पर अंकित होती है और चित्र की आन्तरिक प्रवृत्ति का भी आभास हमें मिलता है । इसे हम चित्रात्मक संकेत कह सकते हैं ।

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.34

बेनीपुरी के "गेहूँ और गुलाब" में संग्रहीत छब्बीस साल बाद" में लड़की का चित्र इस प्रकार है -

"छोटा-सा ललाट, चाँद के टुकड़े-सा ! ऊपर सजल श्यामल मेघ - से बालों के लट, नीचे काम के कमान सी पतली, लचीली, नुकीली भौंहें । आँखों में कुमार, गालों पर गुलाब । सुंदर पतली नाक - जब वह पतले अधरों को खोल, दानेदार दाँतों को जरा-सा चमकाकर बोलती मालूम होता, नाक उसमें सुरीलापन भर रही । स्वस्थ अर्द्ध-स्फुटित यौवन ! कैसी मोहक थी वह, उसकी काया, उसकी बातें, उसकी चाल !"[1]

एक अन्य चित्र बेनीपुरी की "माटी की मूरतें" में सरजू भैया का है जो चित्रात्मक प्रवृत्ति के सन्दर्भ विशेष महत्व का है -

"गाँव के सबसे लंबे और दुबले आदमियों में सरजू भैया की गिनती हो सकती है । रंग साँवला, बगुले-सी बड़ी-बड़ी टाँगें, चिपंची की तरह बड़ी-बड़ी बाँहें । कमर में धोती पहने, कंधे पर अंगोछी डाले, जब वह खड़े होते हैं, आप उसकी पसलियों की हड्डियाँ गिन लीजिए । नाक खूँडी लंबी । भौंहें सघन । बड़ी-बड़ी आँखें कोटरों में धँसी । गाल चिपके । आँ-आँ की शिराएँ उभड़ी - कभी-कभी मालूम होता, मानों ये नसें नहीं, उनके शरीर को किसी ने पतली डोरों से जकड़ रखा है ।"[2]

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.98
2. बेनीपुरी - माटी की मूरतें, पृ.40

यहाँ सरजू और बगुला की टाँगों का एक तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत किए जाने से सरजू की आकृति स्पष्ट हो गयी है । सरजू की उभरी नसों को देखकर बेनीपुरी को लगता है कि किसी ने उसे पतली डोरों से जकड रखा है । नसों के तनाव तक जानेवाली बेनीपुरी की दृष्टि ही यहाँ मुखर है । चित्र में यह प्रकट है । पर उसका एक अप्रकट पक्ष भी है जो सरजू से संकल्पित है ।

भावों का चित्रशिल्प

रेखाचित्रकार अपने चित्र में बाह्याकार के अलावा आन्तरिक पक्ष भी उभार सकता है । यह एक प्रकार से चित्र में जान फूँकने की प्रक्रिया है । वस्तुत: तभी एक चित्र जीवन्त प्रतीत होता है । रेखाचित्र स्केच केलिए यह आवश्यक है । साहित्यिक रेखाचित्रकारों ने भी इस प्रवृत्ति को अपनाया है । "स्मृति की रेखाएँ" में महादेवी की भक्तिन एक उत्तम नमूना है -

> "छोटे कद और दुबले शरीरवाली भक्तिन अपने पतले ओठों के कोनों में दृढ संकल्प और छोटी आंखों में एक विचित्र समझदारी लेकर जिस दिन पहले पहले मेरे पास आ उपस्थित हुई थीं तब से आज तक एक युग का समय बीत चुका है ।"[1]

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.3

भक्तिन के दृढ संकल्प को महादेवी ने उसके ओठों के पतलेपन तथा उसकी विचित्र समझदारी को उसकी आंखों के छोटेपन से संबद्ध किया है । एक सामान्य चित्र को महादेवी ने व्यक्तित्व की तरफ खुलने वाले किवाड के रूप में परिवर्तित किया है । इसी प्रकार "मुन्नू की माई (स्मृति की रेखाएं) को उन्होंने यों प्रस्तुत किया है -

"नाक का नुकीलापन यदि बुद्धि की तीक्ष्णता का पता न देता तो उसका छोटापन मूर्खता का परिचायक बन जाता । आंखें न बडी न छोटी पर एक विचित्र आभा से उद्दीप्त । पतले ओठ छोटे सफेद दांतों की झांकी में अकारण प्रसन्नता व्यक्त करते हैं । पर उनके बंद होते ही उनपर एक नामहीन विषाद की छाया आ जाती है ।"[1]

आवयविक विन्यास रेखाचित्र की सीमा पार कर व्यक्ति के अंतरंग को प्रकाशित करनेवाला प्रत्यय-सा हो जाता है । इस विन्यास में शब्द रंगों का अच्छा रचनात्मक प्रयास भी हुआ है ।

बेनीपुरी का रेखाचित्र किसको लिख रहे हैं, "गेहूं और गुलाब" में संग्रहीत है । उसका एक प्रसंग इस प्रकार है -

> "कहानी लेखक लुप्त आ रहा था । लूची की आंखों की उत्सुकता और उत्कंठा के अध्ययन में लीन वह उहूं, उहूं करता जाता था ; लाल फ्राक और काले बालों के बीच गेहुएं चेहरे पर चमकती दो मासूम आंखों में वह कला देवी को, अब प्रत्यक्ष देख रहा था ।"[2]

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएं, पृ.50
2. बेनीपुरी - गेहूं और गुलाब, पृ.96

आकारता के साथ अंतरंगता को प्रक्षेपित करने का बेनीपुरी का प्रयास अवश्य ही रचनात्मक है । चित्र को चित्र होने तथा चित्र बनने की प्रवृत्ति के प्रति बेनीपुरी और महादेवी सजग दिखाई देते हैं ।

दृश्यात्मकता का शिल्प-विधान

रेखाचित्र की एक अन्य शैल्पिक प्रवृत्ति उसकी दृश्यात्मकता ही है । रेखाओं और रंग के प्रयोग से एक व्यक्ति उभर आता है अर्थात् उसको प्रस्तुत किया जाता है तो उसके बाद जीवनी के अंशों और तत्संबन्धी घटनाओं के माध्यम से किसी एक जीवन परिच्छेद को प्रस्तुत करना रेखाचित्रकार का उद्देश्य होता है । इसलिए अनेक छोटी-बडी घटनाओं को भी वे प्रस्तुत करते हैं पर विवरणात्मकता उसके रूप के अनुकूल नहीं है । पर विवरण की आवश्यकता भी है । इसलिए उसे दृश्यात्मक बनाने का प्रयास किया जाता है ।

महादेवी ने "स्मृति की रेखाएँ" में भक्तिन के मन के भावों को इस प्रकार दृश्यवत् किया है -

> "बहुत दिन से नैहर नहीं गई सो जाकर देख आवे, यही कहकर और पहना उठाकर सास ने उसे विदा कर दिया । इस अप्रत्याशित अनुग्रह ने उसके पैरों में जो पंख लगा दिए थे वे गाँव की सीमा में पहुँचते ही झड गए ।[1]"

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.5

इन शब्दों में भक्तिन की अपने पिता से मिलने की अदम्य इच्छा तथा अप्रत्याशित रूप से यह इच्छा पूरी करने की अनुमति मिलने से उसके मन में उठने वाले उमंग और उत्साह आदि को दृश्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है । दृश्यात्मकता की विशेषता उसकी चलचित्रात्मकता है जो महादेवी के इस विवरण में द्रष्टव्य है । इस कारण से विवरण की जडीयता नष्ट होती है ।

"अतीत के चलचित्र" के छठे रेखाचित्र में महादेवी अपनी प्रतिक्रिया यों दृश्यक्त् है -

> "उस अस्वाभाविक निस्तब्धता से ही उसकी मानसिक स्थिति का अनुमान कर मैं सिरहाने रखी हुई ऊँची चौकी पर से लोटे को हटाकर उस पर बैठ गयी । और तब न जाने किस अज्ञात प्रेरणा से मेरे मन का निष्क्रिय विषाद क्रोध के सहस्र स्फुलिंगों में बदलने लगा ।"[1]

समाज से निष्कासित उस बूढे की पोती को एक अबेध बच्चा प्रदान करनेवाले पुरुष समाज के प्रति महादेवी का क्रोध उमड पडता है । उनका क्रोध अग्नि के स्फुलिंगों के समान यहाँ चित्रित है । भभकती ज्वाला के समान महादेवी के क्रोध की ज्वलंत स्थिति की दृश्याविष्कृति यहाँ हुई है ।

बेनीपुरी "गेहूँ और गुलाब" में "ये मनोरम दृश्य" शीर्षक रेखाचित्र में यह चित्र प्रस्तुत करते हैं -

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.60

"क्या पीत समुद्र का एक टुकडा, किसी जादूगर ने यहाँ ला पटका है ? .... यहाँ तो जीवन तरंगें ले रहा है, सुगन्ध सपक्ष उड रही है ।"[1]

जीवन का तरंगायित होना, तथा सुगंध का फैलना, देखने लायक स्थितियाँ नहीं हैं । ऐसी स्थितियों को बेनीपुरी हमारी आँखों के सामने सफलतापूर्वक प्रस्तुत करते हैं । उमंग भरी स्थिति का अच्छा चित्रण बेनीपुरी ने यहाँ किया है ।

बेनीपुरी ने इसी रेखाचित्र में अपने भावावेश की अवस्था का चित्र इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

"आँखों में अपूर्व दृश्यावली, कानों में अभूतपूर्व ध्वनि - प्रति ध्वनि, मस्तिष्क में चित्र-विचित्र कल्पना की लहरी । मेरे पैर थम चले । मैं कुछ आगे उस नालेवाले पुल के निकट खडा था । क्या होश में था ? क्या बेहोश था ? एक परिचित आए, बोले - क्या देख रहे हैं ? जवाब क्या देता, ऊपर की ओर इशारा किया । उन्होंने भी कहा - "अहा, कैसा अच्छा दृश्य" और आगे बढे ।

होश ने कहा - सार्वजनिक स्थान पर यों खडा रहना ठीक नहीं । किंतु पैर में तो पत्थर बँधे थे ।"[2]

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.57
2. वही, पृ.42

बेनीपुरी उस प्राकृतिक दृश्य में तल्लीन होकर बेहोश से हो गए थे। वहाँ से लौटने को उनका मन नहीं कर रहा था। इस अनिच्छा तथा उस दृश्य में उनकी तल्लीन अवस्था को बेनीपुरी ने प्रस्तुत किया है।

जीवनी - शिल्प

व्यक्ति के व्यक्तित्व को चित्रित करते समय रेखाचित्रकार को उसके जीवन की अनेक घटनाओं को भी उभारना पड़ता है। अर्थात् उस व्यक्ति की जीवनी के अंशों का उसमें सन्निवेश होना सहज है। ये अंश अंकित चित्रों की भूमिका का काम करते हैं।

महादेवी के "पथ के साथी" सियारामशरण गुप्त के जीवन का एक पहलू यहाँ उद्धृत है -

> "किशोर होते-होते पत्नी मिल गयी थी और तरुणाई में श्वास का रोग प्राप्त हुआ थोड़े-थोड़े समय के अंतर से कई बालक नहीं रहे, असमय ही पत्नी ने विदा ली। भाभियाँ कहती हैं कि इन्होंने अद्भुत संयम से यह वियोग-व्यथा झेली .... ।"[1]

सियारामशरण गुप्त के जीवन के उद्धृत अंश के साथ उनके व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण पहलू भी जुड़ा हुआ है। वह है उनका अद्भुत संयम, जिसमें अपने प्रिय व्यक्तियों की मृत्यु होने पर भी कोई स्थित्यंतरण नहीं होता।

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.83

"मेरा परिवार" में गिल्लू के रेखाचित्र के साथ महादेवी ने उसकी संपूर्ण जीवनी प्रस्तुत की है । उसकी शुरूआत इस प्रकार है -

"मेरा परिवार" में गिल्लू के रेखाचित्र के साथ महादेवी ने उसकी संपूर्ण जीवनी प्रस्तुत की है । उसकी शुरूआत इस प्रकार है -

"अचानक एक दिन सबेरे कमरे के बरामदे में आकर मैं ने देखा, दो कौवे एक गमले के चारों ओर चोंचों से छुआ छुऔवल जैसा खेल खेल रहे हैं । ... निकट जाकर देखा, गिलहरी का एक छोटा सा बच्चा है, जो संभवत: घोंसले से गिर पडा है और अब कौवे जिसमें सुलभ आहार खोज रहे हैं ।

काकद्वय की चोंचों के दो घाव उस लघुप्राण के लिए बहुत थे, अत: वह निश्चेष्ट-सा गमले से चिपका पडा था । .... कई घंटे के उपचार के उपरांत उसके मुँह में एक बूंद पानी टपकाया जा सका । तीसरे दिन वह इतना अच्छा और आश्वस्त हो गया कि मेरी उँगली अपने दो नन्हें पंजों से पकडकर, नीले काँच के मोतियों जैसी आँखों से इधर-उधर देखने लगा ।"[1]

गिल्लू के जीवन के इस प्रथम पहर से परिचित होने से पाठक उसकी स्वाभाविक चंचलता और निरीहता को एक विशेष सहानुभूति के साथ देखने लगता है ।

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.37-38

बेनीपुरी ने "मील के पथर" में हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद को केंद्र बनाकर जो रेखाचित्र खींचा है उसमें राजेन्द्र प्रसाद के जीवन के काफी अंश भी आए है -

> "राजेन्द्र बाबू को बिहार का कौन विद्यार्थी नहीं जानता था ? उस समय के विशाल कलकत्ता विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों में सर्वप्रथम आकर उन्होंने बिहार के विद्यार्थियों की प्रतिभा की धाक जमाई थी । "बिहारी छात्र सम्मेलन" की स्थापना कर बिहार के विद्यार्थियों का जैसा संगठन किया था, वैसा आजतक नहीं किया जा सका ।"[1]

किसी भी कार्य में उच्चतम सफलता पाने की क्षमता राजेंद्र प्रसाद रखते हैं । उनके व्यक्तित्व के अन्य पहलुओं को पढते समय पाठक के मन में यह बात उनके व्यक्तित्व के एक स्थायी पक्ष के रूप में अंकित रहती है । "जीवन तरु" बेनीपुरी के "लाल तारा" संग्रह का एक रेखाचित्र है । यह हाकिम सिंह का रेखाचित्र भी है जीवनी भी ।

> "यों हाकिम मामा की ज़िन्दगी हँसी-खुशी की, मस्ती-मशरत की जिंदगी थी । लेकिन इन सब के बावजूद एक अभाव था, जिसकी याद ही सब को उदास कर देती । कितने व्रत किये, कितनी मन्नतें मानीं, कितने साधु-गुणीजनों की सेवा की, पर सब व्यर्थ । उनकी गोद न भरी, न भरी । ..... और एक जमाना वह भी आया,

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.4।

जब मामी ने खुद हाकिम मामा से अनुरोध किया कि शादी कर लीजिए, यह सुना घर मुझे नहीं सुहाता । ..... आंगन से औरतों के गाने और बीच-बीच में हँसने की आवाज आ रही है, दरवाजे पर ढोलक गमकती और मंजीरे खनकते हैं । हाकिम मामा के घर में उन्हीं के शब्दों में, लक्ष्मी जी ने पदार्पण किया था ।"[1]

इस प्रकार हाकिम सिंह के जीवन की अनेक झलकियाँ इस रेखाचित्र में उपलब्ध हैं । व्याह के बाद कई वर्षों उनका बच्चा नहीं हुआ, फिर भी उनके व्यवहार में अपने मन की व्यथा की कोई सूचना नहीं थी । लेकिन उन्होंने अपनी बच्ची के जन्म के अवसर पर जिस ढंग से एक उत्सव ही रचाया उससे बच्ची होने के पूर्व उनके मन की व्यथा का अनुमान लगा सकते हैं । इतनी बडी व्यथा को दूसरों के सामने हँसी-खुशी में परिणत करना उनके व्यक्तिपक्ष की महत्ता का सूचक है । कहने का मतलब यह है कि व्यक्तर्यकन में जीवनी पक्ष का उभार सहज भी है ।

आत्म कथांश की विवृति का शिल्प-विधान

यह स्पष्ट किया गया है रेखचित्रकार यथार्थ व्यक्ति के बाह्य तथा आंतरिक पहलुओं का चित्रण करता है । इसकेलिए चित्रित व्यक्ति के साथ उसका निकट संबंध होना ज़रूरी है । हो सकता है कि उससे संबंधित अनेक घटनाओं का स्वयं रेखाचित्रकार का भी संबंध रहा हो । इसलिए उस व्यक्ति के चित्रांकन के साथ रेखाचित्रकार को अवसर अपनी आत्मकथा के अंश भी उभारना

---

1. बेनीपुरी - लाल तारा, पृ.16-18

पड़ता है । यह रेखाचित्र के यथार्थ होने का तर्कहीन प्रमाण बन जाता है । इसके माध्यम से रेखाचित्रकार के व्यक्तित्व की झलक भी पाठक को मिलती है ।

"स्मृति की रेखाएँ" में "ठकुरी बाबा" के रेखाचित्र में महादेवी कहती हैं -

> "यह सब मैं नियम धर्म केलिए नहीं करती यह भक्तिन को समझाना कठिन है, इसी से मैं उसे समझाने का निष्फल प्रयत्न करने की अपेक्षा मौन रहकर उसकी भ्रान्ति को स्वीकृति दे देती हूँ । मौन मेरी पराजय का चिन्ह नहीं प्रत्युत वह जय की सूचना है यह भक्तिन से छिपा नहीं संभवत: इसी कारण वह मेरे प्रतिवाद से इतना नहीं घबराती जितना मौन से आतंकित होती है, क्योंकि प्रतिवाद के उपरान्त तो मत-परिवर्तन सहज है पर मौन में इसकी कोई संभावना शेष नहीं रहती । ... मुझे इस कल्पवास का मोह है, क्योंकि इस थोडे समय में जीवन का जितना विस्तृत ज्ञान मुझे प्राप्त हो जाता है उतनी किसी अन्य उपाय से संभव नहीं । और जीवन के सम्बन्ध में निरंतर जिज्ञासा मेरे स्वभाव का अंग बन गई है ।"[1]

अपने रेखाचित्रों में महादेवी की आत्मकथा के काफी अंश भी मिलते हैं । "ठकुरी बाबा", रेखाचित्र के संदर्भ में उपर्युक्त उच्चारण एक महत्वपूर्ण पृष्ठभूमि है । "जीवन के संबंध में निरंतर

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.71-73

जिज्ञासा" महादेवी के "स्वभाव का अंग" होने के कारण ही ठकुरी बाबा को वे निकट से देख पायी है तथा उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन कर सकी है । यहाँ महादेवी के व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण पहलू भी सहजत: स्पष्ट हो गया है ।

"पथ के साथी" में महादेवी ने "सुभद्राकुमारी चौहान का रेखाचित्र प्रस्तुत किया है । महादेवी और सुभद्रा कुमारी चौहान एक ही स्कूल में पढी और एक ही होस्टल में रहती थीं । इसलिए सुभद्राकुमारी चौहान के चित्र में महादेवी की आत्मकथा काफी उल्लेखनीय मात्रा में आ गयी है । सुभद्राकुमारी चौहान सातवें कक्षा की छात्रा थी और महादेवी पाँचवें कक्षा की । एक दिन सुभद्राकुमारी चौहान आकर महादेवी से प्रश्न किया कि तुम गणित की पुस्तक में कविता लिखती हो ? उनका संदेह सत्य निकला । इसलिए उन्होंने सब कहीं यह वार्ता फैला दी कि महादेवी कविता करती है । कविता करना उस समय अपराध माना जाता था । आगे महादेवी लिखती है -

> "मैं ने होंठ भींच कर न रोने का जो निश्चय किया वह न टूटा तो न टूटा । अन्त में मुझे शंकित परीक्षा में उत्तीर्ण देख सुभद्रा जी ने उत्फुल्ल भाव से कहा, "अच्छी तो लिखती हो । भला सवाल हल करने में एक दो तीन जोड लेना कोई बडा काम है । मेरी चोट अभी दुख रही थी, परंतु उनकी सहानुभूति और आत्मीय भाव का परिचय पाकर आँखें सजल हो आई तुम ने सब से क्यों बताया ? का साहस उत्तर मिला -

"हमें भी तो सहना पड़ता है । अच्छा हुआ अब दो साथी हो गए ।"[1]

विशेष उल्लेख के बिना ही यह स्पष्ट होता है कि प्रस्तुत प्रकरण महादेवी की आत्मकथा ही है । इसके साथ-साथ सुभद्रा की आत्मीयता का व्यवयंश भी चित्रित है, उनकी सहृदयता भी । चित्रित व्यक्ति के साथ महादेवी की आत्मीयता का परिचय यहाँ उपलब्ध होता है । रेखाचित्र की यथार्थता का बोध आत्मांश के सन्निवेश से स्वत: होता है ।

बेनीपुरी के रेखाचित्रों में भी यह प्रवृत्ति काफी मात्रा में देखी जा सकती है । "माटी की मूरतें" का प्रथम चित्र "रजिया" पर केंद्रित है । वे कहते हैं -

"जब उसकी माँ नई खरीदारिनों की तलाश में मेरे आँगने से चली, रजिया भी उसके पीछे हो ली । मैं खाकर, मुँह धोकर, अब उसके निकट था और जब वह चली, जैसे उसकी डोर में बंधा थोडी दूर तक खिंचता गया । शायद मेरी भावुकता देखकर ही चूडीहारिनों के मुँह पर खेलने वाली अजब हँसी और चुहल में ही उसकी माँ बोली बबुआजी, रजिया से ब्याह कीजियेगा ? फिर बेटी की ओर मुखातिब होती, मुस्कराहट में कहा क्यों रे रजिया, यह दुल्हा तुम्हें पसंद है ? उसका यह कहना कि मैं मुड़कर भागा । ब्याह ? एक मुसलमानिन से ? अब रजिया की माँ ठठा रही थी और रजिया सिमटकर उसके पैरों में लिपटी थी, कुछ दूर निकल जाने पर मैं ने मुड़कर देखा ।"[2]

---

1. महादेवी - पथ के साथी, पृ.37
2. बनीपुरी - माटी की मूरतें, पृ.19

बेनीपुरी की स्मृतियों में सचमुच उनकी आत्मकथा ही यहाँ विन्यस्त हुई है । "मील के पत्थर" में प्रेमचंद पर प्रस्तुत रेखाचित्र में बेनीपुरी की आत्मकथा के अंश भी आये हैं -

> "काशी, कम्पनीबाग के निकट का वह चौराहा । एक साधारण-सा व्यक्ति खड़ा । .... जब भाई शिवपूजनजी ने बताया कि यही हैं हिन्दी के उपन्यास सम्राट प्रेमचंद जी, तब मुझे कम आश्चर्य नहीं हुआ, क्योंकि उस समय मैं ने साहित्य क्षेत्र में प्रवेश किया ही था और इसे सोने और शहद से भरा पूरा समझ रखा था । ..... इसके बाद लगभग दो वर्षों तक प्रेमचंद जी से प्राय: भेंट होती । मैं "बालक" के सम्पादन और छपाई के सिलसिले में ज्यादातर काशी ही रहता और प्रेमचंदजी वहीं अपना सरस्वती प्रेस चलाते ।"[1]

प्रेमचंद के व्यक्तित्व के एक मुख्य अंश यहाँ चित्रित है । बेनीपुरी के "बालक" का संपादन उसकी छपाई केलिए काशी में रहना आदि उनकी आत्मकथा के अंश है । प्रेमचंद जी से निकट संबंध होने का यही कारण भी है । उनके साथ के निकट संबंध की बातें रेखाचित्र की यथार्थता का प्रमाण है ।

वैचारिक पक्षों का प्रक्षेपण

कोई भी साहित्यिक विधा रचनाकर के विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है । रेखाचित्रकार भी व्यक्ति चित्रण के दौरान अपने विचारों की अभिव्यक्ति भी करता है ।

---

1. बेनीपुरी - मील के पत्थर, पृ.20

चित्रित व्यक्ति से संबंधित ही नहीं जीवन के विभिन्न पक्षों का भी विश्लेषण रेखाचित्रकार प्रस्तुत करता है । समाज, राजनीति, धर्म आदि पर रेखाचित्रकार के वस्तुनिष्ठ विचार इस प्रकार प्रकट किए जाते हैं । यह प्राय: चित्रित व्यक्ति की यथार्थ स्थिति का परीक्षण तथा उस व्यक्ति की समस्या का सामाजिक संदर्भ में महत्व आदि इस विश्लेषण द्वारा स्पष्ट हो जाता है । इस प्रकार रचनाकार के विचारों की अभिव्यक्ति रेखाचित्र के शिल्प की प्रवृत्ति हो जाती है । रेखाचित्र के इस शिल्प पक्ष पर विचार करते समय यह बात स्पष्ट होती है कि उसमें निबंध का स्पष्ट प्रभाव है । इस प्रभाव के कारण ही वैचारिक प्रक्षेपण शिल्प प्रवृत्ति के रूप में परिवर्तित होता है । इसका एक दूसरा कारण यह है कि रेखाचित्रकार व्यक्ति चित्रों को सामाजिक संदर्भ में प्रस्तुत करना चाहता है । तब उसकी व्यक्ति व्यंजक प्रवृत्ति के साथ जो चित्रात्मक शिल्प के रूप में उपलब्ध है सामाजिक समस्याओं का रूपायन भी होता है । वह इसके शिल्प में यों कसकर बंधित किया होता है कि वह उसके अभिन्न अंग का आभास देने लगता है ।

"मेरा परिवार" में सोना हरिणी की मां की मृत्यु से जोड कर महादेवी मनुष्य की मनोरंजन प्रियता पर विचार करती हैं -

> "मनुष्य मृत्यु को असुन्दर ही नहीं, अपवित्र भी मानता है । उसके प्रियतम आत्मीय जन का शव भी उसके निकट अपवित्र और असुन्दर है, तब उसे बाँटते घूमना क्यों अपवित्र और असुन्दर कार्य नहीं है, यह मैं समझ नहीं पाती । .... बेचारी सोना भी मनुष्य की इसी निष्ठुर मनोरंजन प्रियता के कारण अपने अरण्य - परिवेश और स्वजाति से दूर मानव समाज में आ पडी थी ।"[1]

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.46-47

सैद्धांतिक विश्लेषण में महादेवी की मर्मज्ञता का परिचय इस में हमें मिलता है । सोना की माँ की मृत्यु मनुष्य की मानवता के अभाव के कारण हुई । इस संदर्भ में महादेवी कहती है कि मनुष्य अपना मौलिक धर्म खो बैठा है । जंतु जगत में मनुष्य का सर्वोच्च स्थान है । फिर भी वह अन्य जीवों को मारता है जबकि उनकी रक्षा करना उसका धर्म है । महादेवी के गंभीर विचार वहाँ प्रस्तुत है ।

बेनीपुरी का एक रेखाचित्र है "गोशाला" । गेहूँ और गुलाब" संग्रह के इस रेखाचित्र में उन्होंने बूढे बैलों की सुरक्षा के प्रबंध के बारे में विचार करते हैं -

> "गोशाला - बूढी अपाहिज गौओं, बैलों की रक्षा केलिए कितना सुन्दर प्रबन्ध ! चाहिए भी, भला जिन गौओं ने हमें जिन्दगी भर दूध और बछवे दिये, जिन बैलों ने अपनी हड्डियाँ घुलाकर जमीन को जरखेज बनाया, अन्न की राशियाँ दीं, उनके बुढापे का तो कोई प्रबन्ध होना चाहिए । गोशाला, मनुष्य की मनुष्यता का एक सुन्दर प्रतीक ! ····· मनुष्य ने बूढे पशुओं के लिए गोशालाएं बनवाई, किन्तु बूढे मनुष्यों के लिए ? रामफल चाचा को बूढ़ी गायों से इतनी मुहब्बत और उस बूढे आदमी केलिए, जिनके ··· ?"[1]

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ·76

जीवन भर हड्डी तोड काम करके अक्कल राम फल काका और अन्य गाँववालों को खिलाया । लेकिन बुढापे में उसे कहीं भीख माँगकर भूख मिटाना पडता है । इसी संदर्भ में बेनीपुरी इस गंभीर समस्या की चर्चा करते हैं । आज मनुष्य का मूल्य घट गया है । पशु की तुलना में उसकी हालत अधिक बिगडी हुई है । बूढी गौओं और बूढे बैलों की रक्षा करना बहुत श्रेष्ठकार्य है । बेनीपुरी का मतलब है कि जो सुविधा पशु को दी जा रही है, वह मनुष्य को भी उपलब्ध होनी चाहिए ।

इसी संग्रह के "रोपनी" रेखाचित्र में बेनीपुरी कहते हैं -

"हमारे देश की पढी-लिखी स्त्रियाँ मिट्टी से घृणा करने लगी हैं । रोपनी तो कीचड और मिट्टी से सनी हुई क्रिया है न ! किन्तु, एक जमाना आयगा, जब हमें मिट्टी से घृणा करने की यह आदत छुडानी पडेगी ।"[1]

रोपनी देहाती किसानों को उत्सव-समान है । उस त्योहार की रंगीनता तथा उसमें लोगों की तल्लीनता की चर्चा को दौरान बेनीपुरी इस विषय पर विचार कर रहे हैं । शिक्षित स्त्रियाँ मिट्टी में काम करना नहीं चाहतीं । पुरुषों के संदर्भ में भी यह सही है । इस समस्या पर बेनीपुरी अपना विचार प्रकट करते हैं ।

रेखाचित्र की भाषा दृष्टि

विवरण प्रधान एवं अंकन प्रधान भाषा का समन्वय

रेखाचित्र में विवरण प्रधान और चित्रमयी भाषा का समन्वय होता है । रेखाचित्रकार अपनी सफलता केलिए दोनों प्रकार की

---

1. बेनीपुरी - गेहूँ और गुलाब, पृ.83

भाषा का बीच-बीच में प्रयोग करता है । भाषा की ये प्रवृत्तियाँ रेखाचित्र में शीघ्र ही घुलमिल जाती हैं कि विशेष ध्यान दिए बिना इन का विभाजन संभव नहीं होता ।

महादेवी के "मेरा परिवार" में नीलकंठ" का यह संदर्भ एक नमूना है -

> "मयूर कलाप्रिय वीर पक्षी है, हिंसक मात्र नहीं । इसी से उसे बाज, चील आदि की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता, जिनका जीवन ही क्रूरकर्म है ।
> नीलकंठ में उसकी जातिगत विशेषतायें तो थी ही, उनका मानवीकरण भी हो गया था । मेघों की साँवली छाया में अपने इन्द्रधनुष के गुच्छे जैसे पंखों को मण्डलाकर बनाकर जब वह नाचता था, तब उस नृत्य में एक सहजात लय-ताल रहता था । आगे-पीठे, दाहिने-बाएँ क्रम से घूमकर वह किसी अलक्ष्य सम पर ठहर-ठहर जाता था ।"[1]

मयूर पक्षियों की सामान्य विशेषताओं के विवरण करते करते महादेवी नीलकंठ पर आ जाती हैं । उसके बाद उन्होंने उसके नृत्य का चित्रण किया है । यहाँ चित्र के पूर्व का विवरण उसकी भूमिका बन गयी है ।

"अतीत के चलचित्र" में महादेवी ने बिंदा की "नयी अम्मा" का चित्रण इस प्रकार किया है -

---

1. महादेवी - मेरा परिवार, पृ.30

"और बिंदा के भी तो माँ थी जिन्हें हम पण्डिताइन चाची और बिंदा नयी अम्मा कहती थी । वे अपनी गोरी, मोटी देह को रंगीन साडी से सजे-कसे, चारपाई पर बैठ कर, फूले गाल और चिपटी-सी नाक के दोनों ओर नीले काँच के बटन-सी चमकती हुई आँखों से युक्त मोहन को तेल मलती रहती थीं ।"[1]

इस उद्धरण का प्रथम वाक्य विवरण प्रधान और दूसरा अंकन प्रधान है । बडी सहजता से महादेवी की भाषा प्रथम स्थिति से दूसरी स्थिति में आ जाती हैं । बेनीपुरी "माटी की मूरतें" में बालगोबिन भगत को जिस प्रकार प्रस्तुत किया है वह भी एक अच्छा नमूना है -

"मस्तक पर हमेशा चमकता हुआ रामानंदी चंदन, जो नाक के एक छोर से ही, औरतों के टीका की तरह, शुरू होता । गले में तुलसी की जडों की एक बेडौल माला बाँधे रहते ।
ऊपर की तस्वीर से यह नहीं माना जाय कि बालगोबिन भगत साधु थे । नहीं, बिल्कुल गृहस्थ । उनकी गृहिणी की तो मुझे याद नहीं, उनके बेटे और पतोहू को तो मैं ने देखा था । थोडी खेतीबारी भी थी, एक अच्छा साफ-सुथरा मकान भी था ।"[2]

यहाँ चित्रण के उपरांत ही वर्णन हुआ है ।

---

1. महादेवी - अतीत के चलचित्र, पृ.34
2. बेनीपुरी - माटी की मूरतें, पृ.74

रेखाचित्र की भाषा की यह सूक्ष्म दृष्टि उसकी संस्मरणात्मकता का परिचायक है । अपने परिच्छेदों को गतिशील बनाने केलिए इस प्रकार की भाषा की आवश्यकता है ।

भाषा की व्यंग्य दृष्टि

रेखाचित्र में व्यंग्य भाषा का व्यापक प्रयोग होता है । सामाजिक समस्याओं के विश्लेषण के दौरान इसकी बडी महत्ता है । सामाजिक अंतर्विरोधों को महादेवी ने व्यंग्य भाषा के माध्यम से प्रस्तुत किया है । बेनीपुरी की अपेक्षा महादेवी ने अपनी रचनाओं में व्यंग्य भाषा का प्रयोग किया है ।

महादेवी ने "ठकुरी बाबा" के रेखाचित्र में आधुनिक अर्थाश्रित निरर्थक कविसम्मेलनों पर कठोर प्रहार किया है -

> "सजे हाल, ऊँचे मंच, मालाविभूषित सभापति मेरी स्मृति में उदय हो आए । उनके इधर-उधर देवदूतों के समान विराजमान कविगण रूप और मूल्य दोनों में अपूर्व थे । को फर्स्ट क्लास का किराया लेकर थर्ड क्लास की शोभा बढाता हुआ आया था । कोई अपने कार्यवश पहले ही से उस नगर में उपस्थित था, पर थोडा समय वहाँ बिताने केलिए इतनी फीस चाहता था जिसमें आना जाना और आवश्यक कार्य संपन्न होने के उपरांत भी कुछ बच सके । किसी ने अपने काव्य की महार्घता बढाने केलिए ही अपनी गलेबाजी का चौगुना मूल्य निश्चित किया था ।"[1]

---

1. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.96

तथाकथित आधुनिक कवि अपने विचारों या भावों के संप्रेषण के उद्देश्य से नहीं बल्कि आर्थिक लालसा के कारण कवि सम्मेलनों में भाग लेते हैं । महादेवी का यह विचार उनकी व्यंग्य भाषा के माध्यम से यहाँ स्पष्टत: चित्रित है ।

वे आगे कहती हैं -

"मूल्य से जो महत्ता नहीं व्यक्त हो सकी वह वेशभूषा में प्रत्यक्ष थी । किसी के नए सिले सूट की अंगरेज़ियत, ताँबूलराग की स्वदेशीयता में रंजित होकर निखर उठी थी । किसी का चीनांशुक का लहराता हुआ भारतीय परिधान सिगरेट की धूमलेखाओं में उलझकर रहस्यमय हो रहा था । किसी के सिर के खड़े बाल अमामी से संभूषा के चमकीले फर्श की भ्रांति उत्पन्न करते थे । किसी की सिल्की शैंपू से धुली सीधी लटों का कृत्रिम कुंचन विधाता पर मनुष्य की विजय की घोषणा करता ।"[1]

महादेवी की स्पष्ट धारणा है कि आजकल का कवि सम्मेलन अपने कार्य को चरितार्थ नहीं करता है । आजकल जो हो रहा है उसमें मात्र दिखावा ही है । उसमें भाग लेनेवाले "कवियों" का उद्देश्य, अपनी रचनाओं के माध्यम से नहीं बल्कि अपनी वेशभूषा से श्रोताओं को प्रभावित करना है । महादेवी का उपर्युक्त विवरण भाषा की व्यंग्यात्मकता का सशक्त उदाहरण है । अपने रेखाचित्रों की रूप-सौष्ठवता के प्रति महादेवी और बेनीपुरी सजग ही थे । उसके रूप में कई प्रकार के प्रयोग करके रेखाचित्र के शिल्प को नया आयाम प्रदान करने का प्रयास दोनों रेखाचित्रकारों ने किया है । विषय विपुलता और विषय विस्तार के अनुकूल

।. महादेवी - स्मृति की रेखाएँ, पृ.97

शिल्पविन्यास में परिवर्तन लाने की कोशिश उनमें बलवत् रही है ।

चित्रों, विवरणों, स्मृतियों और संवादों से भरा रेखाचित्र का शिल्प कई दिशाओं का आयाम निरंतर देता चलता है । शिल्प की इस कृत्रिम भटकन के बाद भी उसके शिल्प की केंद्रीभूत सत्ता है जो इस की प्रासंगिकता का सशक्त पक्ष है । शिल्प की एकाग्रता के साथ साथ आंतरिक एवं बाह्य विस्फोट भी रेखाचित्र के शिल्प की विशेषता है । यह प्रवृत्ति महादेवी और बेनीपुरी में सर्वत्र उपलब्ध है ।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

उपसंहार

उपसंहार

आधुनिक युग गद्य का युग है । इस समय खंड में गद्य का विस्फोटनात्मक विकास हुआ । गद्य का क्षेत्र अतिविपुल है । गद्य का संबंध हमारे वास्तविक जीवन से है । इसलिए कविता की अपेक्षा गद्य की संभावनाएँ अधिक हैं । गद्य के विकास में पाठकीय संवेदना का महत्व भी अधिक है । आधुनिक युग में पाठकीय संवेदना गद्य की ओर उन्मुख हो गयी है । अभिव्यक्ति में संभव भिन्नता, सरलता और सटीकता, बदलते परिवेश का समावेश, विषय-व्यापकता, भाषा की जीवन स्पर्शिता आदि इसके कारण हो सकते हैं । जो भी हो गद्य वर्तमानत्व का प्रतीक हो गया है । गद्य का जनसंपर्क असामान्य है । गद्य हमारी सामान्यताओं की अभिव्यक्ति का माध्यम है । हमारे जीवन की बहुत सी बारीकियों को सरल ढंग से या संश्लिष्ट ढंग से गद्य अभिव्यक्त कर सकता है । इस कारण से गद्य में अनेक प्रकार के प्रयोग हुए । गद्य के अभूतपूर्व विकास ने विधाओं के स्वरूप, उनकी संरचना को काफी हद तक परिवर्तित किया है । गद्य में नई विधाओं के बीजांकुरण का यही कारण है । इसके साथ विधाओं की पारस्परिकता ने उनमें नएपन का पल्लवन भी किया है । रेखाचित्र के विकासगत अंकुरण में यह बात महसूस की जा सकती है । उसने अपना रास्ता बनाया, पर पारस्परिक संबंध का एक समान्तर पथ भी तैयार किया है ।

रेखाचित्र की विकास-यात्रा के प्रथम दौर में संस्मरण, ललित निबंध, जीवनी, आत्मकथा, रिपोर्ताज, डायरी, फीचर लेखन आदि अनेक विधाओं का सम्मिलित रूप ही उपलब्ध होता है । इसलिए इन विधाओं के साथ रेखाचित्र की निकटता स्वाभाविक है । इन विधाओं का समन्वय रेखाचित्र केलिए कभी-कभी अनिवार्य भी हो गया है ।

रेखाचित्र एक व्यक्तिकेंद्रित साहित्यिक विधा है । पर इसकी व्यक्ति केन्द्रित प्रवृत्ति संरचनात्मक प्रवृत्ति मात्र है । हर रेखाचित्र के केंद्र में एक व्यक्ति रहता है । हिन्दी रेखाचित्र के विकास इसकेलिए कुछ अपवाद मिल सकते हैं । लेकिन मूल रूप से रेखाचित्र व्यक्तिकेंद्रित है । व्यक्ति के चयन में लेखक के साथ उसका संबंध, उसके व्यक्तित्व के प्रति आकर्षण या कुछ ऐसी विशिष्टताएं जिसकी शब्दबद्ध होने की अनिवार्यता आदि बातें हमेशा कार्य करती हैं ।

व्यक्ति के परिवेश में जो कालगत परिवर्तन होता है । रेखाचित्र में उसकी झलक उपलब्ध होती है । अर्थात् रेखाचित्रकार का विषय सदैव व्यक्ति चित्रण ही रहता है और जो परिवर्तन रेखाचित्रों में महसूस होता है वह व्यक्ति के परिवेश मात्र का है ।

प्रश्न यह उठता हैकि क्या व्यक्ति चित्रण के साथ व्यक्ति के परिवेश का भी चित्रण अनिवार्य है । यह बिलकुल अनिवार्य नहीं है । फिर भी व्यक्ति के अंकित व्यक्तित्व तथा तद्वारा प्रस्फुटित उसकी विचार धाराओं का अनुशीलन करने पर सामयिक बोध का

एहसास होना ज़रूरी है । यह भी एक प्रकार से ऐतिहासिक पहलुओं की सूक्ष्म अभिव्यक्ति है । व्यक्तिकेंद्रीकरण की प्रवृत्ति में निहित लेखकीय दृष्टि प्राय: सामाजिक होती है । यह इस विधा की सामाजिक प्रासंगिकता केलिए सहायक और अनिवार्य है । लेकिन रेखाचित्र की संरचनात्मकता का एक अन्य पक्ष उसकी आंतरिक सृजन संस्कार है, वह उसकी चित्रात्मकता है । व्यक्ति के व्यक्तित्व के रूपायन से लेकर उसकी कुल भाषिक शैली में चित्रात्मकता कायम रहती है । अन्य विधाओं के साथ के संबंध के कारण कभी कभी इस रचनात्मक प्रवृत्ति का उल्लंघन भी होता है । कभी संस्मरण की विवरणप्रियता या स्मृति-संकलन, कभी ललित निबंध की लालित्य योजना, कभी निबंध की वैचारिकता आदि मिल कर रेखाचित्र की आंतरिक सृजनशीलता में निहित चित्रात्मकता को नष्ट कर देती है । परंतु वह अक्षत नहीं है । चित्र दृष्टि का समायोजन रेखाचित्र की अपनी विशेषता है ।

हिन्दी गद्य के विकास के साथ-साथ चित्रात्मक प्रवृत्ति में निहित अलंकरण प्रियता नष्ट होती गयी और वह अभिव्यक्ति के तौर तरीके के रूप में विकसित हुई । जिस युग रेखाचित्र के अलग अस्तित्व की चर्चा नहीं थी उस युग में भी विभिन्न प्रकार की गद्य रचनाओं में खास करके ललित निबंध शैली में लिखे गए निबंधों या व्यक्तिव्यंजक निबंधों में चित्रात्मक प्रवृत्ति थी । इसको अपने साहित्यिक दृष्टिकोण के मूल में संस्थित करते हुए परवर्ती युग में कुछ गद्यकारों ने एक अलग विधा को रूपायित किया जिसके अलग-अलग नाम यद्यपि साहित्य में विद्यमान हैं फिर भी रेखाचित्र का अस्तित्व मुखर होने लगा । हिन्दी गद्य में रेखाचित्र का इतिहास पुराना नहीं है । लेकिन सीमित समय के अंतर्गत कई साहित्यकारों ने इस विधा को आगे बढाया । हिन्दी के सभी रचनाकारों ने,

जिनमें कवि हैं, नाटककार हैं, आलोचक हैं, रेखाचित्र को अपनाया है । उनके रेखाचित्रों के अंतर्गत सभी संदर्भों के लोग अंकित हुए हैं । उन लोगों के साथ मुखर होनेवाला जीवन परिवेश, उस परिवेश की बहुत सारी बातें हमें विभिन्न रेखाचित्रों में से प्राप्त होती हैं । महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के लेखनकाल तक आते-आते रेखाचित्र ने अपनी क्षमता दर्शाना शुरू की । उसने यह भी साबित किया कि वह मात्र एक व्यक्तिव्यंजक गद्य की ललित कलात्मकता नहीं है । महादेवी और बेनीपुरी के रेखाचित्र इस तथ्य को साबित करते हैं ।

महादेवी वर्मा का व्यक्तित्व विशिष्ट है । उसका एक मुखर पक्ष और अप्रकट पक्ष है । मुखर पक्षों के अंतर्गत उनकी तमाम सामाजिक क्रियाकलापों का इतिहास है । उसमें से हमें एक जीवंत महिला का रूप मिलता है । हर किसी प्रकार की गलतियों पर चोट करनेवाली, नारी की अबलता से मुक्त स्वतंत्र नारी व्यक्तित्व महादेवी वर्मा का रहा है। उनके रेखाचित्रों में इसी मुखर पक्ष का प्रतिफलन भली-भाँति हुआ है । बेनीपुरी के व्यक्तित्व में आद्यंत मुखर पक्ष ही विद्यमान है । साहित्य को अपनी सृजन-दृष्टि का माध्यम बनाने के साथ-साथ उन्होंने समाज सेवा को भी चुना । इसलिए कई प्रकार के कार्य कलापों से युक्त उनका जीवन बहुरंगी और विविधायामी है । वे कलाकार के औन्नत्य को भी महत्ता देते हैं, साथ-ही-साथ प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक स्थिति पर भी जोर देते हैं ।

महादेवी के साहित्य के मूल में मानवतावादी दृष्टिकोण है । उनके गद्यसाहित्य के प्राय: हर संदर्भ में अन्याय के प्रति असहिष्णुता का प्रतिफलन है । उनका रेखाचित्र साहित्य इस बात का अनुपम प्रमाण है । यह सही है कि उनकी रचनाओं का सबसे प्रमुख विषय नारी समस्या है । लेकिन नारी समस्या भी सामाजिक अन्याय प्रसूत है । और उस अन्याय के विरुद्ध ही वे आवाज़ उठाती हैं । न कि नारी समस्या के विरुद्ध । समाज तथा उसकी समस्याओं के प्रति वे हमेशा जागरूक हैं । यह जागरूकता समाज की हर समस्या के प्रति वे दिखाती हैं । इसी कारण दलित नारी वर्ग के साथ पुरुष वर्ग का भी चित्र उन्होंने अंकित किया है ।

महादेवी ने प्रत्येक व्यक्ति को मानवतावादी दृष्टिकोण से देखा है । समस्या विश्लेषण में भी उनका मापदंड मानवता ही है । "पथ के साथी" में चित्रित हर विशिष्ट व्यक्ति को उन्होंने इसलिए महान कहा कि उनमें उन्होंने महामानवता देखी है । "मेरा परिवार" में अपने पालतू पशु-पक्षियों के चित्रांकन में भी उन्होंने मानवता वाद को मुखरित किया है ।

बेनीपुरी अनाम व्यक्तियों के रेखाचित्रों के अनाम रचनाकार हैं । बिहार के निरक्षर गरीब किसानों और श्रमिकों के जीवन का नंगा नक्शा उनके साहित्य में उपलब्ध है । उनके प्रति बेनीपुरी का गहरा लगाव था । उन गरीब किसानों के प्रति होनेवाले अत्याचारों और उन अत्याचारों के प्रति उनकी मौन प्रतिक्रिया, किसानी संस्कृति में पलने के कारण बेनीपुरी बहुत जल्द महसूस कर सकते थे । ज्यादातर उन मौन प्रतिक्रियाओं को ही बेनीपुरी ने रेखाचित्र में शब्दबद्ध किया है । इसलिए प्रेमचंद के बाद, दलितों के सबसे बडे वक्ता के रूप में बेनीपुरी माने जाते हैं ।

बेनीपुरी मनुष्य प्रेमी व्यक्ति और साहित्यकार के रूप में मशहूर हुए और अपने विविध रंगी रेखाचित्रों में मानवीयता के स्वर को उन्होंने गुंजायमान किया है । रेखाचित्र की विधागत संभावनाओं के प्रति वे उतने जागरूक नहीं थे जितने आस पडोस के जीवन के प्रति । उनके स्वभाव में निहित फक्कडपन और उनके साहित्य में निहित जीवन सापेक्ष दृष्टिकोण ने उनके रेखाचित्रों को एक जीवंत अनुभव बनाया ।

महादेवी और बेनीपुरी की मानवीय दृष्टि की विशेषता यही है कि वे शाब्दिक नहीं है, इसलिए वायवीय भी नहीं है । सांकल्पिक संसार से उतरकर यथार्थ की ठोस भूमि में कदम रखे हुए दो प्रामाणिक रचनाकारों का जुझारू व्यक्तित्व ही उनमें हमें प्राप्त होता है । कोई भी साहित्यिक विधा अपना अस्तित्व तभी बना पाती है जब अपनी रचनात्मक सौंदर्य दृष्टि से संपन्न होती है और सीमित संदर्भ में ही सही सामाजिक प्रासंगिकता को आत्मसात करती है । रेखाचित्र ने इन दोनों प्रवृत्तियों का आकलन किया । महादेवी और बेनीपुरी ने इसका क्षेत्र-विस्तार बडी गंभीरता के साथ किया है। इसलिए जब कोई यह कहता है कि "महादेवी के रेखाचित्र" या "बेनीपुरी के रेखाचित्र" तो हमारे मानस-पटल पर एक युग का मंच अनावृत होता है । रूढियों और अंधविश्वासों तथा आर्थिक विपन्नताओं में ग्रस्त मनुष्यों की आकांक्षा भरी दृष्टि उनके रेखाचित्रों को आज भी प्रासंगिक बनाती है । अपनेरेखाचित्रों में ऐसे दृश्य दोनों ने सहानुभूतिवश तैयार नहीं किया है । दलितों और दमितों की आकांक्षा भरी दृष्टि को चित्रात्मक बनाते समय इन रेखाचित्रकारों में निहित ऐतिहासिक

दृष्टि का परिचय हमें मिलता है । इतिहास की अँधेरी गलियों की सही पहचान के कारण हमारे सामाजिक अंतर्विधान की असंगति से वे खूबहू परिचित रहे हैं । अत: उनका एक व्यक्ति चित्र अपने आप विकसित होकर एक सामाजिक प्रसंग बन जाता है जो हमारे इतिहास की बहुत सारी विडंबनाओं को दर्शाने में समर्थ होता है । संभवत: महादेवी वर्मा और रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्रों की प्रामाणिकता का यही कारण है । उनके रेखाचित्र अपनी चित्रात्मकता के कारण आज जीवंत नहीं है बल्कि इतिहास दृष्टि को उजागर करने के कारण ही जीवंत हैं । यही उन दोनों की समकालीन प्रासंगिकता है।

❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀❀

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ - सूची

क. महादेवी वर्मा के रेखाचित्र संग्रह

1. अतीत के चलचित्र — महादेवी वर्मा
12 वाँ संस्करण 1972
भारती भंडार, इलाहाबाद ।

2. पथ के साथी — महादेवी वर्मा
प्रथम संस्करण 1956
भारती भंडार, इलाहाबाद ।

3. मेरा परिवार — महादेवी वर्मा
छात्र संस्करण 1984
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद ।

4. स्मृति की रेखाएं — महादेवी वर्मा
14 वाँ संस्करण 1978
भारती भंडार, इलाहाबाद ।

ख. रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्र संग्रह

1. गेहूँ और गुलाब — रामवृक्ष बेनीपुरी
संशोधित संस्करण 1967
अनुपम प्रकाशन, पटना

2. माटी की मूरतें — रामवृक्ष बेनीपुरी
संस्करण 1976
प्रकाशन केंद्र, लखनऊ ।

3.	मील के पत्थर	रामवृक्ष बेनीपुरी दूसरा संस्करण 1961 सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली ।
4.	लाल तारा	रामवृक्ष बेनीपुरी 1938, श्री अजन्ता प्रेस, पटना ।

ग. <u>सृजनात्मक ग्रंथ</u>

1.	अम्बपाली	रामवृक्ष बेनीपुरी छात्र संस्करण 1972, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ ।
2.	आधुनिक कवि - 1	महादेवी वर्मा छठवाँ प्रकाशन 1956 हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
3.	उभरी : गहरी रेखाएँ	संपादक प्रथम संस्करण 1972, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ
4.	क्षणदा	महादेवी वर्मा प्रथम संस्करण 1956 भारती भंडार, इलाहाबाद ।
5.	जंजीरें और दीवारें	रामवृक्ष बेनीपुरी 1966 संस्करण बेनीपुरी प्रकाशन, मुजफ्फरपुर ।

6. जयप्रकाश — रामवृक्ष बेनीपुरी
संशोधित संस्करण 1967,
बेनीपुरी प्रकाशन, मुजफ्फरपुर

7. दस तसवीरें — जगदीशचंद्र माथुर
द्वितीय संस्करण 1960
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ।

8. दीपशिखा — महादेवी वर्मा
छठा संस्करण 1962
भारती भंडार, इलाहाबाद ।

9. निराला रचनावली — संपादक नंदकिशोर नवल
प्रथम संस्करण 1983, राजकमल प्रकाशन,
नई दिल्ली ।

10. नीरजा — महादेवी वर्मा
द्वितीय संस्करण 1960
भारती भंडार, इलाहाबाद ।

11. नीहार — महादेवी वर्मा
षष्ठ संस्करण 1962
साहित्य भवन प्रा॰ लि॰ इलाहाबाद

12. नेत्रदान — रामवृक्ष बेनीपुरी
संशोधित संस्करण 1969
अनुपम प्रकाशन, पटना ।

13. पुरानी स्मृतियाँ — प्रकाशचंद्र गुप्त,
1947, इंडिया पब्लिशर्स, प्रयाग ।

14. निराला — प्रकाशचंद्र गुप्त
1957, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ।

15. भट्ट निबंधमाला (दूसरा भाग) संपादक श्री. धनंजय भट्ट "सरल"
प्रथम संस्करण 1947
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

16. भारतेन्दु हरिश्चंद्र के श्रेष्ठ निबंध -
संपादक कृष्णदत्त पालीवाल
1987, सचिन प्रकाशन, नई दिल्ली ।

17. मंटो मेरा दुश्मन — उपेन्द्रनाथ अश्क
प्रथम संस्करण 1956,
नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद ।

18. मशाल — रामवृक्ष बेनीपुरी
द्वितीय संस्करण 1961,
किताब महल इलाहाबाद

19. महादेवी की प्रतिनिधि गद्य रचनाएँ -
संपादक रामजी पांडेय
द्वितीय संस्करण 1989,
भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

20. मेरे प्रिय निबंध — महादेवी वर्मा
तृतीय संस्करण 1991
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

21. मेरे प्रिय संभाषण — महादेवी वर्मा
द्वितीय संस्करण 1986
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

22. मेरे प्रिय संस्मरण — महादेवी वर्मा
चतुर्थ संस्करण 1983
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

23. यामा — महादेवी वर्मा
चतुर्थ संस्करण 1961
भारती भंडार, इलाहाबाद ।

24. ये और वे — जैनेन्द्र कुमार, 1979
पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली ।

25. रश्मि — महादेवी वर्मा
षष्ठ संस्करण 1962
साहित्य भवन (प्रा॰) लि॰ इलाहाबाद ।

26. रेखाएँ और संस्मरण — क्षेमचंद्र सुमन
प्रथम संस्करण 1975, वाणी प्रकाशन,
नई दिल्ली ।

27. रेखाएँ और रेखाएँ — सं॰ सुधाकर पांडेय तथा विश्वनाथ तिवारी
दूसरा संस्करण 1971, अनुराग
प्रकाशन, वाराणसी ।

28. रेखाएं और चित्र — उपेन्द्रनाथ अश्क
प्रथम संस्करण 1955,
नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद ।

29. रेखाचित्र — प्रकाशचंद्र गुप्त
1940 प्रकाशन गृह, प्रयाग

30. रेखाचित्र — बनारसीदास चतुर्वेदी
1963, ज्ञानपीठ प्रकाशन, काशी ।

31. विजेता — रामवृक्ष बेनीपुरी
संस्करण 1970
अनुपम प्रकाशन, पटना ।

32. शेखर : एक जीवनी (भाग - 2) - अज्ञेय
1980 संस्करण,
सरस्वती प्रेस, दिल्ली ।

33. शृंखला की कड़ियाँ — महादेवी वर्मा
1950 भारती भंडार, इलाहाबाद ।

34. संकल्पिता — महादेवी वर्मा
प्रथम संस्करण 1987
नेशनल पब्लिशिंग हाउ, नई दिल्ली ।

35. संघमित्र और सिंहल विजय - रामवृक्ष बेनीपुरी
संशोधित संस्करण 1968,
बेनीपुरी प्रकाशन, मुजफ्फरपुर

36. संभाषण — महादेवी वर्मा
प्रथम संस्करण 1975
साहित्य भवन (प्रा॰) लि॰ इलाहाबाद ।

37. संस्मरण — बनारसी दास चतुर्वेदी
दूसरा संस्करण 1958
भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।

38. संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ - रामधारी सिंह दिनकर
प्रथम संस्करण 1987
पेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

39. साहित्यगीत — महादेवी वर्मा
पंचम संस्करण 1960
भारती भंडार, इलाहाबाद

40. सप्तपर्णा — महादेवी वर्मा
तृतीय संस्करण 1982
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

41. साहस के पुतले — रामवृक्ष बेनीपुरी
द्वितीय संस्करण 1968
बेनीपुरी प्रकाशन, मुजफ्फरपुर

42. साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध - महादेवी वर्मा
1962, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद ।

43. स्मृति कण — सेठ गोविंददास, 1959
भारतीय विश्व प्रकाशन, दिल्ली ।

44. स्मृति लेखा — अज्ञेय
प्रथम संस्करण 1982
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

घ. आलोचनात्मक ग्रंथ

1. आज का हिन्दी साहित्य - प्रकाशचंद्र गुप्त
1960, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ।

2. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि : महादेवी वर्मा -
गंगाप्रसाद पांडेय
प्रथम संस्करण 1968, राजपाल
एण्ड सन्स, दिल्ली ।

3. काव्यशास्त्र डॉ. भागीरथ मिश्र
द्वितीय संस्करण 1963
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

4. प्रतापनारायण मिश्र की हिन्दी गद्य को देन -
डॉ. शांतिप्रकाश वर्मा
प्रथम संस्करण 1970,
विश्वसाहित्य भवन, दिल्ली-6

5. भारतीय साहित्य कोश - संपादक नगेंद्र
प्रथम संस्करण 1981
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

6. महादेवी अभिनंदन ग्रंथ - संपादक देवदत्त शास्त्री
1964, भारती परिषद्, प्रयाग

7. महादेवी की रहस्य साधना - विश्वंभर मानव
छठा संस्करण 1969,
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

8. महादेवी नया मूल्यांकन - गणपतिचंद्र गुप्त
प्रथम संस्करण 1969
भारतेंदु भवन, शिमला ।

9. महादेवी वर्मा शचीरानी गुर्टू (संपादिका)
तीसरा संस्करण 1963, आत्माराम
एंड संस, दिल्ली ।

10. महादेवी साहित्य एक नया दृष्टिकोण - पद्मसिंह चौधरी
1974, अपोलो प्रकाशन, जयपुर ।

11. महादेवी संस्मरण ग्रंथ - संपादक सुमित्रानंदन पंत और जोशी
प्रथम संस्करण 1967

12. महीयसी महादेवी गंगाप्रसाद पाडेय
1969, लोकभारती प्रकाशन,
इलाहाबाद

13. रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य -
डॉ. गजानन चौहान
प्रथम संस्करण 1984, साहित्य भवन
(प्र.) लि., इलाहाबाद ।

14. हिन्दी और मराठी के रेखाचित्रों का तुलनात्मक अध्ययन -
सुरेश कुमार
प्रथम संस्करण 1985
अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर

15. हिन्दी का गद्य साहित्य - रामचंद्र तिवारी
द्वितीय संस्करण 1968,
विश्व विद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

16. हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास - डॉ॰भागीरथ मिश्र
तृतीय संस्करण 1958
लखनऊ विश्वविद्यालय प्रकाशन,
लखनऊ ।

17. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास -
डॉ॰ रामकुमार वर्मा
छठवाँ संस्करण 1971,
रामनारायणलाल बेनीमाधव,
इलाहाबाद ।

18. हिन्दी साहित्य का इतिहास - रामचंद्र शुक्ल
चौदहवाँ संस्करण 1952,
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

19. हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (अष्टम भाग)
डॉ॰विनयमोहन शर्मा,
प्रथम संस्करण 1972
नागरीप्रचारिणी सभा,वाराणसी ।

20. हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास -
डॉ.कृष्णलाल हंस
प्रथम संस्करण 1974,
प्रकाशन ग्रन्थम, कानपुर ।

21. हिन्दी साहित्य कोश (भाग - 1) - धीरेन्द्र वर्मा (सं.)
द्वितीय संस्करण 1963,
ज्ञान मंडल लिमिटेड, वाराणसी।

ङ पत्र-पत्रिकाएं

1. आजकल नवंबर 1988
2. गगनांचल अंक 3, 1987
3. दस्तावेज - 39 अप्रैल 1988
4. नई धारा - बेनीपुरी स्मृति अंक - अप्रैल-अगस्त 1969
5. राष्ट्रभाषा संदेश फरवरी, 1994
6. सम्मेलन पत्रिका - कला अंक शकाब्द 1880

7. सरस्वती हीरक जयंती विशेषांक - दिसंबर 1961
8. साप्ताहिक हिंदुस्तान - सितंबर 1987
9. हंस रेखाचित्र विशेषांक मार्च 1939
10. हंस फरवरी 1942

****